



॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
२२

महाकविदण्डिविरचितं

दशकुमारचरितम्

(पूर्वपीठिकामात्रम्)

'चन्द्रिका'-'कमला'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्याद्वयोपेतम्



व्याख्याकारः—
डॉ० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी
अध्यापकचरप्राध्यापकः, पुराणेतिहास-भूगोल-संस्कृति-विभागाध्यक्षश्च
वाराणसेय श्रीसम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

२२

महाकविदण्डिविरचितं

दशकुमारचरितम्

(पूर्वपीठिकामात्रम्)

'चन्द्रिका'-'विमला'-संस्कृत-हिन्दीव्याख्याद्वयोपेतम्



व्याख्याकारः—

डॉ० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी

लब्धावकाशप्राध्यापकः, पुराणेतिहास-भूगोल-संस्कृति-विभागाध्यक्षश्च

वाराणसेय श्रीसम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वा रा ण सी.

प्रकाशक—
चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के० ३७/११७, गोपालमन्दिर लेन
पोस्ट बाक्स नं० १२९
वाराणसी २२१००१

तृतीय संस्करण १९८२
मूल्य ६-००

अन्य प्राप्तिस्थान—
चौखम्बा विद्याभवन
(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे),
पोस्ट बाक्स नं० ६९
वाराणसी २२१००१

मुद्रक—
श्रीजी मुद्रणालय
वाराणसी

प्रस्तावना

संस्कृतभाषा का काव्यसाहित्य विषय एवं रचनाशैली के विकास की दृष्टि से तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। पहली श्रेणी के काव्य रामायण तथा महाभारत हैं। दूसरी श्रेणी का प्रतिनिधित्व कालिदास की कृतियाँ करती हैं और तीसरी श्रेणी में कालिदास के बाद की रचनाएँ आती हैं।

रामायण एक आदर्श कोटि का आदि महाकाव्य है, जिसमें धर्म, कर्म, समाज, राजनीति, संस्कृति आदि विषयों का एक साथ समावेश है। इसी प्रकार महाभारत भी भारतीय ज्ञान-विज्ञान का ऐतिहासिक सर्वाङ्गपूर्ण महाकाव्य ही है, जिसके सम्बन्ध में स्वयं ग्रन्थकार ने ही अनुशासन पर्व में कहा है कि धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के सम्बन्ध में जो यहाँ विवेचन हुआ है, वही अन्यत्र भी वर्णित है। जिसका विवेचन यहाँ नहीं हो सका है, उसका वर्णन अन्यत्र भी उपलब्ध नहीं है—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ॥ (६२।५३)

कविवर कालिदास की कृतियों का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है। परवर्ती काव्यप्रणेताओं ने प्रयास करने पर भी इनका काव्यकौशल न अपना पाया है। कालिदास की साहित्यिक योग्यता तथा श्रेष्ठता भावों के अभिव्यक्तीकरण में है। इनका भावविधान अत्यन्त संयत, मौलिक, सामयिक एवं समाकर्षक है।

किन्तु कालिदास के अनन्तर काव्यकारों में आत्माभिव्यञ्जन एवं रचनाशिल्प की प्रबलता प्रतीत होती है। इस श्रेणी के आरम्भिक कवियों की कृतियों में भाव और भाषा का एक जैसा समावेश है। यद्यपि कालिदास कलापक्ष का निर्माण कर चुके थे, पर इनके बाद के काव्यकारों ने रचनात्मक शक्ति तथा आलङ्कारिक सौन्दर्य का समावेश जिस रूप से अपनी रचनाओं में किया है, वैसा कालिदास में नहीं। इस श्रेणी के कवियों ने तो काव्य के कलापक्ष को इतना महत्त्व दिया है कि भावपक्ष दब-सा गया है। इस श्रेणी के काव्यग्रन्थों में भावविन्यास के स्थान पर भावुकता की प्रधानता, स्वाभाविक प्रवाह की जगह कल्पना की उड़ान तथा अनुभूति की जगह पाण्डित्यप्रदर्शन की भावना अधिक है।

काव्य का विषय बहुत व्यापक है। एक ही काव्यविषय के अन्तर्गत काव्य, महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, नीतिकाव्य, भक्तिकाव्य, ऐतिहासिक काव्य, चम्पूकाव्य, कथाकाव्य, सुभाषितकाव्य, गद्यकाव्य नाटक आदि अनेक विषयों का समावेश हो जाता है।

काव्य का प्रयोजन

प्रयोजन के बिना किसी भी कार्य में प्रवृत्ति नहीं होती है। अतः साहित्य-ग्रन्थों में काव्य के अनेक प्रयोजन कहे गये हैं। कुछ लोगों की धारणा है कि काव्य प्रायः शृङ्गारात्मक होने के कारण विषयी लोगों के मनोरञ्जन का साधन-मात्र है, किन्तु यह ठीक नहीं, क्योंकि काव्य के अध्ययन से धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, दार्शनिक एवं व्यावहारिक ज्ञान की भी शिक्षा होती है। सत्काव्य के अनुशीलन से सभी मनोभिलाष पूर्ण हो सकते हैं। भामह ने अपने काव्यालङ्कार में धर्म, अर्थ और काम के अतिरिक्त सत्काव्य को मोक्ष का साधन तथा विभिन्न कलाओं के ज्ञान का कारण भी माना है—

धर्मार्थकाममोक्षाणां वैचक्षण्यं कलासु च।
प्रीतिं करोति कीर्तिं च साधुकाव्यनिषेवणम् ॥ (का. १।२)

आत्मज्ञान के लिए वेदों में, धर्म के लिए धर्मशास्त्रों में और नीति के लिए नीतिग्रन्थों में प्रचुर उपदेश हैं, किन्तु उनका मार्ग अत्यन्त गूढ़, दुर्गम एवं दुर्बोध होने के कारण उनमें प्रवेश पाना दुष्प्राप्य है। वेद में प्रभुसमित शब्द हैं, वे राजाज्ञा के समान आत्मज्ञान का उपदेश करते हैं। और धर्मशास्त्र में सुहृत्संमित शब्द हैं, जो मित्र की तरह हित एवं अहित को समझाते हैं, किन्तु जो लोग उनके उपदेशों में रुचि नहीं रखते, ऐसे लोगों को उनके द्वारा शिक्षा पाना कठिन है। अतः उनके निमित्त काव्य द्वारा ही सदुपदेश उपयुक्त हो सकता है, क्योंकि काव्य में कान्तासंमित शब्द हैं। जिस प्रकार कामिनी अपने प्रियतम को हावभाव, कटाक्ष आदि की मधुरता से अनुरक्त करके अपने अनुकूल कर लेती है, उसी प्रकार सत्काव्य भी वेदशास्त्रों से विमुख जनों को अपने मधुर शृङ्गारादि रसों की सरसता से अपने में अनुरक्त करके सदुपदेश देता है। काव्य द्वारा उपदेश रुचिपूर्वक सेवन किया जा सकता है। अतः निर्विवाद सिद्ध है कि काव्य का अध्ययन मनोरञ्जन मात्र नहीं, किन्तु अत्युत्तम प्रयोजनीय सहज और सुख-साध्य होने के कारण अन्य मार्गों से विलक्षण है।

अनादि काल से इस भूमण्डल पर असंख्य राजा-महाराजा एवं यशस्वी सम्राट हो गये हैं, किन्तु उनमें से जिनके विषय में कुछ नहीं लिखा गया है, उनका कुछ भी स्मृतिचिह्न अवशेष नहीं है, किन्तु जिनका चरित्र काव्यों में अङ्कित है उन्हीं का सुयश चिरस्थायी रह गया है। विल्हण ने ठीक ही कहा कि जिस राजा के दरबार में बड़े बड़े कविराज नहीं रहते उनके यश का प्रसार नहीं होता—

महीपतेः सन्ति न यस्य पार्श्वे कवीश्वरास्तस्य कुतो यशांसि ।
भूपाः कियन्तो न बभूवुरुर्व्यां नामापि जानाति न कोऽपि तेषाम् ॥ (१।२६)

इसीलिए मम्मटाचार्य ने काव्य का प्रयोजन सुयश का लाभ, अर्थ की प्राप्ति, लोकव्यवहार का ज्ञान, दुःख की निवृत्ति, ब्रह्मानन्द के समान सुख की उपलब्धि और कान्तासम्मित सदुपदेश का लाभ बतलाया है—

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये ।
सद्यः परनिवृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ॥ (का० प्र० १।१)

गद्यकाव्य की परम्परा

प्रमुख रूप से काव्य के तीन भेद माने गये हैं—पद्यकाव्य, गद्यकाव्य तथा (चम्पूमिश्रितकाव्य)। संस्कृतसाहित्य में गद्य की परम्परा वैदिक संहिताओं के समान प्राचीन कही जाती है। पद्य की अपेक्षा गद्य को संस्कृतसाहित्य में अधिक महत्त्व दिया जाता है, क्योंकि गद्य में लेखक को अपने भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण छूट है, किन्तु पद्य में छन्द, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ आदि का बन्धन रहने से लेखक को उतनी स्वतन्त्रता नहीं रहती है। इसलिए गद्य के सम्बन्ध में यह उक्ति है—"गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति"। गद्य कवियों के लिए एक कसौटी है, जिसमें जितना प्रबल वैदुष्य रहेगा, वह कवि उतना ही उत्तम गद्य लिख सकता है।

वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, निरुक्त, महाभारत, पुराण, महाभाष्य प्रभृति ग्रन्थों से संस्कृतभाषा के गद्य को संवर्द्धनशील परम्परा प्राप्त हुई है। आगे चलकर टीकाओं, कथाकाव्यों, आख्यायिका ग्रन्थों तथा चम्पू, नाटक आदि में भी गद्य का प्रौढ़ रूप सामने आया है। यहाँ तक कि तत्त्वज्ञानसम्बन्धी दार्शनिक ग्रन्थों में, ज्योतिषशास्त्रों में तथा व्याकरण के ग्रन्थों में भी गद्य को फूलने-फलने और अपना विकास करने की पूरी सुविधाएँ प्राप्त रही हैं।

ऐतिहासिक गवेषणाओं से प्रतीत होता है कि भारतीय साहित्य के प्राचीनतम अंश वैदिक वाङ्मय में गाथाओं का अस्तित्व बड़ा ही प्रभावोत्पादक एवं महत्त्वपूर्ण

रहा है। वैदिक साहित्य के क्षेत्र में गाथा, आख्यान, इतिहास एवं पुराणों का स्पष्ट उल्लेख है, जो धार्मिक संस्कारों या यज्ञ के अवसरों पर सुनाये जाते थे। इनमें गद्य के साथ पद्यों का भी मिश्रण है।

गद्यभाषा की प्राचीनतम गाथा एवं आख्यायिकाएँ आज हमें उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी पुराने ग्रन्थ इस सम्बन्ध में हमें पर्याप्त विवरण कर देते हैं। सुप्रसिद्ध वैयाकरण वार्तिककार कात्यायन (४०० ई० पू०) हमें आख्यायिका से सुपरिचित जान पड़ते हैं। दूसरे महावैयाकरण महाभाष्यकार भगवान् पतञ्जलि (२०० ई० पू०) के सम्बन्ध में ऐसा विश्वास है कि वे वासवदत्ता, सुमनोत्तरा, और भैमरथी नामक आख्यायिकाओं को अपने हाथों से उलट-पुलट चुके थे। उनका पाणिनीय सूत्र का महाभाष्य तो गद्य की समृद्धि का पूर्ण परिचायक है। रुद्रदामन् का गिरनार शिलालेख (१५० ई०), गुप्तकालीन शिलालेख और विभिन्न स्थानों से उपलब्ध सैकड़ों अभिलेखों को देखकर गद्य के प्राचीन अस्तित्व का सहज में ही अन्दाज लगाया जा सकता है। कथाकार बाणभट्ट ने एक सिद्ध-हस्त गद्यकार भट्टारक का नाम उद्धृत किया है। इसी प्रकार जल्हण के कथनानुसार वररुचिकृत चारुमती, रोमिल्ल सौमिल्लकृत शूद्रककथा, तिलकमञ्जरीकार धनपाल के कथनानुसार श्रीपालिकृत तरङ्गवती कथा तथा आन्ध्रभृत्य सातवाहन राजाओं के समय में लिखे गये शातकर्णीहरण, नमावन्ती कथा आदि ग्रन्थ भी प्राचीन गद्य की परम्परा का समर्थन करते हैं।

इन कथाकृतियों के कारण ही दण्डी, सुबन्धु, बाणभट्ट जैसे अद्भुत गद्यकारों की प्रतिभा को हम पा सके हैं। दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट ये तीनों ही संस्कृत के गद्यवैभव के स्वामी हैं। फिर भी यह स्मरणीय है कि इनके पूर्व भी संस्कृत के गद्यलेखन की परम्परा अवश्य विद्यमान थी।

दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में शास्त्रीय गद्य का अवतरण करनेवाले तीन विद्वानों शबरस्वामी (४०० ई०), स्वामी शङ्कराचार्य (७०० ई०) तथा जयन्तभट्ट (९०० ई०) के नाम उल्लेखनीय हैं। प्रौढ़ मीमांसक शबरस्वामी का 'कर्म-मीमांसाभाष्य', स्वामी शङ्कराचार्यकृत ब्रह्मसूत्र, गीता एवं उपनिषदों का भाष्य, सुप्रसिद्ध नैयायिक जयन्तभट्ट कृत न्यायमञ्जरी आदि दर्शन ग्रन्थ गद्य का परिष्कृत एवं सुसंस्कृत रूप उपस्थित करते हैं।

गद्यकाव्य के क्षेत्र में इस प्रकार के प्रबुद्धशील, लोकप्रिय, प्राञ्जल तथा अनुकरणीय श्लाघ्य गद्य का प्रवर्तन दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट की कृतियों से

लक्षित होता है। यद्यपि गद्य का वैभवशाली रूप, जिससे संस्कृत भाषा को आगे बढ़ाने का पर्याप्त सुअवसर मिला, हमें दण्डी, सुबन्धु तथा बाणभट्ट की रचनाओं में मिलता है, फिर भी यह सुनिश्चित मत है कि गद्य की परम्परा दण्डी आदि से भी पहले की है। दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट इन तीनों गद्यकार कवियों ने अपनी-अपनी स्वतन्त्र शैलियों को दिया, जो अत्यन्त ही रोचक थी, फिर भी आगे के गद्यकार कवि इनका ठीक-ठीक अनुकरण करने में समर्थ न हो सके।

कथा-आख्यायिका

आचार्य दण्डी के काव्यशास्त्रविषयक ग्रन्थ काव्यादर्श में गद्य के भेदोपभेदों की प्रचुर चर्चा है। दण्डी ने गद्य के दो भेद किये हैं—(१) कथा तथा आख्यायिका। कथा कल्पना की आधारभित्ति पर अवलम्बित होती है और आख्यायिका में ऐतिहासिक तथ्यों का स्पष्टीकरण रहता है। अमरसिंह ने भी अपने अमरकोश में कहा है —'आख्यायिकोपलब्धार्था प्रबन्धकल्पना कथा' कथा का वक्ता जहाँ लेखक होता है, वहाँ आख्यायिका में उसके विपरीत नायक ही स्वयं वक्ता होता है। इस दृष्टि से आख्यायिका एक प्रकार से आत्मकथा के अन्तर्गत आ जाती है। आख्यायिका अध्यायों या उच्छ्वासों में विभक्त होती है और कहीं-कहीं उसमें पद्य भी समावेश रहता है, किन्तु कथा में यह सब नहीं होता है। कथा का विषय अपहरण, युद्ध, वियोग तथा प्रकृतिवर्णन से सम्बद्ध रहता है, परन्तु आख्यायिका में इन बातों का होना आवश्यक नहीं है। कथा एवं आख्यायिका में यह मौलिक भेद होते हुए भी वे गद्य के ही दो रूप हैं।

आचार्य दण्डी का समय

आचार्य दण्डी लौकिक संस्कृत साहित्य के प्रथम गद्यकार कवि हैं। दण्डी के देश-काल के सम्बन्धी तथ्यों की खोज निकालने में कुछ विद्वानों के बीच बड़ा ही मतभेद है, उनके सम्बन्ध में इतना तो स्पष्ट रूप से सिद्ध हो चुका है कि वे दाक्षिणात्य और सम्भवतः विदर्भदेशीय (बरारनिवासी) थे। इसकी पुष्टि के लिए कहा जाता है कि आचार्य दण्डी ने अपने काव्यादर्श में दक्षिण भारत के मलयानिल (२.१७४), काञ्ची (३।११४), कावेरी (३।१६६) और चोल (३।१६६) आदि स्थानों का वर्णन किया है। ऐसे ही आधारों पर दण्डी के दाक्षिणात्य होने की कल्पना की जाती है। दण्डी की वर्णनशैली भी वैदर्भीरीति-प्रधान है, जो काश्मीर प्रान्त के साहित्यिकों से भिन्न प्रतीत होता है। दशकुमार-चरितात्मक दण्डी का गद्यात्मक काव्य वैदर्भीरीति प्रधान है।

दण्डी की अन्तिम सीमा के लिए अन्य ग्रन्थों में निम्नलिखित आधार प्राप्त होते हैं।

(१) अभिनवगुप्ताचार्य ने (१००० ई०) ध्वन्यालोक की व्याख्या 'लोचन' में लिखा है—यथाह दण्डी—गद्यपद्यमयी चम्पूः (३।७)।

(२) प्रतिहारेन्दुराज ने (९२५ ई०) उद्भटाचार्य के 'काव्यालङ्कार-सारसंग्रह' की लघुवृत्ति में लिखा है 'अतएव दण्डिना लिम्पतीव' इत्यादि।

(३) वामन (८०० ई०) के काव्यालङ्कारसूत्र में दण्डी के 'काव्यादर्श' की तुलना नामक विवेचना द्वारा प्रतीत होता है कि दण्डी वामन से प्राचीन हैं। दण्डी वैदर्भी एवं गौड़ी दो ही मार्ग (रीति) बतलाते हैं—तत्र वैदर्भगौडीयौ (१।४०), किन्तु वामन ने उनमें एक पाञ्चाली और बढ़ाकर तीन रीतियाँ बतलायी हैं।

इन आधारों पर दण्डी की अन्तिम सीमा ८०० ई० के आसपास है। पीटरसन, याकोबी, बेलवलकर और बर्नेट प्रभृति विद्वानों ने दण्डी को विभिन्न तिथियों में रखा है। वास्तविकता तो यह है कि उक्त विद्वानों के मतानुसार आचार्य दण्डी न तो बाणभट्ट के परवर्ती थे, न भामह के पूर्ववर्ती, किन्तु केवल काणे ने पूर्ववर्ती माना है।

दण्डी और बाणभट्ट के कालज्ञान के लिए सबसे बड़ा पुष्ट प्रमाण दशकुमार-चरित उपस्थित करता है। उसमें जो भगौलिक चित्रण तथा राजनीतिक वातावरण है, वह सम्राट् हर्षवर्धन (सातवीं शती) के राज्यकाल से पहले के भारत का है। अतः हम दण्डी को छठी शताब्दी के बाद मानने के पक्ष में नहीं हैं। यही बात अधिकतर पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर, वेबर, मैकडोनल, जैकोबी आदि भी स्वीकार करते आये हैं। डॉ० काणे दण्डी को ६०० ई० के समीप मानते हैं तथा अन्य इतिहासकार इन्हें सातवीं शती में मानते हैं। इन दोनों मतों में काणे का मत कुछ शिथिल-सा प्रतीत होता है।

आचार्य दण्डी के बाद कथाकाव्य के क्षेत्र में सुबन्धु तथा बाणभट्ट में से कौन पहले हुआ, इस सम्बन्ध में भी पर्याप्त मतभेद है। कुछ विद्वानों की राय है कि सुबन्धु ने कई घटनाओं, पदों एवं शब्दों को बाणभट्ट की रचनाओं से ग्रहण किया है। इसके विपरीत काणे महोदय ने कादम्बरी की अंग्रेजी भूमिका में सुबन्धु तथा बाणभट्ट के स्थिति-काल के सम्बन्ध में जो तर्क एवं प्रमाण उपस्थित किये हैं,

उनके अनुसार बाणभट्ट के हर्षचरित में जिस वासवदत्ता का उल्लेख किया गया है, वह पतञ्जलि द्वारा उद्धृत कृति न होकर सुबन्धु की कृति वासवदत्ता ही है।

सुबन्धु और बाणभट्ट की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए हमारे पास पहला प्रमाण तो यह है कि कविराज ने अपने महाकाव्य राघवपाण्डवीयम् में सुबन्धु को पहले तथा बाणभट्ट को बाद में रखा है। इसके अतिरिक्त वाक्पतिराय ने अपने प्राकृत काव्य 'गउडवहो' में सुबन्धु का नाम बड़े आदर के साथ उद्धृत किया है, किन्तु बाणभट्ट का उसमें संकेत नहीं है, क्योंकि बाणभट्ट उस समय तक उतनी ख्याति नहीं प्राप्त कर पाये थे, जितनी ख्याति सुबन्धु ने अर्जित की थी।

कीथ के मतानुसार दशकुमार का भूगोलचित्रण हर्षवर्धन के पूर्व भारत के वर्णन से साम्य रखता है। दशकुमार की भाषा प्रणाली तथा वर्णनशाली आचार्य दण्डी के सुबन्धु और बाणभट्ट के पूर्व में होने की सूचना देती है।

सुबन्धु की वासवदत्ता के उल्लेख के साथ-साथ भवभूति के 'मालतीमाधव' (७०० ई०) प्रसिद्ध नैयायिक उद्योतकर (७०० ई०) और बौद्धाचार्य (७०० ई०) धर्मकीर्ति आदि ग्रन्थकारों का सिद्धान्त परिशीलन करके डा० कीथ ने अपने हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर नामक ग्रन्थ में सुबन्धु के स्थितिकाल की पूर्व सीमा सातवीं शताब्दी के आरम्भ में स्थिर की है। अतः सुबन्धु का समय उद्योतकर और धर्मकीर्ति के बाद तथा बाणभट्ट के पूर्व किसी समय होना चाहिए।

सुबन्धु की कृतियों में 'वासवदत्ता' ही गद्य की एकमात्र कृति है। इस प्रकार दण्डी और सुबन्धु के बाद बाणभट्ट का क्रम आता है। बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के उन यशस्वी विद्वानों में से हैं, जिनके कारण संस्कृत भाषा को विश्व की उच्चतम भाषाओं में स्थान मिला है। संस्कृत साहित्य के उन इने-गिने ग्रन्थ निर्माताओं में बाणभट्ट का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने अपने सम्बन्ध में भी कुछ बातें कहकर इतिहासकारों को अधिक मदद दी है। 'हर्षचरित' प्रथम तीन उच्छ्वासों और कादम्बरी के आरम्भ में बाणभट्ट ने आत्मकथा तथा अपने वंश का सुन्दर परिचय दिया है।

यह सुप्रसिद्ध है कि बाणभट्ट सम्राट् हर्षवर्धन की विद्वत्सभा के एक उज्ज्वल रत्न थे। तत्कालीन चीनी यात्री ह्वेनसांग ने ६२९-६४५ ई० के बीच भारत का भ्रमण किया, जिसने हर्ष के राज्य का आँखों देखा इतिवृत्त बताया है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन ताम्रपत्रों एवं शिलालेखों से भी ज्ञात होता है कि हर्ष

का राज्याधिरोहण अक्टूबर ६०६ ई० में और उनका शरीरान्त ६४५ ई० में हुआ था।

बाणभट्ट का समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। उस समय गुप्तकालीन संस्कृति पूर्ण रूप से विकसित हो चुकी थी। एक प्रकार से स्वर्णयुग की वह संस्कृति अपनी सान्ध्य वेला आ गयी थी और सातवीं शती में उसका बाह्य रूप भली भाँति पुष्पित, फलित एवं प्रतिमण्डित था। धर्म, दर्शन, कला, राजनीति, आचार-विचार आदि की दृष्टि से बाणभट्ट के अधिकांश उल्लेख गुप्तकालीन संस्कृति पर भी प्रकाश डालते हैं।

गद्यकाव्य के लिए बाणभट्ट ने कादम्बरी और हर्षचरित दो ग्रन्थ दिये हैं। कादम्बरी सभी ग्रन्थों में सर्वोच्च एवं सर्वाधिक लोकप्रिय ही नहीं, प्रत्युत समस्त संस्कृत साहित्य में प्रथम श्रेणी का उत्कृष्ट गद्यकाव्य है।

हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ काञ्चीनगरी के पल्लवनरेश की छत्रच्छाया में दण्डी का सुखमय समय बीतने के कारण दण्डी का समय षष्ठ शताब्दी का उत्तरार्द्ध और सातवीं शती का पूर्वार्द्ध माना जाता है।

वस्तुतः अन्तःसाक्ष्य एवं बाह्य प्रमाणों के आधार पर गद्यकाव्य के क्षेत्र में प्रथम सुबन्धु, द्वितीय दण्डी और तृतीय बाणभट्ट का स्थान है। इनका समय छठी शती के आरम्भ से लेकर सातवीं शती के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है।

काव्यशास्त्र के अभ्युदय का एकमात्र प्रयोजन है, काव्य के अन्तस्तत्त्व का पता लगाना। भारतीय काव्यशास्त्रियों ने काव्य की उस आधारभूत परम सत्ता को पृथक्-पृथक् रूप में देखा है। काव्यशास्त्र की आत्मा की खोज में ही विभिन्न अङ्गों का विवेचन हुआ है।

आचार्य भरत से लेकर पण्डितराज जगन्नाथ तक काव्यशास्त्र की परम्परा अत्यन्त उत्कर्ष पर रही और इस बीच विभिन्न मतावलम्बी आचार्यों ने अपने-अपने सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा के लिए आलोचना-प्रत्यालोचना के क्षेत्र में भाग लिया।

आचार्य भामह से काव्यशास्त्र की उन्नत परम्परा का आरम्भ माना जाता है। भामह के काव्यालङ्कार में कुछ पूर्वाचार्यों का नाम आया है, किन्तु अपने क्षेत्र का ऐसा पहला उपलब्ध ग्रन्थ उन्हीं का है, जिसमें काव्यशास्त्र की विधियों का वैज्ञानिक ढङ्ग से वर्गीकरण किया हुआ है और उसी ग्रन्थ से काव्यशास्त्र की आत्मा को स्वतन्त्र दिशा में विकसित होने का सुयोग मिला है।"

भामह की अपेक्षा उत्तरवर्ती काव्यशास्त्रियों में आचार्य दण्डी का प्रमुख स्थान है। उनकी कृति अवन्तिसुन्दरी कथा के उपलब्ध हो जाने पर उनकी वंशावली का पूर्ण परिचय प्राप्त हो जाता है। तदनुसार दण्डी का स्थितिकाल छठी शताब्दी है।

काव्यशास्त्र के वृहद् भाग के निर्माण का श्रेय काश्मीरी विद्वानों को है। प्राचीन काव्यशास्त्रियों में आचार्य दण्डी ही एक ऐसे विद्वान् हैं, जो काश्मीरी न होकर दाक्षिणात्य थे। यद्यपि भोजदेव जैसे विद्वान् भी काश्मीरी नहीं थे, फिर भी उनकी गणना शीर्षस्थ विद्वानों की कोटि में थी। अपने जन्म से काश्मीर भूमि को अलंकृत करनेवाले विद्वानों में भामह, उद्भट, वामन, आनन्दवर्द्धन, कुन्तक, महिमभट्ट, अभिनवगुप्त, मम्मट और रुय्यक आदि प्रमुख हैं।

दण्डी की कृतियाँ

आचार्य दण्डी की उत्पत्ति, रचना तथा समय निर्द्धारण के सम्बन्ध में विद्वानों का महान् मतभेद है। अवन्तिसुन्दरी कथा के आधार पर इनके जीवनचरित का कुछ आभास मिलता है। आचार्य दण्डी किरातार्जुनीय महाकाव्य के प्रणेता कविवर भारवि के प्रपौत्र थे। दण्डी कवि के पितामह का नाम मनोरथ था तथा पिता का नाम वीरदत्त था। वीरदत्त चार भाइयों में सबसे छोटे थे और न्यायशास्त्र के निष्णात विद्वान् थे। दण्डी की माता का नाम गौरी था—

मनोरथाह्वयस्तेषां मध्यमो वंशवर्द्धनः।
ततस्तनूजाश्चत्वारः चत्वारो वेदा इवाभवन् ॥
श्रीवीरदत्त इत्येषां मध्यमो वंशवर्द्धनः।
यवीनस्य च श्लाघ्या गौरीनामाभवत् प्रिया ॥
ततः कथंचित् सा गौरी द्विजाधिपशिरोमणेः।
कुमारं दण्डिनामानं व्यक्तशक्तिमजीजनत् ॥

दुर्दैववश दण्डी बाल्यावस्था में ही मातृ पितृविहीन हो गये, फिर भी शिक्षित परिवार में जन्म होने के कारण ये प्रकाण्ड विद्वान् हुए।

यह जनश्रुति प्रसिद्ध है कि ये काञ्ची (काञ्जीवरम्) के शैवधर्मावलम्बी पुल्लवनरेश रामवर्मा के सभापण्डित थे और उनके राजकुमार को शिक्षित करने के लिए इन्होंने अपने प्रख्यात ग्रन्थ काव्यादर्श की रचना की थी। कवयित्री विद्या, विज्जा या विज्जका के नाम से निर्दिष्ट एक श्लोक शार्ङ्गधरपद्धति में उपलब्ध है, जिससे सिद्ध होता है कि काव्यादर्श आचार्य दण्डी के द्वारा ही प्रणीत है।

नीलोत्पलदलश्यामां विज्जिकां मामजानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्तं सर्वशुक्ला सरस्वती॥ (१८०)

काव्यादर्श में दण्डी ने मङ्गलाचरण के प्रथम पद्य में 'सर्वशुक्ला सरस्वती' लिखा है। इसी पर अपने को सरस्वती का अवतार माननेवाली कवयित्री विज्जिका का यह व्यङ्ग्यात्मक उपहास है। उसने अपनी विद्वत्ता के गर्व से दण्डी पर व्यङ्ग्य किया है। जल्हणकवि की 'सूक्ति मुक्तावली' में कविवर राजशेखर द्वारा रचित 'शार्ङ्गधर पद्धति' से उद्धृत निम्नाङ्कित श्लोक से मालूम पड़ता है कि कर्नाटक प्रान्त में विजयाङ्का नाम की एक कवयित्री सरस्वती के समान विदुषी महिला हो गयी है, जिसके सम्बन्ध में कहा गया है—

सरस्वतीव कर्णाटी विजयाङ्का जयत्यसौ।
या विदर्भगिरां वासः कालिदासादनन्तरम्॥ (१८४)

संभवतः यह विख्यात कर्णाटी वही भट्टारिका विजयाङ्का है, जो चन्द्रादित्य की महारानी थी। चन्द्रादित्य द्वितीय पुलकेशिन के पुत्र थे, जिनका समय ६६० ई० है। इस आधार पर दण्डी की अन्तिम सीमा विज्जिका पूर्व चली आती है।

इसके अतिरिक्त सुबन्धुप्रणीत वासवदत्ता में 'छन्दोविचितिरिव मालिनीसनाथा' छन्दोविचिति शब्द का प्रयोग मिलता है। इस आधार पर कुछ विद्वानों का मत है कि दण्डी के 'छन्दोविचित्यां सकलः तत्प्रपञ्चो निदर्शितः'। इस वाक्य में दण्डी ने अपने जिस छन्दोविचिति नामक छन्दो-ग्रन्थ का निर्देश किया है, उसी के विषय में उपर्युक्त सुबन्धु का वाक्य है। यदि यह कल्पना ठीक है तो इसके द्वारा भी सुबन्धु के पूर्ववर्ती छठी शताब्दी में ही दण्डी का समय है, जैसा कि पाश्चात्य विद्वान् मॅक्समूलर, वेबर, मेक्डानल और कर्नल जेकप आदि मानते आ रहे हैं।

श्रीरमेशचन्द्र राय, मि० पिटर्सन और जैकोबी का मत है कि दण्डी के काव्यादर्श (२।१९७) में बाण की कादम्बरी का प्रतिबिम्ब है। बाण का समय हर्षवर्द्धन के समकालीन ६०६–६४७ है।

जैकोबी का कहना है कि दण्डी कवि के,

रत्नभित्तिषु संक्रान्तैः प्रतिबिम्बशतैर्वृतः।
ज्ञातः लङ्केश्वरः कृच्छ्रादाञ्जनेयेन तत्त्वतः॥ २।३०२

इस काव्यादर्श के पद्य की शिशुपालवध के निम्नाङ्कित पद्य में समानता है ।

रत्नस्तम्भेषु संक्रान्तप्रतिमास्ते चकाशिरे ।
एकाकिनोऽपि परितः पौरुषेयवृता इव ॥ ३।४

आज को प्रामाणिक गवेषणा के अनुसार आचार्य दण्डी द्वारा प्रणीत तीन ग्रन्थों की उपलब्धि होती है—(१) काव्यादर्श, (२) दशकुमारचरित और (३) अवन्तिसुन्दरी कथा । अन्तिम दोनों ग्रन्थ दशकुमारचरित तथा अवन्तिसुन्दरी-कथा कथाकाव्य हैं और प्रथम काव्यादर्श आचार्यकोटि का ग्रन्थ है, जिसपर अनेक टीकाएँ हैं, जिनमें तरुण वाचस्पति की व्याख्या, किसी अज्ञातनामा विद्वान् की हृदयङ्गमा और नृसिंहदेव शास्त्री की कुसुम प्रतिमा प्रमुख हैं ।

साहित्य के उपलब्ध प्राचीन लक्षण ग्रन्थों में भामह के बाद आचार्य दण्डी का काव्यादर्श ही उपलब्ध है । काव्यादर्श में तीन परिच्छेद हैं—

(१) प्रथम परिच्छेद में काव्य परिभाषा, काव्यभेद, महाकाव्यलक्षण, गद्य के प्रभेद, कथा, आख्यायिका, मिश्रकाव्य, भाषाप्रभेद, वैदर्भ आदि मार्ग, अनुप्रास, गुण और काव्यहेतु का विवेचन है ।

(२) द्वितीय परिच्छेद में संसृष्टि सहित ३५ अर्थालङ्कारों का निरूपण है ।

(३) तृतीय परिच्छेद में यमक, गोमूत्रादि चित्रबन्धकाव्य, प्रहेलिका और दश दोषों का निरूपण है ।

कविवर राजशेखरकृत शार्ङ्गधरपद्धति से भी इसका स्पष्ट समर्थन होता है—

त्रयोऽग्नयस्त्रयो देवाः त्रयो वेदास्त्रयो गुणाः ।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः ॥ १७४

कुछ इतिहासलेखक दशकुमारचरित तथा काव्यादर्श को दण्डीकविप्रणीत मानते हैं और अवन्तिसुन्दरी कथा को अन्य कविकृत कहते हैं । कुछ इतिहासज्ञ अवन्तिसुन्दरी के स्थान पर छन्दोविचिति नामक काव्य को दण्डी का तीसरा काव्य मानने के पक्ष में हैं । इस प्रकार दशकुमारचरित तथा काव्यादर्श तो इनकी निर्विवाद रचनाएँ हैं और अवन्तिसुन्दरी विवादास्पद होते हुए भी इन्हीं की रचना मानी जाती है ।

दशकुमार की समीक्षा

आचार्य दण्डीप्रणीत दशकुमारचरित एक उत्कृष्ट गद्यकाव्य है । इसमें तीन भाग हैं—(१) पूर्वपीठिका, (२) चरित तथा (३) उत्तरपीठिका । पूर्वपीठिका

में पाँच उच्छ्वास हैं, चरितभाग में आठ उच्छ्वास हैं और उत्तरपीठिका में अष्ट उच्छ्वास का उपसंहारमात्र है।

इस काव्य की भाषा ललित तथा मधुर है और साथ ही सुबन्धु और बाणभट्ट की भाषाओं से सरल भी है। इस काव्य का वर्णित कथाभाग सुबन्धु तथा बाणभट्ट के काव्यों के समान पाठकों के स्मृति-पटल पर सदा अङ्कित रहता है।

संस्कृत गद्यकाव्य में शब्दों की कलात्मक वाटिका सजाने में आचार्य दण्डी को अपूर्व सफलता मिली है। दशकुमार में प्रयुक्त शब्दविन्यास एवं पदसमूह अनुचर की तरह दण्डी का अनुगमन करते हैं। सारा दशकुमारचरित सरलतम, मधुर एवं ललित पदों की विलक्षण कलाचातुरी से ओत-प्रोत है। इसमें आनुप्रासिक पदविन्यास एवं शब्दयोजना की छटा दर्शनीय है। यह काव्य श्लेषालङ्कारहीन है और इसमें अन्य उपमा अलङ्कार आदि भी प्रचुरमात्रा में नहीं हैं।

इसके कथानक का उपक्रम पुष्पपुर, राजहंस एवं वसुमती के वर्णन से होता है और मन्त्रिकुमारों की उत्पत्ति का वृत्त, राजवाहन का प्रादुर्भाव, दसों कुमारों की दिग्विजययात्रा, विलास, सोमदत्त, पुष्पोद्भव और राजवाहन का उन-उन कुमारियों के साथ परिणय आदि का प्रसार अतिरोचक ढङ्ग से लिखा गया है। इनके वर्णनों में पाठकों को मुग्ध, आकृष्ट एवं आश्चर्यचकित करने की खूबी है।

दशकुमारचरित के अनुशीलन से यह स्पष्ट होता है कि आचार्य दण्डी व्यावहारिक संस्कृत के सिद्धहस्त कवि हैं। इनके गद्य की शैली सरस, ललित, आनुप्रासिक और प्रसादमयी है। भाषा में स्वाभाविक प्रवाह और यथास्थान मुहावरों का सन्निवेश भी है। चोरशास्त्र, राजनीतिशास्त्र और व्यावहारिक ज्ञान का उपदेश तो पद-पद पर है। कतिपय स्थलों पर कामशास्त्र का वर्णन निपुणतापूर्ण ढङ्ग से हुआ है। कुछ इतिहास के पारंगत विद्वान् उसे अश्लील होने से दोषमय बताते हैं, किन्तु साहित्यिक वर्णन की दृष्टि से उनका उपन्यास गुण ही है। तात्कालिक व्यवहारों की कुटिलताएँ तो इसमें कूट कूटकर भरी पड़ी हैं।

इसमें दीर्घपदविन्यास के अभाव के कारण पाठकों का मनोरञ्जन बराबर होता रहता है। दशकुमारचरित के गद्य में न तो सुबन्धु जैसी श्लिष्टता है, न बाणभट्ट जैसी क्लिष्टता। इसका गद्य तो शिष्ट, संयत, प्राञ्जल एवं सुप्रयुक्त है। अनुप्रासमय पदविन्यास के लालित्य का प्रमुख कारण है। "इसमें आनुप्रासिक चमत्कार के साथ ही यमक अलंकार का सम्प्रवेश भी अत्यन्त मनोहर है। जैसे—

अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविशिष्टविद्यासम्भारभासुरभूसुरनिकरः, वि

चितारातिसन्तापेव प्रतापेन सततंतुलितवियन्मध्यहंसः राजहंसो नाम धनदर्पकन्दर्प-सौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव। (प्रथम उच्छ्वास)

इस गद्य काव्य में अनुप्रास अलङ्कार के साथ साथ (क) 'तस्य वसुमती, नाम सुमतिः लीलावती कुलशेखरमणी रमणी बभूव (ख) विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसन्त साऽनन्तभोगलालिता वसुमती, वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि (ग) ब्रह्मवर्चसेन तुलितवेधसं पुरोधसं पुरस्कृत्य कृत्यविन्महीपतिः कुमारं सुकुमारं जातसंस्कारेण बालालङ्कारेण विराजमानं राजवाहननामानं व्यधत्त' इत्यादि स्थलों में वसुमती, सुमतिः शेखरमणी रमणी, सुकुमारं कुमारम् इन अंशों में यमक का विन्यास सराहनीय है।

इसके अतिरिक्त (क) तत्र वीरभटपटलोत्तरङ्गतुरङ्गः (ख) धीरधिषणाव-धीरितविबुधाचार्यविचार्यसाहित्याः (ग) मया सविनयं सत्कृता स्वश्रा यशो साप्यहृदयतामयासीत्। इत्यादि गद्य खण्ड में आचार्य दण्डी के शब्दशिल्प का सौष्ठव दृष्टिगोचर होता है। दशकुमार के स्थल-स्थल पर दण्डी कवि की उत्प्रेक्षा भी विलक्षण है—जैसे पञ्चम उच्छ्वास में अवन्तिसुन्दरी के प्रथम दर्शन के अवसर पर राजवाहन अपने मन में तर्क करता है—

'ललनाजनं सृजता विधात्रा नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता, नो चेदब्ज-भूरेवंविधो निर्माणनिपुणो यदि स्यात्तर्हि तत्समानलावण्यामन्यां तरुणीं किन्न करोति' यद्यपि अनुप्रास तथा यमक अलंकार के अनवरत निर्वाह के कारण आचार्य दण्डी कवि को कहीं-कहीं दूरान्वयी अर्थ का भी सहारा लेना पड़ा है, फिर भी—

एको हि दोषो गुणसन्निपाते। निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः॥

के अनुसार यह काव्योत्कृष्टता का बाधक नहीं है, अपितु शोभादायक ही है।

वस्तुतः अभी तक गद्यकाव्य पदलालित्य की दृष्टि से आचार्य दण्डी के ललित पदवाले दशकुमारचरित की समता अन्य कोई गद्यकाव्य नहीं कर पाया है। इसीलिए एक समालोचक ने तत्तत् कवियों की कृतियों की समीक्षा करते हुए तत्तत् कवियों की विशेषता बतलायी है—

'उपमाकालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं त्रयोऽप्येकैकताऽधिकाः॥'

अतः दशकुमारचरित में प्रयुक्त पदलालित्य आचार्य दण्डी की काव्यकला का मापदण्ड माना जाता है।

दशकुमारचरित के सम्बन्ध में विभिन्न मत

कुछ समालोचक विद्वानों के विचार से दशकुमारचरित एक कवि की कृति नहीं है, उनके विचारानुसार यह दो कवियों द्वारा लिखा गया है। इस विचार के विद्वान् पूर्वपीठिका के लेखक को भिन्न मानते हैं तथा उत्तरपीठिका के लेखक को भिन्न कहते हैं। ये तर्क उपस्थित करते हैं कि पूर्वपीठिका तथा उत्तरपीठिका के सूक्ष्म निरीक्षण करने पर दोनों में साम्य नहीं है। कुछ समीक्षक तो दशकुमार को दण्डी कृत मानते ही नहीं, वे उत्तरपीठिका को पद्मनामककविकृत मानते हैं। वस्तुतः इस प्रकार ऊलजलूल कल्पनाओं से कोई लाभ नहीं, इसमें कोई सन्देह नहीं कि दशकुमारचरित दण्डिकविकृत ही है।

दशकुमारचरित की तीन प्राचीन टीकाएँ हैं—(१) शिवराम पण्डितकृत भूषण (२) कवीन्द्राचार्य की पदचन्द्रिका और (३) भानुचन्द्र की लघुदीपिका। ये टीकाएँ पूर्वपीठिका पर नहीं हैं। इस आधार पर कुछ विद्वान् दशकुमार की पूर्वपीठिका को दण्डीप्रणीत नहीं मानते हैं। पर प्राचीनता के अनुयायी समीक्षक विद्वानों ने पूर्वपीठिका एवं उत्तरपीठिका सहित समस्त दशकुमारचरित को आचार्य महाकवि दण्डी की ही कृति मानते हैं।

कृतज्ञताप्रकाश

मैं हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी के सं० महाविद्यालय के डाँ० विश्वनाथ पाण्डेय का अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने प्रेसकापी तैयार कर इस टीकाद्वयोपेत दशकुमारचरित के सम्पादन में मनसा, वाचा एवं कर्मणा बड़ी तत्परता से सहयोग देकर इस ग्रन्थ को इस रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

राजनीतिक, व्यावहारिक, सुबोध एवं प्राञ्जल ललित पदों से सम्पन्न आचार्य दण्डीकविद्वारा प्रणीत दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका को संस्कृत एवं राष्ट्रभाषा में यह संस्करण प्रकाशन कर चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन ने बहुत बड़े अभाव की पूर्ति की है। इनकी सुरभारती की सेवा स्तुत्य है। आशा है परीक्षार्थी छात्र एवं इस ललित गद्यकाव्य दशकुमारचरित के रसिक विद्वान् इससे लाभ उठाकर प्रकाशक के प्रयास को सफल बनाने का अवश्य अनुग्रह करेंगे।

बसन्तपञ्चमी
१९७७

विनीत,—
श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी

॥ श्रीः ॥

दशकुमारचरितम्

पूर्वपीठिका

प्रथमोच्छ्वासः

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः
क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः ।

'समाप्तिकामो मङ्गलमाचरेत्' इति शिष्टाचारमनुसरन् तत्रभवान् कविकुलचूडामणिः आचार्यदण्डी प्रारब्धुमिष्टस्य दशकुमारचरिताख्यस्य गद्यकाव्यस्य विघ्नव्यूहविनाशाय भगवद्वामनचरणारविन्दस्मरणरूपं वस्तुनिर्देशात्मकं मङ्गलमुपक्रमते ब्रह्माण्डेत्यादिना ।

अन्वयः—ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः, शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः, क्षोणीनौकूपदण्डः, क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः, ज्योतिश्चक्राक्षदण्डः, त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डः, त्रिबुधद्वेषिणां कालदण्डः, त्रैविक्रमः, अङ्घ्रिदण्डः, ते श्रेयः वितरतु ।

व्याख्या—ब्रह्माण्डम् = विश्वम् एव छत्रम् = आतपत्रम् तस्य दण्डः = आधार-

---

इस विश्व में कार्य और कारण दोनों का सम्बन्ध नियत है। कारण के बिना कोई कार्य संभव नहीं हो सकता। कारण रहने पर भी कभी-कभी कार्य नहीं हो पाता है, क्योंकि दैवात् उसका कोई प्रतिबन्धक उपस्थित हो जाता है। उस कार्यप्रतिबन्धक को दूर करने के लिए ही दैवी शक्ति की आराधना, स्मरण, नमस्कार आदि किया जाता है? परिणामस्वरूप इष्ट देवता की अनुकम्पा से कार्यप्रतिबन्धक के दूर हो जाने पर कार्यसिद्धि अवश्य हो जाती है। इसी भावमय अभिप्राय से उद्बुद्ध होकर लेखक अपने ग्रन्थों के आरम्भ में मङ्गलाचरण किया करते हैं। तदनुसार आचार्य दण्डी ने भी अपने दशकुमारचरित नामक गद्यमय काव्यग्रन्थ के आरम्भ में भगवान् वामन के चरणारविन्द की वन्दना करते हुए उनके विभिन्न स्वरूपों का स्मरण किया है।

भावार्थ—भगवान् त्रिविक्रम = वामन का वह चरणकमलदण्ड आपका = पाठकों को

ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः ॥

स्तम्भः। शतधृतेः = ब्रह्मणः, भवनं = गृहम् आश्रयः यत् अम्भोरुहं = कमलम् तस्य नालदण्डः = वृन्तभूता यष्टिः। क्षोणी = पृथ्वी एव नौ = तरणिः तस्याः कूपदण्डः = गुणवृक्षः। क्षरन्ती = प्रवहमाना या अमरसरित् = आकाशगङ्गा सैव पट्टिका = पताका, तस्याः केतुदण्डः = ध्वजयष्टिः। ज्योतिषां = ग्रहनक्षत्रादीनां चक्रं = मण्डलं रथाङ्गं तस्य अक्षदण्डः = नाभिरूपकाष्ठदण्डविशेषः। त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनं = त्रैलोक्यं तस्य विजयः = व्यापनरूपः, विजयसूचको वा स्तम्भदण्डः = त्रिलोकविजयसूचकः स्तम्भः। विबुधद्वेषिणां = दैत्यानां कालदण्डः = यमदण्डस्वरूपः। त्रयो विक्रमाः पादप्रक्षेपा यस्य स त्रिविक्रमः त्रिविक्रमस्य अयं त्रैविक्रमः = वामनावतारभगवद्विष्णुसम्बन्धी। अङ्घ्रिः = चरणः दण्ड इव, अङ्घ्रि-

---

कल्याण करे, जो ब्रह्माण्डरूपी छाते के दण्ड के समान है, अथवा ब्रह्माजी के उत्पत्तिस्थान कमल के नालदण्ड के समान है, या पृथ्वीरूपी नौका का कूपदण्ड=मस्तूल, गुनरखा के समान है, अथवा स्वर्ग से झरती हुई आकाशगङ्गारूपी पताका के ध्वजदण्ड के समान है, या ग्रहनक्षत्रमण्डलरूप रथचक्र=पहिये की धूरी के समान है, अथवा तीनों लोकों के जीतने के चिह्नस्वरूप स्तम्भ=खूँटा, विजयस्तम्भ के समान है, या असुरों के लिए काल-दण्ड=यमदण्ड के समान है।

विशेष—इस मङ्गलाचरणात्मक पद्य में आठ बार दण्ड शब्द का प्रयोग है और आरम्भ के तीन पादों में आदि से पाँचवें अक्षर के बाद छठा दण्ड शब्द आया है, किन्तु चतुर्थ पाद में पाँच अक्षरों के पश्चात् दण्ड शब्द नहीं है। सात जगह दण्ड है, पर तृतीय पाद में अङ्घ्रि के पूर्व दण्डों होने से स्वरूपक्रमभंग दोष आ गया है। भगवान् वामन के चरणकमल को दण्डस्वरूप मानकर सात रूपों में उसे व्यक्त करने का प्रयास है, जिससे यहाँ रूपकालङ्कार बन गया है। ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः, क्षोणीनौकूपदण्डः, क्षरदमरसरित्पाट्टिकाकेतुदण्डः इन तीनों [illegible] श्लिष्ट परम्परित रूपक है, जहाँ [illegible]ाक्षदण्डः में श्लिष्ट परम्परित रूपक है तथा अन्य शेष स्थलों में साधारण है।

पुराणों में यह कथा आयी है कि दैत्यराज बलि यज्ञद्वारा प्राप्त विशिष्ट शक्ति से सम्पन्न हो देवताओं को परास्त करने के बाद इन्द्र को हटाकर स्वयं स्वर्गाधिपति बन बैठा। अनन्तर देवमाता अदिति ने कश्यप जी से प्रार्थना की, कि हमारे पुत्र देवतागण दुःखी हैं। कृपया आप इनके दुःख को दूर करने का प्रयास करें। तदनुसार कश्यपजी भगवान् विष्णु की शरण में गये, अदिति ने व्रत-उपवास किया, उनकी आराधना से प्रसन्न हो भगवान् विष्णु स्वयं उनके पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुए, जो वामनावतार कहे जाते हैं।

यज्ञोपवीत संस्कार हो जाने पर ब्रह्मचारी के वेश में भगवान् वामन भृगुकच्छ में राजा

(१) अस्ति समस्तनगरीनिकषायमाणा शश्वदगण्यपण्यविस्तारितमणिगणादि-वस्तुजातव्याख्यातरत्नाकरमाहात्म्या मगधदेशशेखरीभूता पुष्पपुरी नाम नगरी।

दण्डः = चरणदण्डः। ते = तुभ्यम्, तव वा श्रेयः = कल्याणं मङ्गलं वा वितरतु = ददातु। पद्येऽस्मिन् रूपकालङ्कारस्य संसृष्टिरस्ति। ब्रह्माण्ड-क्षोणी-स्वर्गङ्गासु छत्र-नौ-पट्टिकानामारोपः भगवद्वामनपादारविन्दे दण्ड-दण्डकूप-केतुदण्डत्वारोपे निमित्तमिति पारम्परितं रूपकं तच्चात्राश्लिष्टशब्दनिबन्धनम्। ज्योतिश्चक्राक्ष-दण्डेत्यत्र तु चक्रशब्दस्य श्लिष्टत्वात् श्लिष्टशब्दनिबन्धनम्। अन्यत्र तु केवलं निरङ्गं रूपकम्। तेषां च परस्परनिरपेक्षत्वाद् भवति संसृष्टिः। छन्दश्चात्र पद्ये विद्यते स्रग्धरा। तल्लक्षणं यथा—

'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।'

(१) अस्तीत्यस्य पुष्पपुरी नाम नगरीत्यनेन विद्यते सम्बन्धः। निकषः = कषणोपल इवाचरतीति निकषायमाणा, समस्तानां = सर्वासाम्, नगरीणां = पुरीणाम्, निकषायमाणा—सर्वश्रेष्ठत्वकषणोपलभूता। शश्वत्—निरन्तरम्, अगण्यैः—असंख्यैः, पण्यैः = विक्रेयैः, विस्तारितैः = विक्रयार्थप्रसारितैः, मणिगणादिवस्तु जातैः = रत्ननिचयादिद्रव्यसमूहैः, व्याख्यातं = प्रकटितम्, रत्नाकरस्य = समुद्रस्य, इव माहात्म्यं = महिमा, यस्याः सा = विविधरत्नपूरितपण्या। मगधस्य = कीकटस्य शेखरीभूताः = शिरोभूषणस्वरूपा, पुष्पपुरी = कुसुमपुरं, पाटलिपुत्रम्, नाम प्रसिद्धा नगरी = पुरी अस्ति = वर्तते।

बलि के पास उपस्थित हो गये, जहाँ शुक्राचार्यजी बलि का अश्वमेध यज्ञ करा रहे थे। यज्ञ में दीक्षित दैत्यराज बलि ने उस तेजस्वी वामन बटु के अपूर्व रूप को देखकर आश्चर्य-चकित हो उनका यथावत् सत्कार किया और अभीष्ट वस्तु माँगने का अनुरोध किया। फलतः वामन बटु ने उससे केवल तीन पैर पृथ्वी की याचना की। शुक्राचार्य के मना करने पर भी बड़ी प्रसन्नता से अपने को धन्य मानते हुए उसने उनकी याचना के अनुसार तीन पैर जमीन देने का संकल्प कर ही लिया।

अनन्तर छद्मवेशधारी उस वामन बटु ने देवताओं की कार्यसिद्धि के निमित्त तीनों लोकों को नापने के लिए अपने पैर को दण्ड बनाकर आकाश तक लम्बायमान कर दिया था। उस समय वह भगवान् वामन का चरण जैसा प्रतीत होता था, उसी का वर्णन इस मङ्गल श्लोक में कविवर आचार्य दण्डी द्वारा चित्रित किया गया है।

(१) विश्व की समस्त नगरियों को जाँचने की कसौटी तथा असंख्य दुकानों में फैलाकर रखे हुए मणियों (रत्न आदि) के द्वारा रत्नाकर (समुद्र) के रत्नों की महिमा को प्रकाशित करनेवाली मगध देश की शिरोभूषण पुष्पपुरी नाम की नगरी थी।

(२) तत्र वीरभटपटलोत्तरङ्गतुरङ्गकुञ्जरमकरभीषणसकलरिपुगणकटकजलनिधिमथनमन्दरायमाणसमुद्दण्डभुजदण्डः, पुरन्दरपुराङ्गणवनविहरणपरायणतरुणगणिकागणजेगीयमानयाऽतिमानया शरदिन्दुकुन्दघनसारनीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरक्षीरगिरिशाट्टहासकैलासकाशनीकाशमूर्त्या रचितदिगन्तरालपूर्त्या कीर्त्याऽभितः सुरभितः, स्वर्लोकशिखरोरुरुचिररत्नरत्नाकरवेलामेखलायितधरणीरमणी-

---

(२) तत्र राजहंसो नाम भूपो बभूवेति सम्बन्धः। तत्र = पुष्पपुर्याम्, वीराणां = शूराणाम्, भटानां = योद्धानाम्, पटलेन = समूहेन, उत्तरङ्गा = उद्गतवीचयः उन्नताः तुरङ्गाः = अश्वाः, कुञ्जराः = गजाः, ते एव मकराः = नक्राः, जलजन्तुविशेषाः तैः, भीषणम् = भयङ्करम्, सकलानां = समस्तानाम्, रिपुगणानां = शत्रुसमूहानाम्, कटकं = सैन्यम्, जलनिधिः = समुद्र इव, तस्य मथने = विलोडने, मन्दरायमाणम् = मन्दराचल इवाचरन्, मन्थनदण्डस्वरूपः, समुद्दण्डः = समुन्नतः, भुजः = बाहुः, दण्ड इव यस्य सः। पुरन्दरस्य = इन्द्रस्य, पुरं = नगरम्, तस्य पुरन्दरपुरस्य = अमरावत्याः अङ्गणवने = चत्वरोद्याने, नन्दनवने = विहरणे = विहारे, परायणानां = तत्पराणानाम्, तरुणीनां = युवतीनाम्, गणिकानाम्, अप्सरसाम्, गणैः = समूहैः, जेगीयमानया = भूयो भूयः कीर्त्यमानया मुहुर्गीतया अति = अधिकं मानं = परिमाणं यस्याः सा तया अतिमानया = अपरिमितया, महत्या। शरदिन्दुः = शरत्कालीनः चन्द्रश्च, कुन्दं = माघ्यकुसुमं च, घनसारः = कर्पूरश्च, निहारः = हिमश्च, हारः = मौक्तिकमाला, मृणालं = बिसश्च, मरालः = हंसश्च, सुरगजः = इन्द्रवाहनमैरावतश्च, नीरं = जलं, क्षीरं = दुग्धञ्च, गिरीशस्य = महादेवस्य, अट्टहासः = हास्यविशेषश्च, कैलासः = रजतगिरिश्च, काशः = काशकुसुमश्च, तैः नीकाशा = तुल्या, मूर्तिः = स्वरूपं यस्याः सा तया = अतिस्वच्छया। रचिता = कृता, दिगन्तरालानां = दिगवकाशानाम्, पूर्तिः = पूर्णम्, यया सा तया = सर्वदिग्व्यापिन्या। कीर्त्या = यशसा, अभितः = समन्तात्, सुर-

---

(२) उस पुष्पपुरी में राजहंस नामक राजा रहते थे। उनके विशाल भुजदण्ड, वीरभटसमूह, चञ्चल घोड़े तथा बड़े-बड़े हाथीरूपी मगरों से भयङ्कर समस्त शत्रुमण्डल के सेनारूपी समुद्र को मथने के लिए मन्दराचल पर्वत के समान थे। उनकी कीर्ति चारों दिशाओं में व्याप्त थी, जिसे अमरावती के उद्यान (नन्दनवन) में विहार करनेवाली युवती अप्सराएँ बार-बार गाया करती थीं। उनकी वह अगणित कीर्तियाँ शरत्कालीन चन्द्रमा, कुन्दफूल, कपूर, बर्फ, मोतीमाला, कमलनाल, हंस, ऐरावत हाथी, जल, दुग्ध, शिवजी का अट्टहास कैलासपर्वत, काश नामक घास आदि श्वेत वस्तुओं के समान स्वच्छ थीं, जिनसे उनकी सर्वत्र ख्याति थी। वे राजहंस सुमेरुशिखर के समान मनोहर मणियों से

सौभाग्यभोगभाग्यवान्, अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविशिष्टविद्यासम्भारभासुर-भूसुरनिकरः, विरचितारातिसंतापेन प्रतापेन सतततुलितवियन्मध्यहंसः, राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव।

(३) तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।

मितः = अमोदितः, मनोज्ञः, स्वः = स्वर्गः, लोकः = आश्रयः येषां ते स्वर्लोकाः = देवाः तेषां स्वर्गवासिनां देवानां शिखरेषु = चूडासु, उरूणि = महान्ति, महार्हाणि, रुचिराणि = मनोहराणि, रत्नानि = मणयः यस्य तादृशस्य रत्नाकरस्य = समुद्रस्य वेलया = तटभूम्या, मेखला = काञ्ची, तयेवाचरिता मेखलायिता = वेष्टिता धरणी = पृथ्वी एव रमणी = कामिनी, तस्याः सौभाग्यस्य = सौन्दर्यैश्वर्यस्य च भोगे = उपभोगे भाग्यवान् = सौभाग्यशाली ससागरायाः वसुधायाः अधीश्वर इत्यर्थः। अनवरतं = निरन्तरम्, यो यागः = यज्ञानुष्ठानम्, तस्य दक्षिणाभिः = प्रदत्तपुरस्कार-द्रव्यविशेषैः, रक्षितः = पालितः, शिष्टानां = सदाचारपरायणानाम् शान्तप्रकृती-नाम्, विशिष्टेन = महता विद्यासम्भारेण = विद्याविस्तारेण, भासुराणां = दीप्तिमताम्, लब्धप्रतिष्ठानाम्, भूसुराणां = ब्राह्मणानाम्, निकरः = समूहः येन स तथाभूतः। विरचितः कृतः, अरातीनां = शत्रूणाम् सन्तापः = दुःखं येन स तेन तथाभूतेन प्रतापेन = तेजोविशेषेण। सततं = अनारतम्, तुलितः = समीकृतः, वियन्मध्यहंसः = वियतः = आकाशस्य मध्ये यो हंसः = सूर्यः, स, मध्याह्नसूर्यः। राजहंसो नाम = राजहंसाभिधानः, राजहंसेतिनाम प्रसिद्धः। घनः = सान्द्रः, दर्पः = अहङ्कारः, यस्य स घनदर्पः = रूपेणाप्रतिमः, यः कन्दर्पः = कामदेवः तस्य यत् सौन्दर्यं = रूपम्, तस्य सोदर्यं = सदृशम्, हृद्यं = मनोरमम्, निरवद्यम् = अनिन्द-नीयम्, निर्दोषम्, रूपं = स्वरूपं यस्य तादृशः, भूपः = राजा, बभूव = आसीत्।

(३) तस्य = राजहंसस्य, वसुमती नाम = वसुमतीनाम्नी, सुमतिः = शोभनबुद्धिशालिनी, लीलावतीनां = कामिनीनाम्, कुलस्य = मण्डलस्य, शेखर-मणिः = रत्नरूपा, रमणी = पत्नी, राज्ञी, बभूव = आसीत्।

संयुक्त रत्नाकर-समुद्र की वेलारूपा करधनी परिवेष्टित पृथ्वीरूपी कामिनी के सौन्दर्य-सौभाग्य का उपभोग करते हुए निरन्तर किये गये यज्ञों की दक्षिणाओं के द्वारा सदाचारी, विशेष शास्त्रज्ञान से तेजस्वी ब्राह्मणों की रक्षा करने में तत्पर रहा करते थे। साथ ही जो अपने प्रखर प्रताप से शत्रुसमूह के लिए सन्तापकारी मध्याह्नकालिक सूर्य के समान थे और सौन्दर्य में महाभिमानी कामदेव के सदृश मनोहर स्वरूप वाले थे।

(३) उस राजहंस की पत्नी का नाम वसुमती था और वह अत्यन्त बुद्धिमती एवं अत्यन्त सुन्दरी थी तथा स्त्रियों में मुकुटमणि थी। (वसुमती पृथ्वी का भी नाम है। अतः राजा राजहंस दोनों का उपभोग करते थे)।

(४) रोषरूक्षेण निटिलाक्षेण भस्मीकृतचेतने मकरकेतने तदा भयेनानवद्या वनितेति मत्वा तस्य रोलम्बावली केशजालम्, प्रेमाकरो रजनीकरो विजितारविन्दं वदनम्, जयध्वजायमानो मीनो जायायुतोऽक्षियुगलम्, सकलसैनिकाङ्गवीरो मलयसमीरो निःश्वासः, पथिकहृद्दलनकरवालः प्रवालश्चाधारबिम्बम्, जयशङ्खो बन्धुरा लावण्यधरा कन्धरा, पूर्णकुम्भौ चक्रवाकानुकारौ पयोधरौ, ज्यायमाने

---

(४) रोषेण = तपोभङ्गजनितेन क्रोधेन, रूक्षः = निष्ठुरः, तेन=तथाभूतेन, कोपनिष्ठुरेण । निटिले—भाले अक्षि यस्य स तेन निटिलेक्षणेन = ललाटस्थितनेत्रेण, भगवता शङ्करेण, भस्मीकृता—विनाशिता चेतना—चैतन्यं यस्य स तस्मिन् भस्मीकृतचेतने = दग्धे, मकरकेतने = कामदेवे, तदा = तस्मिन् काले, भयेन = सहसा, वनिता=कामिनी, अनवद्या—निर्दोषा । अतः सैवाश्रयणीया सर्वाङ्गसुन्दरी निर्दोषां तां महादेवोऽपि न धक्ष्यतीति निश्चित्य, तस्य = मदनस्य रोलम्बानां—भ्रमराणाम्, अवलीं = श्रेणी रोलम्बावली = भ्रमरपंक्तिः, अनङ्गस्य सहचरी मौर्वीरूपा । तस्याः = वसुमत्याः केशजालं = कुन्तलकलापः समभूदिव । प्रेम्णः आकरः = खनिः प्रेमाकरः = प्रीत्युत्पादकः, रजनीकरः—करोतीति करः रजन्याः करः रजनीकरः = चन्द्रमाः, कामस्य प्रधानसहायकः । विजितं = कान्त्या तिरस्कृतम्, अरविन्दं = कमलं येन तत् 'विजितारविन्दं = तिरस्कृतकमलम्, तस्य वदनं = मुखं (समभूदिव) जयध्वज इवाचरतीति जयध्वजायमानः = विजयपताकाध्वजदण्डसदृशः । जायया = स्वपत्न्या युतः मीनः = झषः, तस्याः अक्षियुगलं = नेत्रद्वयम् (समभवदिव) सकलेषु = समस्तेषु सैनिकेषु = कामदेवसैन्येषु मध्ये अङ्गवीरः = प्रधानभटः मलयसमीरः = दक्षिणानिलः, तस्याः निःश्वासः = प्राणवायुः, (समभूदिव) । पथिकानां = पान्थानाम्, हृदयस्य दलने = भेदने करवालः = कृपाणरूपः प्रवालः = नूतनपल्लवः, तस्या अधरबिम्बं = अधरोष्ठौ, (समभूताम्)

---

(४) यहाँ कवि की उत्प्रेक्षा विलक्षण है। तपस्या भङ्ग करने के उद्योग से क्रुद्ध हुए भगवान् शिव के तृतीय नेत्र से निर्गत अग्नि के द्वारा काम के भस्म हो जाने पर उसके सभी साधन भयभीत होकर, रानी वसुमती निर्दोष है, इसे भगवान् शङ्कर भी भस्म न कर सकेंगे। अतः इसी का आश्रय करना चाहिए। ऐसा समझकर मानो वे अपने-अपने स्वरूप के अनुसार वसुमती के प्रत्येक अङ्गों में छिप गये। जैसे—मौर्वी=धनुष की डोरी रूपी भौंरों की श्रेणी ने उसके काले केशों में, प्रेम के आकर चन्द्रमा ने कमलों को तिरस्कृत करनेवाले उसके मुख में, काम के विजयध्वज सपत्नीक मत्स्य ने दोनों नेत्रों में, काम के सैनिकों में प्रधान सेनानायक मलयमारुत ने उसके मुख में, पथिकों के हृदय को विदीर्ण करनेवाले तलवार के सदृश लाल-लाल पल्लवों ने उसके होठों में, विजयध्वनि करनेवाले कामदेव के शङ्ख के ऊँचे-

मार्दवासमाने विलसते च बाहू, ईषदुत्फुल्ललीलावतंसकह्लारकोरकौ गङ्गावर्तसनाभिर्नाभिः, दूरीकृतयोगिमनोरथो जैत्ररथोऽतिघनं जघनम्, जयस्तम्भभूते सौन्दर्यभूते विघ्नितयतिजनारम्भे रम्भे चोरुयुगम्, आतपत्रसहस्रपत्रं पादद्वयम्, अस्त्रभूतानि प्रसूनानि तानीतराण्यङ्गानि च समभूवन्निव ।

जयशङ्खः = कामस्य विजयध्वनिकारकः शङ्खः, बन्धुरा = उन्नतावनता, लावण्यधरा = धरतीति धरा लावण्यस्य धरा लावण्यधरा, सौन्दर्यशालिनी, लावण्यपूर्णा, तस्याः कन्धरा = ग्रीवा, पूर्णकुम्भौ कामविजययात्रायामपेक्षितौ जलपूर्णकलशौ, चक्रवाकं = पक्षिविशेषम् अनुकुरुत इति चक्रवाकानुकारौ = चक्रवाकसदृशौ तस्याः पयोधरौ स्तनौ (समभूताम्) ज्या = धनुर्गुणं इवाचरत इति ज्यायमाने = मौर्वीसदृश्यौ मार्दवे = सौकुमार्ये असमाने = अतुलनीये, अतिकोमले विसलते = मृणालद्वयम् तस्याः बाहू = भुजौ (समभूताम्) ईषत्फुल्लः = स्वल्पविकसितः लीलावतंसः = कामस्य विलासभूषणभूतः कह्लारकोरकः = सौगन्धिककुड्मलः, गङ्गाया आवर्तः = जलभङ्गः तस्य सनाभिः = सदृशः, तस्याः नाभिः (समभूदिव) दूरीकृतः = अपनीतः योगिनां मनोरथः = योगाभिलाषः येन स दूरीकृतयोगिमनोरथः = तपश्चारिणां तपो भ्रंशकारकः, जैत्ररथः कामस्य = जयनशीलो रथः कामस्य अतिघनं = अतिनिविडम्, विशालम्, तस्या जघनम् = कटिपुरोभागः । जयस्तम्भभूते = मदनस्य विजयस्तम्भस्वरूपे, सौन्दर्यभूते = मनोरमत्वमधिगते, विघ्नितः = विघ्नयुक्तः कृतः यतिजनानां = संयमिनाम्, योगाभ्यासिनाम् आरम्भः = योगाभ्यासोद्यमो याभ्यां ते, विघ्नितयतिजनारम्भे, रम्भे = कदल्यौ, तस्या उरुद्वयं = सक्थियुगलम् (समभूतामिव) आतपत्रं = छत्रं तद्रूपं कामस्य सहस्रपत्रं = कमलम्, तस्याः पादद्वयं = चरणयुगलम् । तानि = प्रसिद्धानि, अस्त्रभूतानि = कामस्य बाणभूतानि, प्रसूनानि = पुष्पाणि अरविन्दादीनि, इतराणि = पूर्ववर्णितभिन्नानि अन्यानि तस्या अङ्गानि = उदरादीनि समभूवन्निव, जातानीव ।

नीचे एवं सौन्दर्यशाली लावण्य ने कण्ठ में, कामदेव की विजययात्रा में अपेक्षित जलपूर्ण कलशों ने चक्रवाक पक्षी के सदृश उसके स्तनों में, कामधनुष की प्रत्यञ्चा ने जो कोमलता में मृणालयुग्म के समान थी, वसुमती की दोनों भुजाओं में, कामदेव के विलासभूषणरूप अधखिले कमलकोरक ने गङ्गावर्त के सदृश भँवरदार उसकी नाभि में, योगियों के ध्यानाभिलाष को दूर करनेवाले कामदेव के जैत्र रथ ने अत्यन्त सटे हुए उसके जघनस्थल में, मुनियों के योगाभ्यास में बाधा उपस्थित करनेवाले केले के खम्भों ने उसकी जाँघों में, कामदेव के छत्र के समान कमल ने उसके दोनों पैरों में आश्रय लिया तथा अन्य पुष्पों ने, जो काम के अस्त्र बने थे, वसुमती के शेष अङ्गों में आ छिपे । अर्थात् वसुमती के मुख इत्यादि चन्द्रमा आदि के सदृश अत्यन्त सुन्दर थे । इस प्रकार वह लोकोत्तर सुन्दरी थी ।

(५) विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसता सानन्तभोगलालिता वसुमती वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि ।

(६) तस्य राज्ञः परमविधेया धर्मपालपद्मोद्भवसितवर्मनामधेया धीरधिषणावधीरितविबुधाचार्यविचार्यकार्यसाहित्याः कुलामात्यास्त्रयोऽभूवन् ।

(७) तेषां सितवर्मणः सुमति-सत्यवर्माणौ, धर्मपालस्य सुमन्त्र-सुमित्र-कामपालाः, पद्मोद्भवस्य सुश्रुत-रत्नोद्भवाविति तनयाः समभूवन् ।

---

(५) विजितं = समृद्धया तिरस्कृतम्, अमरपुरम् = इन्द्रपुरं स्वर्गं येन तत् तस्मिन् विजितामरपुरे = तिरस्कृतस्वर्गे, पुष्पपुरे = पाटलिपुत्रनगरे । निवसता = वासं कुर्वता । नास्ति अन्तो यस्मिन् स अनन्तः अनन्तश्चासौ भोगः अनन्तभोगः, अनन्तभोगेन लालिता अनन्तभोगलालिता यद्वा अनन्तसुखवर्द्धिता, वसुमतीव = पृथ्वीव सा वसुमती = राजमहिषी अनन्तस्य = वासुकेः भोगेन = फणेन, मस्तकेन लालिता = धृता अनन्तभोगलालिता मगधराजेन = मगधनृपतिना राजहंसेन सुखमनतिक्रम्य यथासुखम् = सुखपूर्वकम् अन्वभावि = संभुक्ता ।

(६) तस्य राज्ञः = मगधराजस्य राजहंसस्य । परमविधेयाः = परमाश्च ते विधेयाः परमविधेयाः = अतिविनीताः । धर्मपालश्च पद्मोद्भवश्च सितवर्मा चेति नामधेयं येषां ते धर्मपाल-पद्मोद्भव सितवर्मनामधेयाः = धर्मपाल-पद्मोद्भव-सितवर्मनामानः । धीराभिः = गम्भीराभिः, धिषणाभिः = बुद्धिभिः अवधीरितानि = तिरस्कृतानि विबुधाचार्यस्य = देवगुरोः बृहस्पतेः विचार्याणां = विचारयितुं योग्यानाम् कार्याणां साहित्याः = समूहाः यैस्ते धीरधीषणावधीरितविबुधाचार्यकार्यसाहित्याः = अतीवगम्भीरबुद्धयः । कुलामात्याः = वंशपरम्परागतमन्त्रिणः । त्रयोऽभूवन् = त्रिसंख्याका आसन् ।

(७) तेषां = वंशपरम्परागतमन्त्रिणाम्, मध्ये सितवर्मणः = सितवर्मनामधेयस्य मन्त्रिणः सुमतिसत्यवर्माणौ = सुमतिसत्यवर्मनामकौ द्वौ तनयौ समभूताम् ।

---

(५) अपने ऐश्वर्य, सौन्दर्य एवं सम्पत्ति से इन्द्रपुरी को भी जीतनेवाली उस पुष्पपुरी में निवास करते हुए मगधराज राजहंस ने अनन्त=शेषनाग के भोग=फणों से लालित=धारण की हुई पृथ्वी के समान अनन्त सुख-सामग्रियों से पालित रानी वसुमती के साथ सुखपूर्वक विहार किया ।

(६) उस मगधराज राजहंस के अतिविनीत और अपनी गम्भीर बुद्धि से देवगुरु बृहस्पति को भी विचारणीय कार्यों में मात करनेवाले धर्मपाल, पद्मोद्भव और सितवर्मा नाम के तीन कुलपरम्परागत मन्त्री थे ।

(७) उन मन्त्रियों में सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा, धर्मपाल के सुमंत्र, सुमित्र

(८) तेषु धर्मशीलः सत्यवर्मा संसारासारतां बुद्ध्वा तीर्थयात्राभिलाषी देशान्तरमगमत्।

(९) विटनटवारनारीपरायणो दुर्विनीतः कामपालो जनकाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य भुवं बभ्राम।

(१०) रत्नोद्भवोऽपि वाणिज्यनिपुणतया पारावारतरणमकरोत्।

(११) इतरे मन्त्रिसूनवः पुरन्दरपुरातिथिषु पितृषु यथापूर्वमन्वतिष्ठन्।

धर्मपालस्य = धर्मपालनामकमन्त्रिणः, सुमन्त्र-सुमित्र-कामपालाः = सुमन्त्र-सुमित्र-कामपालनामकाः तनया अभूवन्। पद्मोद्भवस्य = पद्मोद्भवनामकस्य मन्त्रिणः, सुश्रुतरत्नोद्भवौ = तत्तन्नामानौ द्वौ तनयौ समभूताम्।

(८) तेषु = सप्तसु अमात्यपुत्रेषु, धर्मशीलः = धर्मात्मा सत्यवर्मा सितवर्मणो द्वितीयः पुत्रः संसारस्य = जगतः असारतां = नश्वरतया तुच्छताम्, बुद्ध्वा = मत्वा, तीर्थयात्राभिलाषी—तीर्थस्य = पुण्यभूमेः यात्रायाः अभिलाषोऽस्यास्तीति तीर्थयात्राभिलाषी = तीर्थयात्रेच्छुकः। देशान्तरं = अन्यं देशम्, अगमत् = अगच्छत्।

(९) विटः = धूर्तः, नटः = शैलूषः, वारनारी = वेश्या, तासु परायणः = तत्पर आसक्तः, दुर्विनीतः = अशिष्टः, धर्मपालस्य तृतीयः पुत्रः कामपालः। जनकाग्रजन्मनोः = पितुरग्रजस्य च, शासनम् = आदेशम्, अतिक्रम्य = उल्लङ्घ्य भुवं = पृथ्वीम्, बभ्राम = संचचार।

(१०) रत्नोद्भवः = पद्मोद्भवस्य द्वितीयपुत्रोऽपि वाणिज्यनिपुणतया = व्यापारक्षमतया। पारावारस्य = समुद्रस्य तरणं = पारगमनम्, अकरोत् = अकार्षीत्।

(११) इतरे = अन्ये चत्वारः, मन्त्रिसूनवः = अमात्यपुत्राः, सुमति-सुमन्त्र-सुमित्र-सुश्रुताः। पुरन्दरस्य = इन्द्रस्य पुरं = नगरं स्वर्गः तस्य पुरन्दरपुरस्य = स्वर्गस्य अतिथिषु = प्राघुणिकेषु मृतेषु पितृषु = जनकेषु पूर्वमनतिक्रम्य यथापूर्वम् = पितृपरम्परानुक्रमेण। अन्वतिष्ठन् = मन्त्रित्वमकुर्वन्।

एवं कामपाल तथा पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव नामक पुत्र हुए।

(८) उन पुत्रों में धर्मशील सत्यवर्मा संसार को असार समझकर तीर्थाटन की कामना से देशान्तर में चला गया।

(९) कामपाल नटों, धूर्तों और वेश्याओं के सम्पर्क में आकर उद्दण्ड के समान बड़े भाइयों तथा पिता की शिक्षाओं को न मानकर पृथ्वी पर इधर-उधर घूमने लगा।

(१०) रत्नोद्भव व्यापार में कुशल होकर समुद्र पार कर द्वीपान्तर में चला गया।

(११) शेष सुमति, सुमन्त्र, सुमित्र तथा सुश्रुत ये चार मन्त्रिपुत्र अपने-अपने पिताओं की मृत्यु के बाद पूर्व की भाँति अपने-अपने पिताओं के पद पर कार्य करने लगे।

(१२) ततः कदाचिन्नानाविधमहदायुधनैपुण्यरचितागण्यजन्यराजन्यमौलिपालिनिहितनिशितसायको मगधनायको मालवेश्वरं प्रत्यग्रसङ्ग्रामघस्मरं समुत्कटमानसारं मानसारं प्रति सहेलं न्यक्कृतजलधिनिर्घोषाहङ्कारेण भेरीझङ्कारेण हठिकाकर्णनाक्रान्तभयचण्डिमानं दिग्दन्तावलवलयं विघूर्णयन्निजभरनमन्मेदिनीभरणायस्तभुजगराजमस्तकबलेन चतुरङ्गबलेन संयुक्तः सङ्ग्रामाभिलाषेण रोषेण महताऽऽविष्टो निर्ययौ।

(१२) ततः = तदनन्तरम्, कदाचित् = एकदा, नानाविधानां = अनेकप्रकाराणाम्, महतां = विशालानाम्, आयुधानाम् = अस्त्राणाम्, नैपुण्येन = प्रयोगकौशलेन, रचितेषु = सम्पादितेषु, अगण्येषु = असंख्येषु, जन्येषु = युद्धेषु राजन्यानां = क्षत्रियाणाम्, मौलिपालिषु = किरीटप्रान्तभागेषु, निहिताः = निक्षिप्ताः, निशिताः = तीक्ष्णाः, सायकाः = बाणा येन सः = विजितानेकभूपालः। मगधनायकः = मगधेश्वरः राजहंसः, मालवेश्वरं = मालवाधिपतिम्, प्रत्यग्रे = नवीने, संग्रामे = युद्धे, घस्मरं = शत्रुभक्षणशीलम्, प्रत्यग्रसंग्रामघस्मरं = अभिनवे रणे जयशालिनम्। समुत्कटः = अतिशयितः, मानः = बलगर्वः एव सारः सारांशो यस्य स तं समुत्कटमानसारम्, मानसारं = मानसारनामकं राजानम् प्रति = लक्ष्यीकृत्य, सहेलं = सावज्ञम् न्यक्कृतः = तिरस्कृतः, जलधेः = समुद्रस्य निर्घोषाहङ्कारः = निर्घोषविषयेऽभिमानः येन स तेन ताहशेन भेर्याः = दुन्दुभेः, झङ्कारः = शब्दः तेन भेरीझङ्कारेण = दुन्दुभिवादेन। हठिकस्य = सहसागतस्य शब्दस्य आकर्णनात् = श्रवणात् आक्रान्तः = प्राप्तः भयस्य = भीतेः चण्डिमा = उग्रत्वं यस्य स तथाभूतम्। दिक्षु स्थिता ये दन्तावलाः = दिग्गजाः ऐरावतादयः, तेषां वलयं = मण्डलम्। विघूर्णयन् = कम्पयन्। निजस्य = स्वस्य, भरेण = भारेण, नमन्त्याः = अधो गच्छन्त्याः, मेदिन्याः = पृथिव्याः, भरेण = भारेण, आक्रान्तं = क्लिष्टम् अतिपीडितम्, भुजगराजस्य = वासुकेः, मस्तकबलं = शिरः सामर्थ्यं येन यथोक्तेन चतुरङ्गबलेन = चत्वारि अङ्गानि यस्य तच्चतुरङ्गं, चतुरङ्गं यद् बलं चतुरङ्गबलं तेन चतुरङ्गबलेन = गज-वाजि-रथ-पदाति-

(१२) कुछ दिनों के बाद एक समय अनेक प्रकार के बड़े-बड़े शस्त्रों की कलाओं में कुशल तथा कई बार किये गये युद्धों में क्षत्रिय राजाओं के मुकुटों के तीक्ष्ण बाणों का निशान मारनेवाले मगधाधिपति राजहंस कुछ दिन पहले संग्राम में विजय प्राप्त करने के कारण अत्यभिमानी मालवेश्वर मानसार के ऊपर अवज्ञापूर्वक अत्यन्त क्रुद्ध होकर समुद्र के गम्भीर गर्जनों को दबानेवाले नगाड़े के शब्दों को सहसा सुनकर भयभीत दिग्गजों को कँपानेवाले, अपने भार से दबी हुई पृथ्वी के भार से भुजगराज वासुकि के मस्तक

(१३) मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रहः सविग्रह इव साग्रहो-ऽभिमुखीभूय भूयो निर्जगाम।

(१४) तयोरथ रथतुरगखुरक्षुण्णक्षोणीसमुद्भूते करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौत-मूले नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकन्याजनजवनिकापटमण्डप इव वियत्तलव्याकुले धूलीपटले द्विपपद्ध्वनि धिक्कृतान्यध्वनिपटहध्वानबधिरिताशेषदिगन्तरालं शस्त्रा-शस्त्रि हस्ताहस्ति परस्पराभिहतसैन्यं जन्यमजनि।

रूपेण चतुर्विधसैन्येन "हस्त्यश्वरथपादाति सेनाङ्गं स्याच्चतुर्विधम्" इत्यमरसिंहः। संयुतः = सहितः, संग्रामस्य = युद्धस्य अभिलाषः = मनोरथः तेन संग्रामाभिलाषेण रोषेण = क्रोधेन, आविष्टः = समाक्रान्तः सन् निर्ययौ = निर्जगाम।

(१३) मालवनाथः = मानसारः अपि अनेकानेकपयूथसनाथः = अनेकेषां बहूनाम्, अनेकपानां = हस्तिनाम्, यूथेन = समूहेन सनाथः = युक्तः द्विरदोऽनेकपो-द्विपः' इत्यमरसिंहः। विग्रहः = संग्रामः, सविग्रहः = सशरीरः, मूर्तिमान् इव साग्रहः = साभिलाषः युद्धाभिनिवेशवान्, भूयः = पुनरपि, अभिमुखीभूय:-सम्मुखो भूत्वा, निर्जगाम = निर्ययौ।

(१४) अथ-निर्गमनानन्तरम्। तयोः = मगधराज-मालवेश्वरयोः राजहंस-मानसारयोः, रथैः = रथचक्रैः, तुरगाणाम्-अश्वानां, खुरैः = शफैश्च, क्षुण्णायाः-पिष्टायाः क्षोण्याः = पृथिव्याः समुद्भूते = उत्थिते, उत्पन्ने, धूलीपटले इत्यग्रिमेण सम्बन्धः। करिघटानां = हस्तिसमूहानाम्, कटेभ्यः-गण्डस्थलेभ्यः स्रवन्त्या = क्षरन्त्याः मदधारया = मदजलप्रवाहेण धौतं = क्षालितम्, मूलं = मूलप्रदेशः यस्य स तस्मिन् तथाभूते। नव्यवल्लभानां - अभिनवरमणीनाम्, वरणाय-स्वीकाराय आगतानां = युद्धक्षेत्रे समागतानाम्, दिव्यकन्याजनानां-अप्सरसाम्, जवनिकाय = तिरस्करिण्या युक्तः, पटमण्डपः = पटवासः तस्मिन्निव वियत्तलव्याकुले-आकाश-

---

को व्यथित करनेवाली सुसज्जित चतुरङ्गिणी (हाथी, घोड़े, रथ एवं पैदल) सेना लेकर युद्ध करने के लिए निकल पड़े।

(१३) शरीरधारी संग्राम के समान मालवेश्वर मानसार भी अनेक हाथियों की सेना से सुसज्जित होकर आग्रह के साथ युद्ध के लिए पुनः अपने नगर से निकल पड़ा।

(१४) इसके पश्चात् उन दोनों में भयङ्कर संग्राम आरम्भ हो गया। उस युद्धकाल में रथों के पहियों से और घोड़ों की टापों से चूर्ण की गयी पृथ्वी से उड़ी हुई धूलि हाथियों के कपोलों से बहती हुई मदधारा से सिक्त होकर नये-नये पतियों को वरण करने के निमित्त युद्ध क्षेत्र में उपस्थित अप्सराओं के पटमण्डप=परदे का काम करने लगी। अर्थात् परदायुक्त तम्बू की भाँति आकाश में धूलि व्याप्त हो गयी। अन्य सभी

(१५) तत्र मगधराजः प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलं मालवराजं जीवग्राहमभिगृह्य कृपालुतया पुनरपि स्वराज्ये प्रतिष्ठापयामास।

(१६) ततः स रत्नाकरमेखलामिलामनन्यशासनां शासदनपत्यतया नारायणं सकललोकैककारणं निरन्तरमर्चयामास।

च्छादिते, व्योमव्याप्ते धूलिपटले=पांसुसमूहे। दिविषदध्वनि=दिवि सीदयन्ति ये ते दिविषदः=देवाः, तेषामध्वनि=मार्गे, आकाशे। धिक्कृतः=तिरस्कृतः अन्येषां ध्वनिः=शब्दः यैः ते तैः तथाविधैः पटहध्वानैः=ढक्कानिनादैः बधिरितानि=बाधिरीकृतानि अशेषाणि=सकलानि दिगन्तरालानि=दिग्मध्यानि दिग्मध्यस्था वा जना येन तत्। शस्त्रैः शस्त्रैश्च प्रहृत्य प्रवृत्तं युद्धमिति शस्त्राशस्त्रि, हस्तैः हस्तैश्च प्रहृत्य प्रवृत्तं तद् युद्धं तत् हस्ताहस्ति, परस्परेण=अन्योन्येन अभिहतं=समाक्रान्तं सैन्यं यस्मिन् तत् परस्पराभिहतसैन्यम्, जन्यं=युद्धम्, अजनि=आरब्धम्।

(१५) तत्र=युद्धे, मगधराजः=राजा राजहंसः, प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलम्-प्रक्षीणं=निःशेषितं सकलं=समस्तम्, सैन्यमण्डलं=सेनासमूहः यस्य तं तथाविधम् मालवराजं=मालवेन्द्रम्, मानसारम्, जीवग्राहमभिगृह्य=जीवन्तमेव धृत्वा, कृपालुतया=दयालुतया, पुनरपि=भूयोऽपि स्वराज्ये=तद्राजधान्याम् प्रतिष्ठापयामास=प्रतिष्ठितमकरोत्।

(१६) ततः=तदनन्तरम्, सः=राजहंसः रत्नाकरमेखलाम्=रत्नाकरः समुद्रः मेखला=काञ्ची यस्याः सा तां सागररशनाम्, इलां=पृथ्वीम्, 'गौरिला कुम्भिनी क्षमा' इत्यमरः। अनन्यशासनां नास्ति अन्यस्य=इतरस्य नृपस्य शासनं यस्यां सा ताम् तथोक्ताम्, शासन्=पालयन् अनपत्यतया=सन्तत्यभावात् सकललोकैककारणं-सकलानां=समस्तानाम् लोकानां=जनानाम् एककारणम्=आदिहेतुम्, नारायणं=भगवन्तमादिपुरुषं विष्णुम्, निरन्तरम्=अहर्निशम्, अर्चयामास=पूजयमास।

शब्दों को दबानेवाली युद्ध की पटहध्वनियाँ समस्त दिशाओंमें गूँज गयीं, कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता था। उस युद्ध में योद्धागण शस्त्रों से शस्त्र और हाथों से हाथ टकराकर आपस में मार-काट करने लगे।

(१५) उस भयङ्कर संग्राम में मगधराज राजहंस ने मालवराज मानसार की सारी सेना नष्ट कर दी और उसे जीते जी पकड़कर दयावश पुनः उसके राज्य पर बैठा दिया।

(१६) बाद में मगध लौटकर राजा राजहंस समुद्र पर्यन्त समस्त पृथ्वी का शासन करते हुए सन्तान न होने के कारण समस्त विश्व के आदि कारण भगवान् नारायण की निरन्तर आराधना करने लगे।

(१७) अथ कदाचित्तदग्रमहिषी 'देवि! देवेन कल्पवल्लीफलमाप्नुहि' इति प्रभातसमये सुस्वप्नमवलोकितवती।

(१८) सा तदा दयितमनोरथपुष्पभूतं गर्भमधत्त।

(१९) राजापि सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः सुहृन्नृपमण्डलं समाहूय निजसम्पन्मनोरथानुरूपं देव्याः सीमन्तोत्सवं व्यधत्त।

(२०) एकदा हितैः सुहृन्मन्त्रिपुरोहितैः सभायां सिंहासनासीनो गुणैरहीनो ललाटतटन्यस्ताञ्जलिना द्वारपालेन व्यज्ञापि—देव! देवसन्दर्शनलालसमानसः कोऽपि देवेन विरच्यार्चनार्हो यतिर्द्वारदेशमध्यास्ते इति।

---

(१७) अथ = अनन्तरम्, कदाचित् = एकदा, तदग्रमहिषी = तस्य मगधाधिपस्य राजहंसस्य अग्रमहिषी = पट्टराज्ञी, वसुमती, देवि! = भद्रे! देवेन = राजा राजहंसेन, सह कल्पवल्लीफलम् = कल्पलताफलम्, अवाप्नुहि = लभस्व इति प्रभातसमये = उषःकाले सुस्वप्नं = शोभनं स्वप्नं अवलोकितवती = अपश्यत्।

(१८) सा = वसुमती, तदा = तस्मिन् समये, दयितमनोरथपुष्पभूतं = दयितस्य वल्लभस्य यो मनोरथः = पुत्रप्राप्तिरूपोऽभिलाषः स एव फलं, तस्य पुष्पभूतं = कुसुममिव भूतम्, गर्भम् अधत्त = दधार।

(१९) राजाऽपि = राजहंसोऽपि, सम्पदा = समृद्ध्या न्यक्कृतः = तिरस्कृत आखण्डलः = देवराजः, इन्द्रः, येन स सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः = ऐश्वर्येण महेन्द्रादप्यधिकः। सुहृन्नृपमण्डलम् सुहृदां = मित्रभूतानाम्, नृपाणां = राज्ञाम्, मण्डलं = समूहम्, समाहूय = आकार्य, निजसम्पन्मनोरथानुरूपम्—निजस्य = स्वस्य आत्मनः सम्पदः = समृद्धेः मनोरथस्य = अभिलाषस्य च अनुरूपं = तुल्यम्, सीमन्तोत्सवं = सीमन्तनामकं संस्कारविशेषम्, व्यधत्त = चकार।

(२०) एकदा = कदाचित् हितैः = हिताकाङ्क्षिभिर्जनैः, सुहृन्मन्त्रिपुरो-

---

(१७) कुछ दिन बीतने पर एक दिन प्रातःकाल के समय उनकी महारानी वसुमती ने स्वप्न में देखा कि किसी ने आकर उससे कहा—हे देवि! तुम राजा राजहंस से कल्पवृक्ष का फल प्राप्त करो।

(१८) उसके बाद उस राजमहिषी वसुमती ने पति के मनोरथ = फल की प्राप्ति के लिए पुष्परूप गर्भ को धारण किया।

(१९) अपने ऐश्वर्य-वैभव से देवराज इन्द्र को भी लजानेवाले उस राजा राजहंस ने मित्रराजाओं के मण्डलों को बुलाकर अपने वैभव तथा मनोरथ के अनुसार महारानी वसुमती का सीमन्तोन्नयन संस्कार किया।

(२०) एक दिन जब सर्वगुणसम्पन्न मगधराज राजहंस अपने शुभेच्छु मित्रों,

(२१) तदनुज्ञातेन स संयमी नृपसमीपमनायि।

(२२) भूपतिरायान्तं तं विलोक्य सम्यग्ज्ञाततदीयगूढचारभावो निखिलमनुचरनिकरं विसृज्य मन्त्रिजनसमेतः प्रणतमेनं मन्दहासमभाषत-'ननु तापस! देशापदेशं भ्रमन्भवांस्तत्र तत्र भवदभिज्ञातं कथयतु' इति।

हितैः सह सभायां = गोष्ठ्याम्, सिंहासनासीनः—सिंहासने = भद्रासने आसीनः = उपविष्टः, गुणैः = राजगुणैः शौर्यादिभिः, अहीनः = अन्यूनः राजहंसः, ललाटतटन्यस्ताञ्जलिना—ललाटतटे = भालप्रदेशे न्यस्तः = बद्धः, अञ्जलिः = करद्वयं येन स तेन तथाभूतेन शिरोबद्धाञ्जलिना द्वारपालेन—द्वारं = प्रतिहारं पालयति = रक्षति इति द्वारपालः तेन द्वारपालेन = प्रतिहारेण व्यज्ञापि = न्यवेदि। देव! = महाराज! देवदर्शनलालसमानसः—देवस्य = भवतः सन्दर्शने = सम्यक्तयाऽवलोकने लालसम् = अभिलाषि मानसं = मनो यस्य सः। कोऽपि = एकः देवेन = भवता, विरच्यां = कर्तव्याम्, अर्चनां = पूजामर्हतीति विरच्यार्चनार्हः यतिः = संन्यासी, द्वारदेशं = प्रतिहारम्, अध्यास्ते = अलङ्करोति।

(२१) तदनुज्ञातेन = तेन राज्ञा, राजहंसेन अनुज्ञातेन, आज्ञप्तेन अनुमतेन, तेन = द्वारपालेन, स संयमी संन्यासी नृपसमीपम् = राजनिकटम्, आनायि = प्रापितः।

(२२) भूपतिः = राजा राजहंसः, आयान्तं = आगच्छन्तम्, तं = संयमिनम्, विलोक्य = दृष्ट्वा, सम्यग्ज्ञाततदीयगूढचारभावः—सम्यक् = सुष्ठु ज्ञातः अवगतः तदीयः = तत्सम्बन्धी, गूढः = गुप्तः, चारभावः = चारत्वं, पस्पशभावः येन सः तथोक्तः। निखिलं सकलम्, अनुचरनिकरम्—नुचराणां = सेवकानां निकरं = समूहं, विसृज्य = मुक्त्वा। मन्त्रिजनसमेतः—मन्त्रिजनेन = सचिवजनेन समेतः = युक्तः भूपतिः, प्रणतं = कृतनमस्कारम्, विनम्रम् एनं = यतिम् मन्दहासं = मन्दः हासः यस्मिन् कर्मणि तत् मन्दहासम् = ईषद्धसन्, अभाषत = उवाच। ननु तापस! = हे

मन्त्रियों और पुरोहितों के साथ राजसभा में सिंहासनासीन थे, उसी समय द्वारपाल ने आकर सिर झुका दोनों हाथों से प्रणाम करके निवेदन किया—स्वामिन्! आपके दर्शन तथा पूजा करने के योग्य एक संन्यासी आपके दर्शनार्थ द्वार पर उपस्थित है।

(२१) राजा की आज्ञा पाकर द्वारपाल उस सन्यासी को राजसभा में राजा के पास लाया।

(२२) राजा ने उसे आते हुए देखकर भलीभाँति उसके गुप्तचर भाव को जानकर सभी नौकरों को वहाँ से हटा दिया और मन्त्रियों के साथ प्रणाम करते हुए उस संन्यासी से हँसकर पूछा—हे यतिवर! इस कपट वेश में देशों का भ्रमण करते हुए आपने जो कुछ देखा सुना हो, उसे बताने का कष्ट करें।

(२३) तेनाभापि भूभ्रमणबलिना प्राञ्जलिना-'देव! शिरसि देवस्याज्ञामादायैनं निर्दोषं वेषं स्वीकृत्य मालवेन्द्रनगरं प्रविश्य तत्र गूढतरं वर्तमानस्तस्य राज्ञः समस्तमुदन्तजातं विदित्वा प्रत्यागमम्।

(२४) मानी मानसारः स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये संपराये भवतः पराजयमनुभूय वैलक्ष्यलक्ष्यहृदयो वीतदयो महाकालनिवासिनं कालीविलासिनमनश्वरं महेश्वरं समाराध्य तपः प्रभावसन्तुष्टादस्मादेकवीराराति‌घ्नीं भयदां गदां लब्ध्वात्मान-

---

तपस्विन्! देशं = देशान्, सापदेशम् = सकपटम् यतिवेषच्छलेन, भ्रमन् = पर्यटन्, तत्र तत्र = तेषु-तेषु देशेषु, भवदभिज्ञातम् = भवताऽवगतम्, कथयतु = वर्णयतु।

(२३) भूभ्रमणबलिना-भुवः = पृथिव्याः भ्रमणे = पर्यटने यद् बलं = सामर्थ्यं तदस्यास्तीति भूभ्रमणबली तेन भूभ्रमणबलिना, प्राञ्जलिना = बद्धाञ्जलिना, तेन = संन्यासिना, आभाषि = कथितम्-देव! = स्वामिन्! देवस्य = भवतः, आज्ञाम् = आदेशम्, शिरसि = मस्तके, आदाय = गृहीत्वा, एवं निर्दोषं = दोषरहितम्, वेषं = रूपम्, यतिस्वरूपम्, स्वीकृत्य = अङ्गीकृत्य, मालवेन्द्रनगरं = मानसारपुरम्, प्रविश्य = गत्वा, तत्र = मालवेन्द्रनगरे, गूढतरं = प्रच्छन्नतरम् यथा स्यात्तथा वर्तमानः = तिष्ठन्, तस्य राज्ञः = मानसारस्य भूपतेः, समस्तं = सम्पूर्णम्, उदन्तजातम् = वृत्तान्तसमूहं प्रवृत्तिसमूहम्, विदित्वा = ज्ञात्वा, प्रत्यागमम् = प्रतिनिवृत्तः, अहमिति शेषः।

(२४) मानी = अभिमानी, मानसारः = मालवेन्द्रः, स्वसैनिकानां = निजभटानाम्, आयुष्मत्तायाः = आयुष्यस्य, अन्तरायः = विघ्नः तस्मिन् स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये = निजसैन्यसंहारकारिणि, संपराये = युद्धे, भवतः = त्वत्तः, पराजयं = पराभवम्, अनुभूय वैलक्ष्यलक्ष्यहृदयः-वैलक्ष्यस्य = लज्जाया लक्ष्यं विषयीभूतं हृदयं यस्य सः तथोक्तः, वीतदयः = निर्दयः महाकालनिवासिनम् = महाकाले तदाख्यस्थाने दक्षिणदेशस्थिततीर्थविशेषे उज्जयिनीतिविख्याते निवासोऽस्यास्तीति महाकालनिवासी तं महाकालनिवासिनम्, कालीविलासिनं = पार्वतीवल्लभम्, अनश्वरं = विनाशरहितम्, महेश्वरं = भगवन्तं सदाशिवम्, समाराध्य संसेव्य, तपः-

---

(२३) पृथ्वी पर भ्रमण करने में समर्थ उस सन्यासी ने हाथ जोड़कर कहा—स्वामिन्! आपकी आज्ञा को शिरोधार्य करके मैं इस निर्दोष वेश को धारण कर मालवराज मानसार के नगर में प्रविष्ट हुआ, वहाँ गुप्त रूप से निवास करते हुए उस राजा के समस्त समाचार को जानकर मैं वापस लौटा हूँ।

(२४) अभिमानी मानसार अपने सैनिकों की आयु को नाश करनेवाले संग्राम में आपसे पराजित होकर लज्जित हो गया। अतः खिन्न एवं निर्दय होकर महाकाल =

मप्रतिभटं मन्यमानो महाभिमानो भवन्तमभियोक्तुमुद्युङ्क्ते। ततः परं देव एव प्रमाणम्' इति।

(२५) तदालोच्य निश्चिततत्कृत्यैरमात्यै राजा विज्ञापितोऽभूत्–देव! निरुपायेन देवसहायेन योद्धुमरातिरायाति। तस्मादस्माकं युद्धं साम्प्रतमसाम्प्रतम्, सहसा दुर्गसंश्रयः कार्यः' इति।

(२६) तैर्बहुधा विज्ञापितोऽप्यखर्वेण गर्वेण विराजमानो राजा तद्वाक्यमकृत्य

प्रभावसन्तुष्टात्–तपसः प्रभावेण=तपस्याबलेन सन्तुष्टात्=प्रीतात्, अस्मात्=महेश्वरात्, एकवीरारातिघ्नीं–एकं=प्रधानं वीरम्=बलिष्ठम् अरातिं=शत्रुं हन्तीति ताम् तथाभूताम्, भयदां=भीतिप्रदाम्, गदां–अस्त्रविशेषम् लब्ध्वा=प्राप्य, आत्मानम्, अप्रतिभटं=नास्ति प्रतिभटः=प्रतिद्वन्द्वी यस्य स तम्, मन्यते इति मन्यमानः, महाभिमानः–महान्=अतिशयितः, अभिमानः=अहङ्कारो यस्य स महाभिमानः, भवन्तं=देवम्, अभियोक्तुं=आक्रमितुम्, उद्युङ्क्ते=उद्यतो भवति। अतः परं=एतदनन्तरम्, देवः=भवानेव, प्रमाणं=अत्र विषये कर्तव्यतानिर्णायकः।

(२५) तत्=गुप्तचरोक्तम्, आलोच्य=विचार्य, निश्चिततत्कृत्यैः—निश्चितं=निर्णीतं तत्र=शत्रुविषये यत् कृत्यं=करणीयम् यैः ते तैः तथोक्तैः। अमात्यैः=मन्त्रिभिः राजा=राजहंसः, विज्ञापितः=निवेदितः, अभूत्=जातः। देव!=राजन्!, निरुपायेन–निर्=नास्ति, उपायः=प्रतिकारः, प्रतिविधानं यस्य स तेन प्रतिविधातुमशक्येन, देवसहायेन–देवः=ईश्वर एव सहायः सहकारी तेन तथाविधेन=देवबलेन। अरातिः=शत्रुः योद्धुं=प्रहर्तुम्, आयाति=आगच्छति। तस्मात् कारणात्, अस्माकं=मगधदेशरक्षकाणाम्, युद्धं=संग्रामः, साम्प्रतम्=अधुना, असाम्प्रतम्=अयुक्तम्, सहसा=शीघ्रम्, दुर्गसंश्रयः=दुर्गावलम्बनम्, दुर्गप्रवेशः, कार्यः=कर्तव्यः।

(२६) तैः=मन्त्रिभिः, बहुधा=बहुप्रकारेण, विज्ञापितोऽपि=निवेदितोऽपि

उज्जयिनी निवासी पार्वतीपति अनश्वर भगवान् शङ्कर की आराधना करने लगा। उसकी आराधना से प्रसन्न होकर भगवान् शङ्कर ने उसे एक वीरशत्रु प्रधानवीर=सेनापति को मारने वाली भयङ्कर गदा दे दी है, जिससे वह अभिमानपूर्वक आपके ऊपर चढ़ाई करने की तैयारी कर रहा है। इसके बाद क्या करना चाहिए, इसे आप स्वयं विचार कर लें।

(२५) इस वृत्तान्त को सुनकर शत्रु के विषय में कर्तव्य का निश्चय करके मन्त्रियों ने विचार करके राजा से निवेदन किया—स्वामिन्! शत्रु ने निरुपाय होकर दैव की शरण ली है और युद्ध करने आ रहा है। इसलिए इस समय हमारा युद्ध करना ठीक नहीं है। ऐसे समय पर किले में छिपकर रहना सर्वथा श्रेयस्कर होगा।

(२६) मन्त्रियों के बारबार समझाने पर भी राजा अपने पराक्रम के 'गर्व से उन्

मित्यनादृत्य प्रतियोद्धुमना बभूव।

(२७) शितिकण्ठदत्तशक्तिसारो मानसारो योद्धृमनसामग्रीभूय सामग्रीसमेतोऽक्लेशं मगधदेशं प्रविवेश।

(२८) तदा तदाकर्ण्य मन्त्रिणो भूमहेन्द्रं मगधेन्द्रं कथंचिदनुनीय रिपुभिरसाध्ये विन्ध्याटवीमध्येऽवरोधान्मूलबलरक्षितान्निवेशयामासुः।

(२९) राजहंसस्तु प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीव्रगत्या निर्गत्याधिकरुषं द्विषं रुरोध।

अपि अखर्वेण = महता, गर्वेण = अभिमानेन, विराजमानः=युक्तः, राजा = राजहंसः, तद्वाक्यं = तेषां वचनम्, अकृत्यम् = अननुष्ठेयम् कर्तुमनुचितम्, इति अनादृत्य = तिरस्कृत्य, अस्वीकृत्य, प्रतियोद्धुमनाः = युद्धाभिलाषी बभूव।

(२७) शितिकण्ठदत्तशक्तिसारः—शितिकण्ठेन = शिवेन दत्ता = अर्पिता, शक्तिप्रहरणशस्त्रविशेष एव सारः = बलं यस्य स तथोक्तः, योद्धृमनसाम् = युद्धार्थिनाम्, अग्रीभूय = अग्रेसरो भूत्वा, सामग्रीसमेतः—सामग्र्या समेतः, सामग्रीसमेतः = युद्धोपकरणसमेतः, अक्लेशं = अनायासम् यथा स्यात्तथा, मगधदेशं = मगधराजधानीम्, प्रविवेश = प्रविष्टः।

(२८) तदा = मानसारागमनानन्तरम्, तत् = आगमनवृत्तान्तम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, मन्त्रिणः = अमात्याः, भूमहेन्द्रं = भुवि महेन्द्रम्, मगधेन्द्रं = मगधाधिपं राजहंसम् कथञ्चित् = यत्नपूर्वकम्, अनुनीय = मानयित्वा, रिपुभिः = शत्रुभिः, असाध्ये = दुष्प्रवेश्ये, विन्ध्याटवीमध्ये = विन्ध्यवनमध्ये, अवरोधान् = राजस्त्रियः शुद्धान्तान् ('शुद्धान्तश्चावरोध' इति—अमरसिंहः) मूलबलरक्षितान्—मूलबलेन = कुलक्रमागतविश्वस्तैः सैन्यैः, रक्षितान् = गुप्तान् विधाय, निवेशयामासुः = प्रेषयामासुः।

(२९) राजहंस = मगधाधिपस्तु, प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतः—प्रशस्तैः =

वाक्यों को न माना और लड़ने को तैयार हो गया।

(२७) भगवान् शङ्कर द्वारा अमोघ शक्ति के बल पर मानी मानसार युद्धाभिलाषी समस्त वीरों में प्रमुख होकर युद्धोपयोगी सामग्रियों से सुसज्जित हो सहज ही मगध देश में घुस आया।

(२८) मानसार के आगमन की चर्चा सुनकर मन्त्रियों ने पृथ्वी के स्वामी इन्द्र के तुल्य मगधेन्द्र राजहंस को किसी प्रकार समझा-बुझाकर राजमहल की रानियों को मुख्य सेना की संरक्षता में शत्रुओं से अगम्य विन्ध्याचल के वन में भिजवा दिया।

(२९) राजा राजहंस ने महाबलशाली भयरहित सेना के साथ बड़ी तीव्र गति=शीघ्रता से

(३०) परस्परबद्धवैरयोरेतयोः शूरयोस्तदा तदालोकनकुतूहलागतगगनचराश्चर्यकारणे रणे वर्तमाने जयाकाङ्क्षी मालवदेशरक्षी विविधायुधस्थैर्यचर्याञ्चितसमरतुलितामरेश्वरस्य मगधेश्वरस्य तस्योपरि पुरा पुरारातिदत्तां गदां प्राहिणोत्।

(३१) निशितशरनिकरशकलीकृतापि सा पशुपतिशासनस्यावन्ध्यतया सूतं निहत्य रथस्थं राजानं मूर्छितमकार्षीत्।

अत्युत्कृष्टैः वीतदैन्यैः = त्यक्तकार्पण्यैः, निर्भयैः सैन्यैः समेतः = युक्तः, तीव्रगत्या = महता वेगेन, निर्गत्य = निःसृत्य, अधिकरुषं = अधिका रुट् यस्य सः, तं तथाविधं = अतिक्रुद्धं द्विषं = शत्रुं मानसारम्, रुरोध = न्यवारयत्।

(३०) परस्परबद्धवैरयोः = परस्परं बद्धं वैरं ययोस्तौ तयोः, अन्योन्यकृतवैरयोः, तयोः = राजहंस-मानसारयोः, शूरयोः = वीरयोः, तस्य = युद्धस्य, अवलोकने = दर्शने, यत् कुतूहलं = कौतुकं तेन आगतानां = युद्धक्षेत्रसमुपस्थितानाम्, गगनचराणाम् = आकाशविहारिणाम्, आश्चर्यकारणे = विस्मयहेतुभूते, जयाकाङ्क्षी—जयमाकाङ्क्षते इति जयाकाङ्क्षी = विजयाभिलाषी, मालवदेशरक्षी = मालवदेशरक्षिता मानसारः, विविधानां = अनेकप्रकाराणाम् आयुधानां = अस्त्राणाम्, स्थैर्यचर्या = स्थैर्येण, अञ्चिते = पूजिते समरे तुलितः = समीकृतः, अमरेश्वरः = इन्द्रो येन स तस्य = तथाविधस्य, मगधेश्वरस्य = मगधनरेश्वरस्य राजहंसस्य उपरि, पुरा = पूर्वम्, पुरारातिदत्ताम्—पुरारातिना = भगवता शिवेन दत्तां = समर्पिताम्, गदाम् = अस्त्रविशेषम् प्राहिणोत् = प्राहरत्।

(३१) निशितेन = तीक्ष्णेन, शरनिकरेण = बाणसमूहेन, शकलीकृता = खण्डिता अपि, सा = गदा, पशुपतिशासनस्य—पशुपतेः = भगवतः शिवस्य, शासनस्य = आज्ञाया अवन्ध्यतया = अप्रतिहततया, सूतं = सारथिम्, निहत्य = विनाश्य, रथस्थं स्यन्दने वर्तमानम्, राजानं = राजहंसम्, मूर्च्छितं = विसंज्ञम्, अकार्षीत् = अकरोत्।

अपनी राजधानी से बाहर निकलकर [illegible] क्रोध से आते हुए शत्रु मानसार को घेर लिया।

(३०) परस्पर बद्धवैर उन दोनों वीरों के संग्राम को उत्कण्ठावश देखने [illegible] उपस्थित आकाशगामी देवताओं को भी आश्चर्य होने लगा। अन्त में विजय की इच्छा [illegible] मालवाधीश मानसार ने अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्रों के प्रयोग में कुशल एवं इन्द्र के समान योद्धा मगधेश्वर राजहंस के ऊपर भगवान् शङ्कर से प्राप्त उस गदा को चला दिया।

(३१) यद्यपि राजहंस के तीखे बाणसमूहों ने उस गदा को टुकड़े-टुकड़े कर डा[illegible] फिर भी भगवान् शङ्कर की अवन्ध्य आज्ञा से उस गदा ने सारथी को मारकर रथ [illegible] बैठे हुए राजा को मूर्छित कर दिया।

(३२) ततो वीतप्रग्रहा अक्षतविग्रहा वाहा रथमादाय दैवगत्यान्तःपुरशरण्यं महारण्यं प्राविशन् ।

(३३) मालवनाथो जयलक्ष्मीसनाथो मगधराज्यं प्राज्यं समाक्रम्य पुष्पपुरमध्यतिष्ठत् ।

(३४) तत्र हेतिततिहतिश्रान्ता अमात्या दैवगत्यानुत्क्रान्तजीवितासिशान्तवातलब्धसंज्ञाः कथञ्चिदाश्वस्य राजानं समन्तादन्वीक्ष्यानवलोकितवन्तो दैन्यवन्तो देवीमवापुः ।

---

(३२) ततः = तदनन्तरम्, वीतप्रग्रहाः—वीताः = मुक्ताः प्रग्रहाः = रश्मयः येषां ते वीतप्रग्रहाः, अक्षतविग्रहाः—न क्षतः अक्षतः, अक्षतः = अनष्टः, विग्रहः = शरीरं येषां ते अक्षतविग्रहाः । वाहाः = अश्वाः वाजिनः, रथं = स्यन्दनम्, आदाय = नीत्वा, दैवगत्या = दैवयोगेन, अन्तःपुरशरण्यं—शरणे साधु शरण्यम् अन्तःपुरस्य शरण्यम् = आश्रयभूतम् अन्तःपुरशरण्यं = अवरोधरक्षणस्थानम्, महारण्यं = विन्ध्याटवीम्, प्राविशन् = प्रविष्टाः ।

(३३) मालवनाथः = मालवेन्द्रो मानसारः, जयलक्ष्मीसनाथः = विजयश्रीसंयुक्तः, प्राज्यं = विशालं मगधराज्यं = मगधराज्यप्रदेशं, समाक्रम्य = सम्यक् क्रान्त्वा, पुष्पपुरं = पाटलिपुत्रम्, अध्यतिष्ठत् = न्यवसत् ।

(३४) तत्र = विन्ध्याटवीमध्ये, हेतिततिहतिश्रान्ताः—हेतीनां = अस्त्राणाम्, ततिभिः = समुदायैः, हत्या = प्रहारेण, श्रान्ताः = क्लान्ताः, अमात्याः = मन्त्रिणः दैवगत्या = दैवयोगेन, अनुत्क्रान्तं = न निर्गतं जीवितं = प्राणा येषां ते अनुत्क्रान्तजीविताः = अत्यक्तप्राणाः, निशान्ते=रात्र्यन्ते यो वातः–वायुः तेन निशान्तवातेन= प्राभातिकवायुना, लब्धाः = पुनः प्राप्ता, संज्ञा = चैतन्यं यैस्ते निशान्तवातलब्धसंज्ञाः = प्राप्तचेतनाः, कथञ्चिदाश्वस्य—कथञ्चिदाश्वस्ताः भूत्वा, राजानं—राजहंसम्,

---

(३२) सारथी के मरते ही अक्षत शरीरवाले, बेलगाम घोड़े रथ को ले भागे, दैवयोग से रथ खींचते-खींचते घोड़े उसी वन में आ पहुँचे जहाँ विश्वस्त सेना की रक्षा में अन्तःपुर की रानियां थीं ।

(३३) विजयलक्ष्मी को प्राप्तकर मालवाधीश मानसार भी विशाल मगध राज्य को जीतकर समृद्ध मगध की राजधानी पुष्पपुर=पाटलिपुत्र में प्रवेश कर राज्यशासन करने लगा ।

(३४) युद्ध में शस्त्रप्रहार से मूर्छित एवं सौभाग्यवश जीवित रहनेवाले मन्त्रिगण प्रातःकालीन शीतल पवन के स्पर्श से उद्बुद्ध होकर, स्वस्थ हो गये और चारों ओर राजा राजहंस को खोजने लगे, किन्तु जब वे उन्हें न पा सके तब अत्यन्त खिन्न होकर बिलखते हुए रानी के पास पहुँचे ।

(३५) वसुमती तु तेभ्यो निखिलसैन्यक्षतिं राज्ञोऽदृश्यत्वं चाकर्ण्योद्विग्ना शोकसागरमग्ना रमणानुगमने मतिं व्यधत्त।

(३६) 'कल्याणि, भूरमणमरणमनिश्चितम्। किञ्च दैवज्ञकथितो मथितोद्धतारातिः सार्वभौमोऽभिरामो भविता सुकुमारः कुमारस्त्वदुदरे वसति। तस्मादद्य तव मरणमनुचितम्' इति भूषितभाषितैरमात्य-पुरोहितैरनुनीयमानया तया क्षणं क्षणहीनया तूष्णीमस्थायि।

समन्तात् = चतुर्दिक्षु, अनवलोकितवन्तः = अदृष्टवन्तः। दैन्यवन्तः = अतिदुःखिताः, विषण्णवन्तः, देवीं = राजमहिषीं वसुमतीम्, अवापुः = प्रापुः।

(३५) वसुमती = राजहंसमहिषी, तेभ्यः = मन्त्रिभ्यः, निखिलसैन्यक्षतिम् = सकलसेनाविनाशम्, राज्ञः = राजहंसस्य, च = तथा, अदृश्यत्वं = अन्तर्धानं गुप्तत्वं आकर्ण्य = श्रुत्वा, उद्विग्ना = व्याकुला शोकसागरनिमग्ना = महाशोके बूडिता सती रमणानुगमने = राजहंसानुसरणे, मतिं = बुद्धिम्, व्यधत्त = चकार, निश्चितवती।

(३६) कल्याणि = मङ्गलमयि! देवि! भूरमणमरणम् = पृथिव्या वल्लभस्य राज्ञः, मरणं- मृत्युः, अनिश्चितम्—अनिर्णीतम्। अस्माकं राजा जीवति न वेति सन्देहः किञ्च = अपि च दैवज्ञकथितः—दैवज्ञैः = ज्योतिषिकैः कथितः = आदिष्टः, मथितोद्धतारातिः—मथितः = उन्मूलितः, उद्धतः—दृप्तः अरातिः—शत्रुः येन सः तथोक्तः। सार्वभौमः—सर्वायाः भूमेः ईश्वरः सार्वभौमः = चक्रवर्ती, अभिरामः = मनोहरः, सुकुमारः = कोमलः, कुमारः = राजपुत्रः, त्वदुदरे = तव गर्भे, वसति = वर्तते। तस्मात् = गर्भवत्त्वात् कारणात्, अद्य = इदानीम्, तव = भवत्याः मरणं = मृत्युः अनुचितम् = अशोभनम्। इति = इत्थम्, भूषितभाषितैः—भूषितं = मधुरम्, भाषितं कथनं येषां ते तादृशैः, अमात्यपुरोहितैः = मन्त्रिपुरोधाभिः अनुनीयमानया =

---

(३५) महारानी वसुमती उन मन्त्रियों के मुखों से सारी सेना का विनाश तथा राजा की अदृश्यता की बातें सुनकर अत्यन्त दुःखी हुईं और उद्विग्न होकर शोकसागर में निमग्न होकर उन्होंने अपने पति राजहंस का अनुगमन करने का निश्चय कर लिया अर्थात् वह प्राण त्यागने को उद्यत हो गयीं।

(३६) प्राण त्यागने को उद्यत रानी को देखकर मन्त्रियों ने सुन्दर वचनों से समझाते हुए कहा—'देवि! राजा का मरना अभी निश्चित नहीं है और ज्योतिषियों ने बताया है कि आपके गर्भ में शत्रुओं का दमन करनेवाला चक्रवर्ती सुकुमार राजकुमार वर्तमान है अतः इस समय आपका मरना उचित नहीं है।' इस प्रकार पुरोहित एवं मन्त्रियों के मनोहर वचनों को सुनकर रानी वसुमती हर्षविहीन होकर कुछ भी उत्तर न दे सकीं और चुप होकर बैठ गयीं।

(३७) अथार्धरात्रे निद्रानिलीननेत्रे परिजने विजने शोकपारावारमपारमुत्तर्तुमशक्नुवती सेनानिवेशदेशं निःशब्दलेशं शनैरतिक्रम्य यस्मिन् रथस्य संसक्ततया तदानयनपलायनश्रान्ता गन्तुमक्षमाः क्षमापतिरथ्या पथ्याकुलाः पूर्वमतिष्ठंस्तस्य निकटवटतरोः शाखायां मृतिरेखायामिव कयचिदुत्तरीयार्द्धेन बन्धनं मृतिसाधनं विरच्य मर्तुकामाभिरामा वाङ्माधुरीविरसीकृतकलकण्ठकण्ठा साश्रुकण्ठा

अनुरुध्यमानया तया = वसुमत्या, क्षणं = मुहूर्तम्, क्षणहीनया—क्षणेन = उत्सवेन हीना = रहिता तया क्षणहीनया = उत्सवरहितया निरुत्सवया, तूष्णीम्, मौनम्, अस्थायि = स्थितम् ।

(३७) अथ = अनन्तरम्, अर्द्धरात्रे = निशीथे, निद्रानिलीननेत्रे—निद्रया निलीने = परिमीलिते नेत्रे = लोचने यस्य स तस्मिन् निद्रानिलीननेत्रे = प्रसुप्ते, परिजने = परिचारकवर्गे, विजने = निर्जने, एकान्ते, शोकपारावारं = शोकसागरम्, अपारम् = दुस्तरम् उत्तर्तुं = उल्लङ्घयितुम् अशक्नुवती = असमर्था सती सेनानिवेशदेशं—सेनानिवेशस्य=शिविरस्य, देशं=प्रदेशम्, निर्=नास्ति शब्दस्य लेशः=लवोऽपि यस्मिंस्तद् यथा स्यात्तथा निःशब्दलेशम्, शनैः=मन्दम्, अतिक्रम्य=निर्गत्य, यस्मिन्=वटतरौ रथस्य = स्यन्दनस्य संसक्ततया = सलग्नतया तदानयनपलायनश्रान्ता = तस्य = राजहंसस्य राज्ञः, आनयने=वहने पलायने, च श्रान्ताः=परिश्रान्ताः अत एव गन्तुमक्षमाः = चलितुमसमर्थाः, क्षमापतिरथ्याः—क्षमापतेः = राजहंसस्य रथ्याः = रथवाहकाः, वाहाः=अश्वाः, पथि = मार्गे, आकुलाः=दूरगमनेनातिक्लान्ताः, पूर्वं = प्राक्, अतिष्ठन् = स्थिता आसन्, तस्य निकटवटतरोः=समीपस्थवटवृक्षस्य, शाखायां= शिफायाम्, मृतिरेखायाम्—मृतेः = मरणस्य रेखायाम् = चिह्नरूपायाम्, कयचित् = कुत्रचित् उत्तरीयार्द्धेन = अञ्चलेन, बन्धनम् = पाशम्, मृतिसाधनं = मरणसाधकम्, विरच्य = निर्माय, मर्तुकामः—मर्तुं कामः=अभिलाषो यस्या सा मर्तुकामा मरणाभिलाषिणी, अभिरामा=परमसुन्दरी, वाचां = गिरां वाणीनाम्, माधुर्या = माधुर्येण विरसीकृतः = नीरसीकृतः, कलकण्ठस्या—कोकिलस्य कण्ठो यया सा तथोक्ता तस्या साश्रुकण्ठा = अश्रुभिः सह वर्तत इति साश्रुः, साश्रुः कण्ठो यस्याः सा साश्रुकण्ठा=

(३७) अनन्तर आधी रात में नौकरों के सो जाने पर एकान्त में अपार शोक-सागर को पार करने में असमर्थ रानी वसुमती चुपचाप धीरे धीरे उस स्थान पर पहुँच गयीं, जहाँ पर राजा के रथ को लिये हुए घोड़े पहिए के धँस जाने के कारण राजहंस को लाने में भागने से थककर रुके हुए व्याकुल खड़े थे। सुन्दर रूपवाली रानी वसुमती उसी के समीप मृत्यु की रेखा जैसी लगनेवाली एक वटवृक्ष की शाखा में अपनी चादर की फांसी की रस्सी बनाकर मरने के लिए तत्पर हो गयी और कोयल के स्वर को भी तिरस्कृत करनेवाले अपने

व्यलपत्—'लावण्योपमितपुष्पसायक, भूनायक, भवानेवभाविन्यपिजन्मनि वल्लभो भवतु' इति।

(३८) तदाकर्ण्य नीहारकरकिरणनिकरसंपर्कलब्धावबोधो मागधोऽगाधरुधिरविक्षरणनष्टचेष्टो देवीवाक्यमेव निश्चिन्वानस्तन्वानः प्रियवचनानि शनैस्तामाह्वयत्।

(३९) सा ससंभ्रममागत्यामन्दहृदयानन्दसंफुल्लवदनारविन्दा तमुपोषिताभ्यामिवानिमिषिताभ्यां लोचनाभ्यां पिबन्ती विकस्वरेण स्वरेण पुरोहितामात्यजनमुच्चैराहूय तेभ्यस्तमदर्शयत्।

बाष्पपूर्णकण्ठा सगद्गदस्वरा, व्यलपत् = विलपितवती रुरोद, लावण्योपमितपुष्पसायकः—लावण्येन = शरीरसौन्दर्येण उपमितः = तुलितः पुष्पसायकः = पुष्पधन्वा, कामदेवः, येन स लावण्योपमितपुष्पसायकः तत्सम्बुद्धौ हे लावण्योपमितपुष्पसायक ! भूनायक !—भुवः नायकः = पतिः भूनायकः, तत्सम्बुद्धौ हे भूनायक ! = भूपते ! भवान् एव, भाविनि = भविष्यति, जन्मनि = जनौ, वल्लभः = पतिः, भवतु = अस्तु जायताम्।

(३८) तत् = वसुमत्या विलपनम्, नीहाराः = शीतलाः, कराः = किरणा यस्य स नीहारकरः = चन्द्रः तस्य किरणनिकरस्य = मयूखसमूहस्य सम्पर्केण = संस्पर्शेन, लब्धः—प्राप्तः, अवबोधः—चैतन्यं येन सः तथोक्तः, मागधः=मगधदेशाधिपतिः, अगाधस्य = अत्यधिकस्य, रुधिरस्य = शोणितस्य, विक्षरणेन = विशेषतोऽपगमनेन, नष्टा=अपगता चेष्टा = चैतन्यं यस्य सः तथोक्तः, देवीवाक्यमेव = वसुमतीविलापमेव निश्चिन्वानः = देव्येवेयं विलपति नान्येति निश्चयं कुर्वन्, प्रियवचनानि = मधुरालापान्, तन्वानः — विस्तारयन् तां—देवीं वसुमतीम्, आह्वयत् = आकारयत्।

(३९) ससंभ्रमे = सत्वरमेव, आगत्य = निकटवर्तिनी भूत्वा, अमन्देन = प्रचुरेण हृदयानन्देन सम्फुल्लं = विकसितं वदनारविन्दं = मुखारविन्दम्, यस्याः सा अमन्दहृदयानन्दसम्फुल्लवदनारविन्दा, तं = राजानं राजहंसम्, उपोषिताभ्यां = दर्शनार्थमुत्कण्ठिताभ्याम्, लोचनाभ्यां = नयनाभ्याम्, पिबन्ती — सबहुमानमव-

---

कोमल मधुर कंठ से गद्गद होकर विलाप करती हुई कहने लगी—अपने शरीर के सौन्दर्य से कामदेव की तुलना करनेवाले राजन् ! आगे के जन्म में भी आप ही मेरे प्राणपति हों।

(३८) अधिक रुधिर निकल जाने के कारण बेहोश किन्तु चन्द्रमाकी शीतल किरणों के स्पर्श से चेतना को प्राप्त हुए राजा राजहंस ने रानी के विलाप को सुनकर निश्चय किया कि यह स्वर मेरी वल्लभा रानी वसुमती का ही है और धीरे से मीठी आवाज में उसे बुलाया।

(३९) राजा की ध्वनि से उत्पन्न अत्यन्त आनन्द से विकसित मुखकमलवाली रानी घबरायी सी दौड़कर आयी और देर तक आँखें भरकर राजा को देखने लगी, फिर ऊँचे

(४०) राजा निटिलतटचुम्बितनिजचरणाम्बुजैः प्रशंसितदैवमाहात्म्यैरमात्यै-रभाणि—'देव, रथ्यचयः सारथ्यपगमे रथं रभसादरण्यमनयत्' इति ।

(४१) 'तत्र निहतसैनिकग्रामे संग्रामे मालवपतिनाराधितपुरारातिना प्रहितया गदया दयाहीनेन ताडितो मूर्छामागत्यात्र वने निशान्तपवनेन बोधितोऽभवम्' इति महीपतिरकथयत् ।

लीकयन्ती, विकस्वरेण = अतिस्पष्टेन, स्वरेण = कण्ठेन, पुरोहितामात्यजनं = मन्त्रि-पुरोधाजनम्, उच्चैः आहूय = आकार्य, तेभ्यः = मन्त्रिपुरोधेभ्यः, तं = राजानं राजहंसम्, आदर्शयत् = दर्शितवती ।

(४०) राजा = राजहंसः, निटिलतटेन = भालस्थेन, चुम्बितं = स्पृष्टं, निजचरणाम्बुजं स्वपादपद्मं यैस्ते तैः, प्रशंसितदैवमाहात्म्यैः—प्रशंसितं = स्तुतं दैवस्य = भाग्यस्य माहात्म्यं = प्रभावो यैस्तै तैः तथोक्तैः, अमात्यैः = मन्त्रिभिः, अभाणि = अवादि, देव ! = स्वामिन् ! रथ्यचयः—रथ्यानां = अश्वानाम्, चयः = समूहः सारथ्यपगमे—सारथेः = सूतस्य अपगमे = विनाशे, रथम् = स्यन्दनम्, रभसाद् = हठात्, वेगात्, अरण्यं = वनम्, अनयत् = नीतवान् ।

(४१) तत्र = संग्रामे, निहतसैनिकग्रामे—निहतः = निःशेषं विनष्टः सैनिकानां = योधानाम्, ग्रामः = समूहो यस्मिन् स तस्मिन् संग्रामे = समरे आराधित-पुरारातिना—आराधितः = सन्तोषितः, पुरारातिः = महादेवः येन स तेन आराधितपुरारातिना = उपासितशिवेन दयाहीनेन = निर्दयेन, मालवपतिना = मालवेन्द्रेण मानसारेण, प्रहितया = प्रक्षिप्तया गदया, ताडितः = विद्धः अहम् मूर्छां = मोहम्, आगत्य = प्राप्य, अत्र वने = विन्ध्याटव्याम्, निशान्तपवनेन—निशायाः = रजन्याः, अन्तः = शेषः तस्य पवनेन = वायुना प्रातःकालिकसमीरणेन, बोधितः = जागरितः, अभवम् = जातः । इति = इत्थम्, महीपतिः = राजा राजहंसः, अकथयत् ।

स्वर से पुरोहित एवं मन्त्रियों को बुलाकर उन्हें उनका दर्शन कराया ।

(४०) मन्त्रियों ने झुककर राजा का अभिवादन किया तथा प्रशंसापूर्वक परमेश्वर को धन्यवाद देते हुए आवेदन किया—महाराज ! ज्ञात होता है कि सारथी के निधन हो जाने पर घोड़ों ने बड़ी तेजी से रथ को लाकर इस स्थान वन में रख दिया ।

(४१) राजा ने कहा—संग्राम में सारी सेना के विनष्ट हो जाने पर मालवेश मानसार ने निर्दय हो शिवजी की कृपा से प्राप्त अमोघ गदा को मेरे ऊपर फेंक दिया, जिसके आघात से मैं मूर्छित हो गया और यहाँ प्रातःकालिक शीतल पवन-स्पर्श से मैं प्रतिबोधित हो गया ।

(४२) ततो विरचितमहेन मन्त्रिनिवहेन विरचितदैवानुकूल्येन कालेन शिबिरमानीयापनीताशेषशल्यो विकसित-निजाननारविन्दो राजा सहसा विरोपितव्रणोऽकारि।

(४३) विरोधिदैवधिक्कृतपुरुषकारो दैन्यव्याप्ताकारो मगधाधिपतिरधिकाधिरमात्यसंमत्या मृदुभाषितया तया वसुमत्या मत्या कलितया च समबोधि।

(४४) 'देव, सकलस्य भूपालकुलस्य मध्ये तेजोवरिष्ठो गरिष्ठो भवानन

---

(४२) ततः = तदनन्तरम्, विरचितमहेन — विरचितः = कृतः, महः येन तथाभूतेन उत्सवमनुतिष्ठता, मन्त्रिनिवहेन = आमात्यसमूहेन, विरचितदैवानुकूल्येन–विरचितं = सम्पादितम्, दैवस्य = भाग्यस्य आनुकूल्यम् = साहाय्यं येन सः तेन तादृशेन कालेन = समयेन, शिबिरं = सेनानिवेशस्थानम्, आनीय = उपस्थाप्य, अपनीताशेषशल्यः— अपनीतं = गात्रादपसारितम् अशेषं = समग्रम्, शल्यं = शङ्कुः यस्य स तथोक्तः, विकसितनिजाननारविन्दः— विकसितं = प्रसन्नं निजस्य = स्वस्य, मुखमेवारविन्दं = मुखकमलं यस्य स तथोक्तः, राजा = भूपतिः, सहसा = झटिति, विरोपितव्रणो–विरोपिता = औषधादिना चिकित्सिता शोपिताः, व्रणाः = क्षतप्रदेशाः यस्य स विरोपितव्रणः, आकारि = कृतः।

(४३) विरोधिना = प्रतिकूलेन, दैवेन = भागधेयेन, धिक्कृतः = तिरस्कृतः, पुरुषकारः = विक्रमः यस्य सः तथोक्तः, दैन्येन = पराभवदुःखेन, व्याप्तः = आक्रान्तः आकारः = स्वरूपं यस्य सः तादृशः, मगधाधिपतिः = मगधेश्वरो राजा राजहंसः, अधिकाधिः = अधिकः अतिशयेनाधिकः आधिः मानसी व्यथा यस्य सः अधिकाधिः, अमात्यसम्मत्या— अमात्यानां = मन्त्रिणाम्, संमत्या = विचारेण अनुमोदनक्रमेण, मृदुः = कोमलं भाषितं = यस्या सा तया वसुमत्या = राजमहिष्या कलितया = युक्तया मया च समबोधि = विज्ञापितः।

(४४) देव ! – राजन् ! सकलस्य = समग्रस्य भूपालकुलस्य = राजवंशस्य तेजोवरिष्ठः— तेजसा प्रतापेन, वरिष्ठः = श्रेष्ठः महत्तरः, गरिष्ठ = अतिशयेन गुरुः

---

(४२) पश्चात् मन्त्रियों ने अनेक प्रकार के उत्सव मनाये और राजा की प्राणरक्षा के निमित्त देवाराधना की तथा राजा को शिविर में लाकर अस्त्रों के व्रणों को औषध द्वारा समुचित उपचार से शीघ्र ही स्वस्थ कर दिया। राजा का मुख-कमल खिल उठा।

(४३) किन्तु प्रतिकूल भाग्य ने राजा के पुरुषार्थ को असफल कर दिया था जिससे राजा की मानसिक पीड़ा बढ़ गयी थी और वे सदा खिन्न रहा करते थे। मन्त्रियों की राय से तथा अपनी मनोहर वाणी से बुद्धिमती रानी वसुमती ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा।

(४४) 'स्वामिन् ! आप विश्व के वर्तमान राजाओं में प्रतापी एवं सर्वश्रेष्ठ होकर भी

विन्ध्यवनमध्यं निवसतीति जलबुद्बुदसमाना विराजमाना सम्पत्तडिल्लतेव सहसैवोदेति नश्यति च। तन्निखिलं दैवायत्तमेवावधार्य कार्यम्।

(४५) किञ्च पुरा हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्या असंख्या महीन्द्रा ऐश्वर्योपमितमहेन्द्रा दैवतन्त्रं दुःखयन्त्रं सम्यगनुभूय पश्चादनेककालं निजराज्यमकुर्वन्। तद्वदेव भवानभविष्यति। कंचन कालं विरचितदैवसमाधिर्विगलिताधिस्तिष्ठतु तावत्' इति।

विन्ध्यवनमध्यं, तिष्ठति = राज्यभ्रष्टो विन्ध्याटवीमध्यमाश्रयते, इति जलस्य = सलिलस्य बुद्बुदेन = विकारेण समाना = तुल्या विराजमाना = शोभमाना सम्पत् = राजलक्ष्मीः तडिल्लतेव = विद्युद्वल्लरीव, सहसा = अतर्किता, अकस्मात्, उदेति = आविर्भवति नश्यति, अदृश्यतां याति, तत् = तस्मात् कारणात्, निखिलं = सम्पूर्णम्, दैवायत्तम् = दैवाधीनम् एव अवधार्य = निश्चित्य कार्यम् = विधेयम् करणीयम्।

(४५) किञ्च = अपरञ्च, पुरा = पूर्वस्मिन् काले, हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्याः = हरिश्चन्द्र-रामचन्द्रौ मुख्यौ प्रधानौ येषां ते तथोक्ताः, असंख्याः = अगणिताः, महीन्द्राः = पृथ्वीपतयो राजानः, ऐश्वर्योपमितमहेन्द्राः—ऐश्वर्येण = सम्पत्त्या उपमितः = तुलितः, महेन्द्रः = देवराजो यैस्ते तथोक्ताः, दैवतन्त्रं = दैवायत्तम्, दुःखयन्त्रम् = दुःखचक्रम्। सम्यक् अनुभूय = उपभुज्य, पश्चात् = अनन्तरम्, अनेककालं = बहुकालम्, निजराज्यं = स्वकीयं राज्यम्, अकुर्वन् = कृतवन्तः। तद्वदेव = तथैव, भवान् भविष्यति, यथा हरिश्चन्द्रादयो राजानः पूर्वं महद्दुःखमनुभूय पश्चात् पुनरपि स्वं स्वं राजसुखादिकं प्राप्तवन्तः तथैव भवानपि निजं राज्यं प्राप्स्यतीति भावः। कञ्चन कालं = किञ्चित् समयम्, विरचितदैवसमाधिः—विरचितः = अनुष्ठितः कृतः दैवः = दैवोद्देश्यकः समाधिः = ध्यानं येन स तथोक्तः विगलिताधिः—विगलितः = विनष्टः अपगतः, आधिः = मनोदुःखम् यस्य सः विगलिताधिः तिष्ठतु = प्रतीक्षताम्, तावत् = तावदवधौ।

दैववश आज इस विन्ध्याचल के वन में निवास कर रहे हैं। इससे सिद्ध होता है कि राजलक्ष्मी जल के बुद्बुदों के समान है, जो बिजली की तरह से चमककर सहसा आती और चली जाती है।

(४५) महाराज प्राचीन काल में हरिश्चन्द्र, रामचन्द्र आदि असंख्य राजा, जो अपने ऐश्वर्य से इन्द्र की बराबरी कर रहे थे, वे भी अनेक दैवी यातनाओं को सहकर पश्चात् अधिक दिनों तक अपने राज्यसुख को भोगे थे, उन्हीं की तरह आप भी दुःखों को भोगकर भविष्य में राज्यसुख प्राप्त करेंगे। अतः धीरज धरें, दुःखों से घबराएँ नहीं, तब-तक शान्ति से दैवाराधन करते रहें और भाग्योदय की प्रतीक्षा में समय बिताते रहें।

(४६) ततः सकलसैन्यसमन्वितो राजहंसस्तपोविभ्राजमानं वामदेवनामानं तपोधनं निजाभिलाषावाप्तिसाधनं जगाम।

(४७) तं प्रणम्य तेन कृतातिथ्यस्तस्मै कथितकथ्यस्तदाश्रमे दूरीकृतश्रमे कञ्चन कालमुषित्वा निजराज्याभिलाषी मितभाषी सोमकुलावतंसो राजहंसो मुनिमभाषत–'भगवन्, मानसारः प्रबलेन दैवबलेन मां निर्जित्य मद्भोग्यं राज्यमनु-

(४६) ततः=तदनन्तरम, सकलसैन्यसमन्वितः सकलैः=समग्रैः, सैन्यैः=भटैः समन्वितः=युक्तः, राजहंसः=मगधाधिपतिः, तपोविभ्राजमानं–तपसा=विशेषेण भ्राजमानं=देदीप्यमानम्, तपोधनं=तप एव धनं यस्य स तं तपोधनं=तापसम्, वामदेव इति नाम=नामधेयं यस्य स तं वामदेवनामानम्=वामदेवनामकमृषिम्, निजाभिलाषसाधनं—निजस्य=स्वस्य अभिलाषस्य=मनोरथस्य, अवाप्तेः=प्राप्तेः, साधनं=सम्पादकम्, उपायस्वरूपम्, जगाम=अगमत्।

(४७) तं=वामदेवनामकमृषिम्, प्रणम्य=नमस्कृत्य, तेन=ऋषिणा, कृतातिथ्यः–कृतं=विहितम्, आतिथ्यं=अतिथिसत्कारादिकम्, यस्य सः कृतातिथ्यः, राजहंसः, तस्मै=वामदेवाय ऋषये, कथिततथ्यः–कथितं=उक्तं तथ्यं=वक्तव्यं येन सः तस्य=वामदेवस्य आश्रमे=कुटधाम्, दूरीकृतः=अपावृतः श्रमः=आयासो येन यत्र वा स, तस्मिन् दूरीकृतश्रमे, कञ्चन कालम्=किञ्चित्समयम्, उषित्वा=अतिवाह्य, निजराज्याभिलाषी—अभिलाषोऽस्यास्तीति अभिलाषी निजस्य=स्वस्य राज्यस्य अभिलाषी निजराज्याभिलाषी, मितभाषी—मितं=अल्पं भाषितुं=वक्तुं, शीलमस्यास्तीति, सोमकुलस्य=चन्द्रवंशस्य अवतंसः=भूषणं राजहंसः, मुनिम्=वामदेवम्, आभाषत=उक्तवान्। भगवन्! मानसारः=मालवेन्द्रः, प्रबलेन=उत्कृष्टेन, दैवबलेन=विधिसाहाय्येन, माम्=राजहंसम्, निर्जित्य=पराभूय, मम=राजहंसस्य भोग्यं=भोक्तुं योग्यम्, राज्यम्, अनुभवति–भुनक्ति। तद्वत्=तेन मानसारेण यथा तपसा शिवं सन्तोष्य तस्माद्वरः समासादितस्तथाह-

(४६) तब अभीष्ट सिद्धि के लिए राजा राजहंस मनोरथपूर्णकर्ता तपोबल से देदीप्यमान एवं तपस्वी महर्षि वामदेव के पास गये।

(४७) वामदेव ऋषि के आश्रम पर जाकर चन्द्रवंशी राजा राजहंस ने मुनि को प्रणाम करके उनके द्वारा किये गये अतिथि सत्कार को स्वीकार किया और उनसे सारी घटना कह सुनायी। उस तपोवन में कुछ दिनों तक निवास कर सत्संग से परिश्रमादि क्लेश को दूर करने के बाद स्वराज्याभिलाषी एवं मितभाषी राजा ने मुनि से कहा—भगवन्! मालवेश मानसार भगवान् शङ्कर द्वारा प्राप्त अमोघ शक्ति से मुझे जीतकर मेरे भोगने योग्य राज्य को स्वयं भोग रहा है। मैं भी चाहता हूँ कि उसी के समान प्रबल तप करके मैं भी

भवति। तद्वदहमप्युग्रं तपो विरच्य तमरातिमुन्मूलयिष्यामि लोकशरण्येन भवत्कारुण्येनेति नियमवन्तं भवन्तं प्राप्नवम्' इति।

(४८) ततस्त्रिकालज्ञस्तपोधनो राजानमवोचत्-'सखे! शरीरकार्श्यकारिणा तपसालम्। वसुमतीगर्भस्थः सकलरिपुकुलमर्दनो राजनन्दनो नूनं सम्भविष्यति, कञ्चन कालं तूष्णीमास्व' इति।

(४९) गगनचारिण्यापि वाण्या 'सत्यमेतत्' इति तदेवावाचि। राजापि मुनिवाक्यमङ्गीकृत्यातिष्ठत्।

मपि, उग्रं=तीव्रम्, तपः=आराधनम्, विरच्य=कृत्वा, तं=मानसारम्, अराति=शत्रुम्, उन्मूलयिष्यामि=उच्छेत्स्यामि। लोकशरण्येन—लोकानां=जनानां शरणे=रक्षणे साधुः तेन जनरक्षणतत्परेण भवत्कारुण्येन—भवतः=तव, कारुण्येन=कृपया, इति=हेतोः, नियमवन्तं=तपस्विनम्, भवन्तं=त्वाम्, प्राप्नवम्=उपागच्छम्।

(४८) ततः=तदनन्तरम्, त्रिकालज्ञः=भूत-भविष्य-वर्तमानत्रिकालवित् तपोधनः—तप एव धनं यस्य स तपोधनः, वामदेव ऋषिः, राजानं=राजहंसम्, अवोचत्=अकथयत्, सखे!=राजन्! शरीरकार्श्यकारिणा—शरीरस्य=देहस्य, कार्श्यं=क्षीणत्वं करोतीति शरीरकार्श्यकारि तेन शरीरकार्श्यकारिणा, तपसा=तपस्यया, अलं=व्यर्थम्, प्रयोजनं नास्ति, वसुमतीगर्भस्थ—गर्भे तिष्ठतीति गर्भस्थः वसुमत्याः गर्भस्थः वसुमतीगर्भस्थः, वसुमतीगर्भे वर्तमानः, सकलरिपुमर्दनः—सकलं=निखिलं, रिपुकुलं शत्रुमण्डलम् मर्दयति=हिनस्तीति सकलरिपुकुलमर्दनः, राजनन्दनः—नन्दयतीति नन्दनः राज्ञो नन्दनः राजनन्दनः=राजपुत्रः, नूनं=निश्चितम्, भविष्यति=उत्पत्स्यते, कञ्चनकालम्, तूष्णीमास्व=जोषं तिष्ठ, युद्धाद्विरतो भव।

(४९) गगनचारिण्या=अशरीरिण्या व्योमवाचा, आकाशवाण्या अपि सत्यम् एतत्=वामदेवोक्तम्, सत्यं=तथ्यम्, तत्=वामदेवोक्तम् एव अवाचि=उक्तम्, राजापि=राजहंसोऽपि, मुनिवाक्यम्—मुनेः=वामदेवस्य वाक्यम्=वचनम्

दैवबल से उसका उन्मूलन कर दूँ। लोकरक्षणशील आपकी कृपा से नियमपूर्वक रहनेवाले आप जैसे संयमी के पास आया हूँ।

(४८) राजा राजहंस की यह बातें सुनकर त्रिकालदर्शी महर्षि वामदेव ने कहा—राजन्! शरीर को सुखानेवाली तपस्या का कोई प्रयोजन नहीं है क्योंकि रानी वसुमती के गर्भ में वर्तमान राजकुमार निश्चय ही समस्त शत्रुओं को नाश करनेवाला होगा। अतः कुछ दिनों तक शान्तिपूर्वक धैर्य रखो।

(४९) उसी क्षण आकाशवाणी ने भी 'यह बात सत्य है', ऐसा कहकर मुनि की

(५०) ततः सम्पूर्णगर्भदिवसा वसुमती सुमुहूर्ते सकललक्षणलक्षितं सुतमसूत। ब्रह्मवर्चसेन तुलितवेधसं पुरोधसं पुरस्कृत्य कृत्यविन्महीपतिः कुमारं सुकुमारं जातसंस्कारेण बालालङ्कारेण च विराजमानं राजवाहननामानं व्यधत्त।

(५१) तस्मिन्नेव काले सुमतिसुमित्रसुमन्त्रसुश्रुतानां मन्त्रिणां प्रमतिमित्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुताख्या महाभिख्याः सूनवो नवोद्यदिन्दुरुचश्चिरायुषः समजायन्त। राजवाहनो मन्त्रिपुत्रैरात्ममित्रैः सह बालकेलीरनुभवन्नवर्धत।

अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, अतिष्ठत् = तस्थौ।

(५०) ततः = तदनन्तरम् सम्पूर्णगर्भदिवसा—सम्पूर्णाः = परिपूर्णाः गर्भदिवसाः = वासरा यस्याः सा सम्पूर्णगर्भदिवसाः। वसुमती = राजमहिषी, सुमुहूर्ते = शोभने समये शुभलग्ने, सकललक्षणलक्षितम्—सकलैः = सम्पूर्णैः, लक्षणैः शुभचिह्नैः लक्षितं = युक्तं, सुतं = पुत्रम् असूत = प्रासोष्ट, उत्पादितवती। ब्रह्मवर्चसेन—ब्रह्मणः = विधेः वर्चः = तेजः तेन ब्रह्मवर्चसेन, तुलितवेधसं—तुलितः = उपमितः, समीकृतः वेधाः = परमेष्ठी येन स तं तुलितवेधसम्, पुरोधसं = पुरोहितम् पुरस्कृत्य = पुरः अग्रे कृत्वा, कृत्यवित् = समयोचितकार्यज्ञः महीपतिः-मह्याः पतिः महीपतिः = पृथ्वीपतिः राजा = राजहंसः सुकुमारं = शोभनदर्शनम्, कुमारं = पुत्रम् जातसंस्कारेण = जातकर्मसंस्कारेण, बालालङ्कारेण = बालयोग्याभूषणेन च विराजमानं = शोभमानम्, राजवाहन इति नाम = आख्या यस्य स तं राजवाहननामकं, व्याधत्त = कृतवान्।

(५१) तस्मिन्नेव काले=राजवाहनजन्मसमये, यदा राजवाहनस्य जन्मजातं तदैव सुमति-सुमित्र सुमन्त्र-सुश्रुताम् मन्त्रिणाम् प्रमति-मित्रगुप्त-मन्त्रगुप्त-विश्रुताख्याः =एतन्नामानः, महती अभिख्या =शोभा येषां ते महाभिख्याः, सूनवः=पुत्राः, नवः= नवीनः उद्यन् = उदयं गच्छन् यः इन्दुः = चन्द्रमाः तस्य रुक् इव रुक् = कान्तिः

बात का समर्थन किया। तब राजा भी मुनि की बात सत्य मानकर सन्तुष्ट होकर वहीं रहने लगे।

(५०) इसके अनन्तर गर्भ के दिन पूरे हो जाने पर रानी वसुमती, ने शुभमुहूर्त में सभी शुभ राजलक्षणों से सम्पन्न पुत्र को उत्पन्न किया। तब ब्रह्मदेव के समान परम तेजस्वी पुरोहित की आज्ञा के अनुसार कृत्यवेत्ता महीपाल राजहंस ने उस नवजात सुकुमार राजकुमार का यथाविधि जातकर्म संस्कार तथा बालोचित आभूषणों से अलङ्कृत कर राजवाहन यह नाम रखा।

(५१) जिस समय राजवाहन का जन्म हुआ उसी समय सुमति, सुमन्त्र, सुमित्र और सुश्रुत इन चारों अमात्यों को भी क्रमशः प्रमति, मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्त तथा विश्रुतनामक वो

(५२) अथ कदाचिदेकेन तापसेन रसेन राजलक्षणविराजितं कञ्चिन्नयनानन्दकरं सुकुमारं कुमारं राज्ञे समर्प्यावोचि—भूवल्लभ, कुशसमिदानयनाय वनं गतेन मया काचिदशरण्या व्यक्तकार्पण्याश्रु मुञ्चन्ती वनिता विलोकिता।

(५३) निर्जने वने किंनिमित्तं रुद्यते त्वया इति पृष्टा सा करसरोरुहैरश्रु प्रमृज्य सगद्गदं मामवोचत्—मुने, लावण्यजितपुष्पसायके मिथिलानायके कीर्तिव्याप्त-

---

येषां ते नवोद्यदिन्दुरुचः, चिरायुषः = दीर्घजीविनः, समजायन्त = उत्पन्ना बभूवुः। राजवाहनः = राजहंससूनुः, मन्त्रिपुत्रैः = सचिवतनयैः, आत्ममित्रैः स्वसुहृद्भिः सह = साकम्, बालकेलीः = विविधाः बालक्रीडाः शैशवोचितक्रीडाः, अनुभवन् = अनुभवं कुर्वन्, अवर्द्धत = वृद्धिप्राप्तः।

(५२) अथ = अनन्तरम्, कदाचित् = एकदा, एकेन = केनचित्, तापसेन = तपोधनेन मुनिना, रसेन = अनुरागेण, राजहंसं प्रति प्रीत्या राजलक्षणविराजितम्—राज्ञः = भूपतेः लक्षणेन = चिह्नेन, विराजितं = शोभमानम्, कञ्चित् = एकम्, नयनानन्दकरम्—नयनयोः—नेत्रयोः आनन्दकरं—प्रीत्युत्पादकम् लोचनानन्ददायिनम् सुकुमारं = कोमलं शोभनम्, कुमारं = बालकम्, राज्ञे—राजहंसाय, समर्प्य—प्रदाय, अवोचि=अवादि, भूवल्लभ != पृथ्वीपते! कुशसमिदानयनाय—कुशश्च समिच्च कुशसमिधौ तयोः आनयनं कुशसमिदानयनं तस्मै कुशसमिदानयनाय = दर्भेन्धनग्रहणाय, वनम् = अरण्यम्, गतेन = गतवता, मया—तापसेन, काचित् एका अशरण्या—नास्ति शरण्यः = रक्षको यस्याः सा अशरण्या = निराश्रया, व्यक्तं कार्पण्यं यस्या सा व्यक्तकार्पण्या = प्रकटितदैन्या प्रकटितदीनभावा, अश्रु = नेत्राम्बु, मुञ्चती = त्यजती रोरुयमाना, वनिता = स्त्रीः, विलोकिता = दृष्टा।

(५३) निर्जने—निर्गता जना यस्मात् तत् निर्जनं तस्मिन् निर्जने = जनशून्ये वने = विपिने, किन्निमित्तं = कथं, रुद्यते त्वया = भवत्या कथमश्रु प्रमुच्यते इति-पृष्टा—प्रश्नविषयिणीकृता, सा = वनिता, करसरोरुहैः = करकमलैः, अश्रु—नेत्रजलम्

सुन्दर नवोदित चन्द्रमा के समान आह्लादजनक दीर्घजीवी चार पुत्र उत्पन्न हुए। कुमार राजवाहन अपने मित्र मन्त्रिपुत्रों के साथ बालक्रीडा करते हुए बढ़ने लगे।

(५२) कुछ दिनों के बाद एक दिन एक तपस्वी ने राजाओं के लक्षणों से लक्षित और नयनाभिराम एक सुन्दर एवं सुकुमार बालक को बड़े प्रेम के साथ राजा राजहंस को समर्पित कर कहा—पृथ्वीनाथ! कुश और समिधा लाने के निमित्त मैं जंगल में गया हुआ था, वहाँ मैंने एक अनाथ तथा असहाय दुःखी आँखों से आँसू बहाती हुई एक स्त्री को देखा।

(५३) बाद मैंने पूछा कि इस एकान्त निर्जन वन में तुम क्यों रो रही हो? तब वह

सुधर्मणि निजसुहृदो मगधराजस्य सीमन्तिनीसीमन्तमहोत्सवाय पुत्रदारसमन्वितं पुष्पपुरमुपेत्य कञ्चन कालमधिवसति समाराधितगिरीशो मालवाधीशो मगधराजं योद्धुमभ्यगात्।

(५४) तत्र प्रख्यातयोरेतयोरसंख्ये संख्ये वर्तमाने सुहृत्साहाय्यकं कुर्वाणो निजबले सति विदेहे विदेहेश्वरः प्रहारवर्मा जयवता रिपुणाभिगृह्य कारुण्येन पुनर्विसृष्टो हतावशेषेण शून्येन सैन्येन सह स्वपुरगमनमकरोत्।

प्रमृज्य = प्रोञ्छ्य, दूरीकृत्य सगद्गदं यथास्यात्तथा = गद्गदस्वरेण, मां = मुनिम् अवोचत् = उक्तवती। मुने! = तापस! लावण्यजितपुष्पसायके—लावण्येन = स्वसौन्दर्येण, जितः = पराजितः, पुष्पसायकः = पुष्पधन्वा कामः येन स तस्मिन् तथाभूते मिथिलानायके = मिथिलाधिपतौ, कीर्त्या = यशसा, व्याप्ता = परिपूरिता सुधर्मा = तदाख्या देवसभा तेन स तस्मिन् तथाभूते कीर्तिपरिपूरितदेवसभे, निज-सुहृदः = स्वमित्रस्य, मगधराजस्य = राजहंसस्य, सीमन्तिनी सीमन्तमहोत्सवाय = सीमन्तिन्या वध्वाः पट्टमहिष्याः सीमन्तमहोत्सवाय = सीमन्तोन्नयनाख्यगर्भसंस्कार-विशेषाय, पुत्राश्च दाराश्च पुत्रदाराः तैः समन्विते = युक्ते, पुष्पपुरं = पाटलिपुत्रम् उपेत्य = प्राप्य कञ्चन कालं = कियद्दिनम्, अधिवसति = वासं कुर्वति सति समाराधितगिरीशः—समाराधितः = सेवितः गिरीशः = शिवो येन सः तथोक्तः मालवाधीशः = मालवेश्वरः मानसारः, मगधराजं = राजानं राजहंसम्, योद्धुं = युद्धं कर्तुम्, अभ्यगात् = समागतः।

(५४) तत्र = संख्ये, प्रख्यातयोः = वीरत्वेन प्रसिद्धयोः एतयोः राजहंस-मानसारयोः, असंख्ये = संख्यातुमशक्ये, संख्ये = युद्धे, वर्तमाने = प्रचलिते, सुहृत्सा-हाय्यकम्—सुहृदः = स्वमित्रस्य राजहंसस्य साहाय्यकं कुर्वाणः = विदधानः, निज-बले = स्वसैन्ये, विदेहे = मृते सति, प्रहारवर्मा = विदेहेश्वरः तन्नामा मिथिलाधिपतिः

अपने हाथों से आंसुओं को पोंछकर गद्गद स्वर में मुझसे कहने लगी—हे तपस्विन् अपने शरीर के सौन्दर्य से कामदेव को भी तिरस्कृत करनेवाले प्रहारवर्मा, जिसकी कीर्ति देवसभा में भी फैली है, अपने मित्र मगधराज राजहंस की पत्नी के सीमन्तोन्नयन संस्कार के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए परिवार के साथ पुष्पपुर आये हुए थे और वहाँ कुछ दिन रुक गये। उसी बीच भगवान् शङ्कर की आराधना से शक्ति प्राप्त कर मालवाधिपति मानसार मगधराज से युद्ध करने के लिए आया।

(५४) उस समय उन दोनों प्रख्यात वीरों का खूब युद्ध होने लगा। अपने मित्र मगधराज राजहंस की सहायता करते हुए मिथिलेश प्रहारवर्मा की सेना भी नष्ट हो गई और वे मालवेश मानसार के द्वारा पकड़ लिये गये किन्तु दया-दृष्टि अथवा मिथिलेश के

(५५) ततो वनमार्गेण दुर्गेणगच्छन्नधिकबलेन शबरबलेन रभसादभिहन्यमानो मूलबलाभिरक्षितावरोधः स महानिरोधः पलायिष्ट। तदीयार्भकयोर्यमयोर्धात्री-भावेन परिकल्पिताहं मद्दुहिताऽपि तीव्रगतिं भूपतिमनुगन्तुमक्षमे अभूव। तत्र विवृतवदनः कोऽपि रूपी कोप इव व्याघ्रं शीघ्रं मामाघ्रातुमागतवान्। भीताह-

---

जयवता = विजयिना, रिपुणा = शत्रुणा मानसारेण, अभिगृह्य = आक्रम्य धृत्वा, कारुण्येन = दयया, पुण्येन = शुभयोगेन स्वभागधेयमाहात्म्येन विसृष्टः = मुक्तः, हतावशेषेण = हतस्य अवशेषः हतावशेषः तेन हतावशेषेण जीवितेन, शून्येन = शस्त्रादिना रहितेन, पराभवदुःखाक्रान्तप्रायेण, सैन्येन = सैनिकेन, सह = सार्द्धम्, स्वपुरगमनम् = निजनगरगमनम्, अकरोत् = चकार।

(५५) ततः = तदनन्तरम्, दुर्गेण = दुर्गमेन, वनमार्गेण = वनपथा गच्छन् = व्रजन्, अधिकबलेन—अधिकं = प्रभूतं बलं = सामर्थ्यं बलसैन्यं यस्य स तेन शबर-बलेन—शबराणां = किरातानाम्, बलं = सैन्यं शबरबलं तेन शबरबलेन किरातसैन्येन रभसात् = वेगात्, अभिहन्यमानः = ताड्यमानः मूलबलाभिरक्षितावरोधः = मूल-बलेन = कुलक्रमागतेन सैन्येन, विश्वस्तेन, अभिरक्षितः = सर्वतो भावेन सुरक्षितः, अवरोधः = शुद्धान्तः स्त्रीवर्गः यस्य स तथाभूतः सः = प्रहारवर्मा, मिथिलाधिपतिः, महान् = समधिकः निरोधः = स्वसैन्यस्य परिवेष्टनं, रक्षणं यस्य स महानिरोधः, पलायिष्ट = दुद्राव। तदीयार्भकयोः—तस्य = प्रहारवर्मणः अर्भकयोः = पुत्रयोः, यमजयोः = युग्मजातयोः धात्रीभावेन = उपमातृरूपेण उपकल्पिता = नियुक्ता, अहम् तथा मुद्दुहिताऽपि, आवां = अहं मद्दुहिता च तीव्रगतिः = तीव्रा गति यस्य स तं तीव्रगतिं = सत्वरगतिम्, भूपतिं = प्रहारवर्माणम्, अनुगन्तुं = पश्चादुपसर्पितुम् अक्षमे = समर्थे न जाते सामर्थ्यहीने अभूव। तत्र = वने विवृतवदनः विवृतः = व्यात्तम्, वदनं = मुखं यस्य सः तथोक्तः विवृतास्यः, कोऽपि कश्चिदपि, रूपी = रूपमस्तीति रूपी = मूर्तिमान् कोपः = क्रोधः इव, व्याघ्रः = विशेषेण आजिघ्रतीति व्याघ्रः = शार्दूलः, शीघ्रं = त्वरितम्, तां = अबलाम्, आघ्रातुम् = आक्रन्तुम्, आहन्तुम्,

---

पुण्यवश मुझसे मिथिलेश को बन्धनमुक्त कर दिया। मिथिलेश भी छूटकर अपनी बची-खुची सेना के साथ अपने नगर की ओर चल दिये।

(५५) पश्चात् दुर्गम वनमार्ग से जाते हुए शबरों की प्रबल सेना द्वारा एकाएक तितर बितर कर दिये गये, परन्तु प्रधान विश्वासी सेना द्वारा अन्तःपुर की स्त्रियों को तथा अपने को सुरक्षित रखकर वहाँ से भाग निकले। उन प्रहारवर्मा के जुड़वाँ लड़कों की धायें-उपमातायें, मैं तथा मेरी कन्या दोनों तीव्र गति से चलनेवाले राजा के साथ दौड़ने में असमर्थ होकर पीछे रह गयीं। उसी समय मुँह फैलाये हुए साक्षात् क्रोध की मूर्ति के समान

मुदग्रग्राव्णि स्खलन्ती पर्यपतम्। मदीयपाणिभ्रष्टो बालकः कस्यापि कपिलाशवस्य क्रोडमभ्यलीयत।

(५६) तच्छवाकर्षिणोऽमर्षिणो व्याघ्रस्य प्राणान्बाणो बाणासनयन्त्रमुक्तोऽपाहरत्। लोलालको बालकोऽपि शबरैरादाय कुत्रचिदुपानीयत। कुमारमपरमुद्वहन्ती मद्दुहिता कुत्र गता न जाने। साऽहं मोहं गता केनापि कृपालुना वृष्णिपालेन स्वकुटीरमावेश्य विरोपितव्रणाभवम्। ततः स्वस्थीभूय क्षमाभर्तुरन्तिक-

आगतवान् = उपस्थितोऽभूत्। भीता = त्रस्ता भयेन विचलिता अहम्, उदग्राव्णि-उदग्रे = कठिने ग्राव्णि = प्रस्तरे, स्खलन्ती = रिङ्गन्ती पर्यपतम् = अस्खलम् मदीयपाणिभ्रष्टः = मम हस्तच्युतः, बालकः = शिशुः, कस्यापि कपिलाशवस्य कपिलायाः धेनोः, शवस्य = मृतदेहस्य, क्रोडं = अङ्कम्, अभ्यलीयत = प्रच्छन्नोऽभवत्, अन्तःप्राविशत्।

(५६) तच्छवाकर्षिणः-तस्य-शवस्य = मृतगोदेहस्य आकर्षिणः = अकर्षितुं शील यस्य स तस्य, अमर्षिणः-अमर्षः = क्रोधः अस्यास्तीति अमर्षी तस्य अमर्षिणः = क्रुद्धस्य, व्याघ्रस्य = शार्दूलस्य, प्राणान् = असून्, बाणासनयन्त्रमुक्तः-बाणासनयन्त्र = धनुः तस्मान्मुक्तः, बाणः = शरः, अपाहरत् हृतवान्। लोलालकः-लोला = चपलाः, अलकाः = चूर्णकुन्तलाः यस्य स, बालकः = शिशुः, शबरैः = किरातैः आदाय = गृहीत्वा, कुत्रचित् = अनिश्चितस्थाने, उपानीय = प्रापितः अपरं = अन्यम् एकं कुमारम् उद्वहन्ती = क्रोडे कृत्वा भ्रमन्ती, धारयन्ती, मद्दुहिता = मम पुत्री, कुत्र = अज्ञाते स्थाने, गता = गतवतीति न जाने = न स्मरामि। सा = अबला अहं, मोहं = मूर्च्छां गता = प्राप्ता, केनापि = अपरिचितेन कृपालुना = दयावता, वृष्णिपालेन—वृष्णीन् = मेषान् पालयतीति वृष्णिपालः तेन वृष्णिपालेन = मेषपालेन गोपालेन, स्वकुटीरम्-स्वस्य कुटीरः स्वकुटीरः तं स्वकुटीरम् आवेश्य = प्रवेश्य, विरोपितव्रणाः = विरोपितः औषधादिना चिकित्सित

एक विकराल व्याघ्र हम दोनों को खाने के लिए हमारी ओर दौड़ पड़ा। उस व्याघ्र से भयभीत हुई मैं भागने लगी किन्तु उबड़-खाबड़ पथरीली जमीन पर लड़खड़ाती हुई ठोकर खाकर गिर गयी तथा मेरे हाथ से छूटकर वह बालक एक मृत कपिला गौ की गोद में गिर पड़ा और कहीं छिप गया।

(५६) वह क्रुद्ध व्याघ्र ज्यों ही उस कपिला गौ के शरीर को खींचने के लिए झपटा त्यों ही किसी व्याध द्वारा धनुष से छोड़े गये बाण से वह व्याघ्र मर गया। उस चञ्चल केशों वाले बालक को उठाकर व्याध न मालूम कहाँ चला गया। दूसरे बालक को लेकर मेरी पुत्री भी कहाँ गयी, यह भी मुझे अज्ञात नहीं है। क्योंकि मैं गिरने से मूर्छित हो गयी थी

मुपतिष्ठासुरसहायतया दुहितुरनभिज्ञततया च व्याकुलीभवामि—इत्यभिदधाना एकाकिन्यपि स्वामिनं गमिष्यामि' इति सा तदैव निरगात्।

(५७) अहमपि भवन्मित्रस्य विदेहनाथस्य विपन्निमित्तं विषादमनुभवंस्तदन्वयाङ्कुरं कुमारमन्विष्यंस्तदेकं चण्डिकामन्दिरं सुन्दरं प्रागाम्।

(५८) तत्र संततमेवंविधविजयसिद्धये कुमारं देवतोपहारं करिष्यन्तः किराताः 'महीरुहशाखावलम्बितमेनमसिलतया वा, सैकततले खननिक्षिप्तचरणं

व्रणः=क्षतम् यस्याः सा विरोपितव्रणा, अभवम्=जाता। ततः स्वस्थीभूय=स्वस्था भूत्वा निरुजा सती अहम्, भूयः=पुनः, क्ष्माभर्तुः=पृथ्वीपतेः स्वामिनः मिथिलेश्वरस्य प्रहारवर्मणः अन्तिकं=समीपम्, उपतिष्ठासुः=उपस्थातुमिच्छुः, असहायतया=सहायशून्यया, दुहितुः=पुत्र्याः, अनभिज्ञाततया च व्याकुलीभवामि, इति अभिदधाना=कथयन्ती, एकाकिनी=असहाया अपि, स्वामिनं=पालकं, तं=प्रहारवर्माणम्, गमिष्यामि=यास्यामि, इत्युक्त्वा सा=धात्री, तदैव =तस्मिन्नेव काले, निरगात्=अगच्छत्।

(५७) अहमपि=तापसोऽपि, भवन्मित्रस्य–भवतः–तव, मित्रस्य=सुहृदः, विदेहनाथस्य=मिथिलाधिपतेः, विपन्निमित्तं=आपत्कारणम्, विषादं=दुःखम्, अनुभवन्=चिन्तयन्, तदन्वयाङ्कुरम्–तस्य=मिथिलाधिपतेः अन्वयस्य=वंशस्य, अङ्कुरं=तद्वंशप्ररोहभूतम्, कुमारं=बालकम्, अन्विष्यन्=मार्गमाणः तदा= तस्मिन् समये, एकं=सुन्दरम्, चण्डिकामन्दिरम्=दुर्गास्थानम्, प्रागाम्=अगच्छम्।

(५८) तत्र=चण्डिकामन्दिरे, संततम्=अनारतम्, एवंविधविजयसिद्धये–एवंविधस्य विजयस्य सिद्धये=प्राप्तये, कुमारं=बालकं, देवतोपहारं–देवतायाः= चण्डिकायाः उपहारं=उपायनम्, बलिम्, करिष्यन्तः=विधास्यन्तः, किराताः= शबराः, महीरुहशाखावलम्बितम्—महीरुहस्य=वृक्षस्य शाखायाम् अवलम्बितं =बद्धम्, एनं=बालकम्, असिलतया=खड्गेन, सैकततले=बालुकामयप्रदेशे

बाद एक दयालु चरवाहे ग्वाले ने अपने घर ले जाकर मेरे पावों की मरहम-पट्टी कर मुझे चङ्गी कर दिया। अब स्वस्थ होकर अपने महाराज के पास जाना चाहती हूँ, किन्तु लड़की के खो जाने के कारण अकेली होने से दुःखी होकर रो रही हूँ। अस्तु, जैसा भी हो मैं अकेले ही महाराज के पास अवश्य जाऊँगी, ऐसा कहती हुई वह उसी समय वहाँ से चल पड़ी।

(५७) पश्चात् मैं भी आपके मित्र मिथिलाधीश की विपत्ति से दुःखी होकर उसी समय उनके वंश के इस नवजात अङ्कुर कुमार को खोजता हुआ दुर्गाजी के एक मन्दिर में जा पहुँचा।

(५८) उस मन्दिर में जाकर देखा तो वहाँ बहुत से किरात एकत्र खड़े थे। जिस प्रकार अभी हम लोगों ने मिथिलानरेश प्रहारवर्मा को परास्त कर दिया है उसी प्रकार

लक्षीकृत्य शितशरनिकरेण वा, अनेकचरणैः पलायमानं कुक्कुरबालकैर्वा दंशयित्वा संहनिष्यामः' इति भाषमाणा मया समभ्यभाष्यन्त 'ननु किरातोत्तमाः, घोरप्रचारे कान्तारे स्खलितपथः स्थविरभूसुरोऽहं मम पुत्रकं क्वचिच्छायायां निक्षिप्य मार्गान्वेषणाय किञ्चिदन्तरमगच्छम्।

(५९) स कुत्र गतः, केन वा गृहीतः, परीक्ष्यापि न वीक्ष्यते तन्मुखावलोकनेन विनानेकान्यहान्यतीतानि। किं करोमि, क्व यामि भवद्भिर्न किमदर्शि' इति।

खननिक्षिप्तचरणम्–खनने = गर्ते निक्षिप्तौ = निहितौ कीलितौ, चरणौ = पादौ यस्य स तम् तथोक्तम्, लक्षीकृत्य = उद्दिश्य, निशितशरनिकरेण = तीक्ष्णबाणसमूहेन, अनेकचरणैः = क्षिप्रगमनैः, वेगेन धावद्भिः, कुक्कुरबालकैः = श्वशिशुभिः, पलायमानं = धावन्तम्, एनं = कुमारम्, दंशयित्वा = दंशं कारयित्वा, संहनिष्यामः = मारयिष्यामः, इति = इत्थम्, भाषमाणाः = कथयन्तः, किराताः, मया = तापसेन, समभ्यभाष्यन्त = उक्ताः, ननु = भोः, किरातोत्तमाः—किरातेषु = शबरेषु उत्तमाः = श्रेष्ठाः किरोत्तमाः तत्सम्बद्धौ हे किरातोत्तमाः, घोरप्रचारे —घोरः = भयङ्करः, प्रचारः = सञ्चारः यस्मिन् स तादृशे कान्तारे = दुर्गमे पथि, स्खलितपथः–स्खलितः = च्युतः भ्रष्टः पथः = मार्गः यस्य सः तथोक्तः स्थविरभूसुरः–स्थविरः भूसुरः स्थविरभूसुरः = वृद्धब्राह्मणः अहमस्मि, मम पुत्रकं = आत्मनो बालकम्। क्वचित् = कुत्रचित् छायायाम्, निक्षिप्य = संस्थाप्य, मार्गान्वेषणाय = पन्थानं द्रष्टुम् किञ्चिदन्तरं = ईषद् दूरं, अगच्छम् = अगमम्।

(५९) सः = मन्नयनानन्दकरः कुमारः, कुत्र गतः केन = जीवविशेषेण वा गृहीतः = नीतः, परीक्ष्यापि = अन्विष्यापि, न वीक्ष्यते = नावलोकयते, तन्मुखावलोकनेन—तस्य मुखस्य = आननस्य अवलोकनेन = दर्शनेन, विना = अन्तरा, अनेकानि = कियन्ति, अहानि = दिनानि, अतीतानी = व्यतीतानि, किं करोमि, क्व =

भविष्य में भी हमेशा हम लोगों की विजय हुआ करे, इस अभिप्राय से देवी के लिए इस बालक को बलि चढ़ाना चाहते थे। वे कह रहे थे कि इसे या तो वृक्ष में लटकाकर तलवार से मार दिया जाय या बालू में गड्ढा खोदकर उसमें इसके दोनों पैरों को गाड़कर पैने बाणों से निशाना साधकर मारा जाय, या तेजी से दौड़ते हुए कुत्तों के बच्चों से नोचवाकर मार दिया जाय। उनको ऐसा कहते हुए सुनकर मैंने कहा—हे श्रेष्ठ किरातो! मैं बूढ़ा ब्राह्मण हूँ, इस गहन वन में रास्ता भूल गया हूँ, मुझे एक पुत्र था, जिसे मैंने एक पेड़ की छाया में सुलाकर रास्ता खोजने के निमित्त कुछ दूर निकल गया था।

(५९) किन्तु वापस लौटने पर मैंने वहाँ उसे न पाया। पता नहीं कि वह कहाँ गया, और उसे कौन उठा ले गया? अन्वेषण करने पर भी उसे नहीं पा रहा हूँ। उसका

(६०) 'द्विजोत्तम! कश्चिदत्र तिष्ठति। किमेष तव नन्दनः सत्यमेव। तदेनं गृहाण' इत्युक्त्वा दैवानुकूल्येन मह्यं तं व्यतरन्।

(६१) तेभ्यो दत्ताशीरहं बालकमङ्गीकृत्य शिशिरोदकादिनोपचारेणाश्वास्य निःशङ्कं भवदङ्कं समानीतवानस्मि। एनमायुष्मन्तं पितृरूपो भवानभिरक्षतात्' इति।

(६२) राजा सुहृदापन्निमित्तं शोकं तन्नन्दनविलोकनसुखेन किञ्चिदधरीकृत्य तमुपहारवर्मनाम्नाहूय राजवाहनमिव पुपोष।

कुत्र, यामि = गच्छामि, भवद्भिः = श्रीमद्भिः, किम् न अदर्शि = नहि दृष्टः किम्?

(६०) द्विजोत्तम! = ब्राह्मणश्रेष्ठ!, कश्चित् = बालकः, अत्र तिष्ठति = वर्तते, किमेष = अयम्, तव = भवतः, नन्दनः = नयनानन्दकरः पुत्रः, यदि = चेत्, सत्यं = तथ्यमस्ति, तत् = तर्हि, एनं = बालकम्, गृहाण = स्वीकुरु, इति = इत्थम्, उक्त्वा = कथयित्वा, दैवानुकूल्येन = दैवसाहाय्येन दैवानुग्रहेण, मह्यं = तापसाय, तं = बालकम्, व्यतरन् = दत्तवन्तः।

(६१) तेभ्यः = किरातेभ्यः, दत्ताः = अर्पिता आशीः = आशीर्वादा येन स दत्ताशीः, अहं = तापसः, बालकं = शिशुम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य गृहीत्वा, शिशिरोदकादिना-शीतलजलादिना, उपचारेण = शुश्रूषणे, आश्वास्य = स्वस्थं कृत्वा, निःशङ्कम् = निरापदम् भवदङ्कं = भवत्समीपम् त्वदुत्सङ्गम्, समानीतवान् = उपस्थापितवान् अस्मि, आयुष्मन्तं = चिरजीविनम्, एनं = बालकम्, पितृरूपः = जनकसमः, भवान् = राजहंसः, अभिरक्षतात् = पालयतु।

(६२) राजा = राजहंसः, सुहृदापन्निमित्तं—सुहृदः = मित्रस्य प्रहारवर्मणः, आपद् = विपद् निमित्तं = कारणं यस्य स तं तथोक्तम्, शोकं = दुःखम्, तन्नन्दनविलोकनसुखेन—तस्य = सुहृदः नन्दनस्य = पुत्रस्य विलोकनात् = दर्शनात्,

---

मुँह देखे बिना कई दिन बीत गये, क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, क्या आप लोगों ने उसे नहीं देखा?

(६०) मेरी बातों को सुनकर किरातों ने कहा—हे विप्रवर! एक बालक यहाँ है, क्या वह आपका ही पुत्र है? यदि वह आपका पुत्र हो तो आप इसे ले लें। ऐसा कहकर ईश्वर की कृपा से उन्होंने इस बालक को मुझे दे दिया।

(६१) मैंने बालक को ले लिया उन्हें आशीर्वाद दे दिया। बाद ठण्डे पानी के छींटें आदि देकर इस बालक को होश में लाकर आपके निरापद पास में लाया हूँ। इस आयुष्मान् बालक के आप पितातुल्य हैं। अतः आप इसकी रक्षा करें।

(६२) तपस्वी के उस वचन को सुनकर राजा राजहंस ने अपने मित्र प्रहारवर्मा के विपत्तिजनित दुःखों को उस बालक के मुखदर्शन से थोड़ा-थोड़ा दूर किया और उसका नाम

(६३) जनपतिरेकस्मिन् पुण्यदिवसे तीर्थस्नानाय पक्वणनिकटमार्गेण गच्छन्नबलया कयाचिदुपलालितमनुपमशरीरं कुमारं कञ्चिदवलोक्य कुतूहलाकुलस्तामपृच्छत्—'भामिनि ! रुचिरमूर्तिः सराजगुणसंपूर्तिरसावर्भको भवदन्वयसंभवो न भवति कस्य नयनानन्दनः, निमित्तेन केन भवदधीनो जातः, कथ्यतां याथातथ्येन त्वया' इति ।

यत् सुखं तेन तथोक्तं, किञ्चित् = ईषत्, अपरीकृत्य = न्यूनीकृत्य तं = बालकम्, उपहारवर्मनाम्ना = उपहारवर्मनामधेयेन, आहूय = आकार्य उपहारवर्मेति नामकरणं कृत्वा, राजवाहनमिव = स्वपुत्रमिव, पुपोष = तमपि पालितवान् ।

(६३) जनपतिः = राजा राजहंसः, एकस्मिन् = एकदा, पुण्यदिवसे = पुण्याह्ने पुण्यतिथौ, तीर्थस्नानाय = तीर्थे स्नानं कर्तुम्, पक्वणनिकटमार्गेण = पक्वणस्य शबरालयस्य, निकटेन = समीपेन, मार्गेण = पथा, गच्छन् = व्रजन्, कयाचित् अबलया = एकया स्त्रिया, उपलालितं = स्नेहेन पालितम्, वात्सल्येन धृतम्, अनुपमं = अतुलनीयम्, महासुन्दरम् शरीरं यस्य स तम्, तथोक्तम्, कञ्चित् = एकम्, कुमारं = बालकम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, कुतूहलाकुलः–कुतूहलेन = कौतुकेन आकुलः = व्याप्तः, तां = स्त्रियम् अपृच्छत् = पृष्टवान् । भामिनि = सुन्दरि ! रुचिरमूर्तिः–रुचिरा = अभिरामा मूर्तिः = स्वरूपं यस्य स तादृशः सराजगुणसंपूर्तिः, राजगुणानां = नृपलक्षणानां सम्पूर्त्या = परिपूर्णतया सह वर्तते इति सराजगुणसम्पूर्तिः = सम्पूर्णराजलक्षणसम्पन्नः, असौ = पुरोदृश्यमानः, अर्भकः = शिशुः भवदन्वयसम्भवः—भवत्याः = तव अन्वये = वंशे सम्भवः = उत्पत्तिर्यस्य स तथाविधः न भवति, तवान्वये एतादृशस्य कुमारस्योत्पत्तिर्न सम्भवति । तर्हि अयं कस्य = पुरुषविशेषस्य नयनानन्दनः—नयनयोः = नेत्रयोः, आनन्दः = प्रीतिकरः लोचनप्रीतिप्रदः पुत्रः, केन निमित्तेन = कारणेन, भवदधीनः = त्वदधीनः, त्वदायत्तः, जातः = अभूत्, इति त्वया = भवत्या, याथातथ्येन = साङ्गोपाङ्गतया यथार्थतः, कथ्यताम् = भाष्यताम् ।

उपहार वर्मा रखकर अपने पुत्र राजवाहन के समान उसका लालन-पालन करना प्रारम्भ किया ।

(६३) किसी पर्व के दिन राजा राजहंस तीर्थ-स्नान के लिए जा रहे थे । रास्ते में शबरों के गाँव में एक वनिता को एक अनुपम-सुन्दर बालक खिलाते हुए देखकर आश्चर्यचकित होकर कुतूहलवश पूछा—हे सुन्दरी, इतना सुन्दर तथा सकल राजलक्षणों से सम्पन्न यह मूर्तिमान् बालक किसका है ? तुम्हारे कुल में तो ऐसे सुन्दर बालक की उत्पत्ति सम्भव नहीं है । अतः सत्य बताओ कि यह किसके नेत्रों का तारा है और तुम्हारे पास यहाँ कैसे आया !

(६४) प्रणतया तया शबर्या सलीलमलापि—'राजन्! आत्मपल्लीसमीपे पदव्यां वर्तमानस्य शक्रसमानस्य मिथिलेश्वरस्य सर्वस्वमपहरति शबरसैन्ये मद्दयितेनापहृत्य कुमार एष मह्यमर्पितो व्यवर्धत' इति।

(६५) तदवधार्य कार्यज्ञो राजा मुनिकथितं द्वितीयं राजकुमारमेव निश्चित्य सामदानाभ्यां तामनुनीयापहारवर्मेत्याख्याय 'देव्यै वर्धय' इति समर्पितवान्।

(६६) कदाचिद्वामदेवशिष्यः सोमदेवशर्मा नाम कश्चिदेकं बालकं राज्ञः पुरो निक्षिप्याभाषत—'देव! रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छता मया काननावनौ वनितया

---

(६४) प्रणतया = कृतनमस्कारया, तया = शबर्या, किरातपत्न्या, सलीलम् = सस्मितम् अलापि = अभाणि, राजन्! = भूपते! आत्मपल्लीसमीपे—आत्मनः = स्वस्य पल्ली = ग्रामः तस्य समीपे = सविधे, पदव्यां = पथि, वर्तमानस्य = गच्छतः, शक्रसमानस्य = इन्द्रतुल्यस्य मिथिलेश्वरस्य = मिथिलाधिपतेः, प्रहारवर्मणः सर्वस्वं = सर्वधनम्, अपहरति = आत्मसात्कुर्वति, शबरसैन्ये = किरातसमूहे, मद्दयितेन = मम स्वामिना, अपहृत्य = समानीय, एषः = पुरोदृश्यमानः, कुमारः = बालः, मह्यं = स्वपत्न्यै शबर्यै, अर्पितः = दत्तः, सोऽयमधुना व्यवर्धत = वृद्धिं गतः।

(६५) तत् = शबर्युक्तम्, अवधार्य = श्रुत्वा, कार्यज्ञः = कृत्यवित्, राजा = राजहंसः, मुनिकथितम्—मुनिना = तापसेन कथितम् = उदीरितम्, द्वितीयं = अपरम्, राजकुमारं = बालकमेव, निश्चित्य = निर्णीय, सामदानाभ्याम्—साम्ना = सान्त्ववादेन, दानेन चोपायभूतेन, तां = शबरपत्नीम् शबरीम्, अनुनीय = सन्तोष्य, अपहारवर्मेत्याख्याय = अपहारवर्मेति नामकरणं कृत्वा, देव्यै = वसुमत्यै, वर्धय = पालय, इति कथयित्वा समर्पितवान्।

(६६) कदाचित् = एकदा, वामदेवशिष्यः = वामदेवस्यान्तेवासी, सोमदेवशर्मा,

---

(६४) वह शबरी प्रणाम कर कहने लगी—राजन्! अपने गाँव के समीप मार्ग से जाते हुए इन्द्र के समान सुन्दर मिथिलेश्वर प्रहारवर्मा का जब शबरों ने सर्वस्व लूट लिया तब मेरे पति ने हरण कर इस बालक को लाकर मुझे दिया था, तभी से मैंने इसका पालन पोषण कर इसे बढ़ाया है।

(६५) उस शबरी के द्वारा इस बालक का वृत्त ज्ञात कर कृत्यवित् राजा राजहंस ने भली भाँति समझ लिया कि मुनि ने जिस दूसरे राजकुमार की चर्चा की थी, वह यही बालक है। फिर समझा-बुझाकर तथा कुछ द्रव्य आदि देकर उस शबरी से उस बालक को ले लिया। बाद उस बालक का नाम अपहार वर्मा रखकर रानी वसुमती को समर्पित कर कह दिया कि इसका पालन-पोषण करो।

(६६) एक दिन वामदेव ऋषि के शिष्य सोमदेवशर्मा ने एक बालक को राजा राजहंस

कयापि धार्यमाणमेनमुज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य सादरमभाणि—'स्थविरे! का त्वम्? एतस्मिन्नटवीमध्ये बालकमुद्वहन्ती किमर्थमायासेन भ्रमसि' इति।

(६७) वृद्धयाप्यभाषि—'मुनिवर! कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्तो नाम धनाढ्यो वैश्यवरः कश्चिदस्ति। तन्नन्दिनीं नयनानन्दकारिणीं सुवृत्तां नामैतस्माद् द्वीपादागतो मगधनाथमन्त्रिसंभवो रत्नोद्भवो नाम रमणीयगुणालयो भ्रान्तभू

कश्चित्=एकम्, बालकम्=शिशुम्, राज्ञः=राजहंसस्य, पुरः=अग्रे, निक्षिप्य=निधाय, संस्थाप्य, अभाषत=उक्तवान्, देव!=राजन्!, रामतीर्थे=रामघट्टे स्नात्वा=कृतस्नानेन, प्रत्यागच्छता=परावर्तमानेन, मया=सोमदेवेन, काननावनौ=अरण्यभूमौ, कयापि=एकया, वनितया=स्त्रिया, धार्यमाणं=उह्यमानम्, उज्ज्वलाकारम्—उज्ज्वलः=देदीप्यमानः आकारः=स्वरूपो यस्य स तम् तथाभूतम्, सुकुमारम्=बालकम्, विलोक्य=दृष्ट्वा, सादरम्, अभाणि=अभाषि, स्थविरे=वृद्धे! का त्वम्, एतस्मिन्, अटवीमध्ये=वनप्रदेशे, बालकम्=शिशुम्, उद्वहन्ती=धारयन्ती, किमर्थम्, आयासेन=दुःखेन क्लेशेन, भ्रमसि=संचरसि।

(६७) वृद्धया=स्थविरयाऽपि अभाषि=अभाणि, मुनिवर!=तापस! कालयवननाम्नि=कालयवनाख्ये, द्वीपे=अन्तरीपे, कालगुप्तो नाम=कालगुप्त इति ख्यातः, धनाढ्यः=धनसमृद्धः, धनिकः, वैश्यवरः=वैश्यश्रेष्ठः, कश्चित्=एकः अस्ति=वर्तते, तन्नन्दिनीम्=तद्दुहिताम्, नयनानन्दकारिणीम्—नयनोः=लोचनयोः आनन्दं करोतीति ताम्=तथोक्ताम् सुवृत्तां नाम—सुवृत्ताख्याम्, एतस्मात् द्वीपात्=अन्तरीपात् जम्बूद्वीपात्, आगतः=प्राप्तः, मगधनाथमन्त्रिसम्भवः—मगधनाथस्य—मगधेश्वरस्य मन्त्रिणः=अमात्यात् सम्भवः=उत्पत्तिर्यस्य सः तथोक्तः राजहंसमन्त्रिपुत्रः, रत्नोद्भवो नाम—रत्नोद्भवनामा, रमणीयगुणालयः रमणीयानां=श्रेष्ठानां गुणानानाम् आलयः=निलयः, भ्रान्तभूवलयः—भ्रान्तं=पर्यटितम् भुवः=पृथिव्याः वलयं=मण्डलं येन स भ्रान्तभूवलयः=पर्यटितपृथिवीमण्डलः,

---

के सामने रखकर निवेदन किया—राजन्! मैं रामतीर्थ में स्नान करने के लिए गया था वहाँ से लौटते समय वनप्रदेश के मार्ग में एक वृद्धा स्त्री इस सुन्दर बालक को लिये मिली मैंने उससे पूछा—वृद्धे! तुम कौन हो? क्यों इस निर्जन वन में अकेली आयास के साथ बालक लिए घूम रही हो?

(६७) वृद्धा ने उत्तर देते हुए कहा—हे मुनिवर! कालद्वीप नामक एक महाद्वीप है उसमें कालगुप्त नामक एक धनिक वैश्य रहता है। उसकी नयनाभिराम परमसुन्दरी, सुवृत्ता नाम की पुत्री ने इस द्वीप से जाकर महाराज राजहंस के मन्त्रिपुत्र रत्नोद्भव ने विवाह किया

वलयो मनोहारी व्यवहार्युपयम्य सुवस्तुसंपदा श्वशुरेण संमानितोऽभूत्। काल-क्रमेण नताङ्गी गर्भिणी जाता।

(६८) ततः सोदरविलोकनकौतूहलेन रत्नोद्भवः कथंचिच्छ्वशुरमनुनीय चपललोचनया सह प्रवहणमारुह्य पुष्पपुरमभिप्रतस्थे। कल्लोलमालिकाभिहतः पोतः समुद्राम्भस्यमज्जत्।

(६९) गर्भभरालसां तां ललनां धात्रीभावेन कल्पिताहं कराभ्यामुद्वहन्ती फलकमेकमधिरुह्य दैवगत्या तीरभूमिमगमम्। सुहृज्जनपरिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र

मनांसि = हृदयानि हर्तुम् = आकृष्टुं शीलं यस्यासौ मनोहारी, व्यवहारि = वाणिज्यकर्मपरः व्यापारकर्ता, उपयम्य = विवाह्य, सुवस्तुसम्पदा = शोभनयोत्कृष्टद्रव्यसमृद्ध्या, श्वसुरेण = कालगुप्तेन, सम्मानितोऽभूत् = सत्कृतो जातः, कालक्रमेण = प्राप्तसमयेन, नतम् = नम्रीभूतम् अङ्गं = शरीरं यस्या सा नताङ्गी, सा = सुवृत्ता, गर्भिणी जाता = गर्भं धृतवती।

(६८) ततः = तदनन्तरम्, सोदरविलोकनकौतूहलेन—सोदराणां = सहोदरभ्रातॄणाम् विलोकने-दर्शने यत् कुतूहलं = कौतुकम्, तेन तथोक्तेन, रत्नोद्भवः, कथञ्चित् = यथं कथमपि, श्वसुरम् = जायाजनयितारम्, अनुनीय = प्रसन्नं कृत्वा, चपललोचनया—चपले = चञ्चले लोचने = नयने यस्याः सा तया तयामूनया सह, प्रवहणं = डयनम् नौकाम्, ("कर्णीरथः प्रवहणं डयनं च समं त्रयम्" इत्यमरः।) आरुह्य = समारुह्य, पुष्पपुरं = पाटलिपुत्रम्, प्रतस्थे = प्रचचाल, कल्लोलमालिकाभिहतः—कल्लोलानां = महातरङ्गाणाम् मालिकया = परम्परया अभिहतः = ताडितः इति कल्लोलमालिकाभिहतः पोतः = यानपात्रम् नौका, समुद्राम्भसि = सागरजले, अमज्जत् = निमग्नः।

(६९) गर्भभरालसाम्—गर्भस्य भरेण=गर्भभारेण, आलसां = जडीकृताम्, ललनां = स्त्रियम्, तां=सुवृत्ताम्, धात्रीभावेन-उपमातृरूपेण, कल्पिता = नियुक्ता,

---

वह बड़ा गुणवान, भ्रमणशील, देखने में अति सुन्दर तथा व्यापार में बड़ा कुशल था, उसके श्वशुर ने अतुल सम्पत्ति देकर उसका सम्मान किया था, कुछ समय के बाद वह वैश्यपुत्री नताङ्गी सुवृत्ता गर्भवती हो गयी।

(६८) बाद रत्नोद्भव ने अपने भाइयों को देखने की लालसा से उत्सुक होकर श्वशुर को किसी तरह राजी कर विदाई ली और इस चञ्चल नेत्रों वाली अपनी पत्नी सुवृत्ता को साथ लेकर नौका पर सवार हो पुष्पपुर की ओर चल दिया, किन्तु दुर्भाग्यवश लहरों की चपेट से नाव समुद्रजल में डूब गयी।

(६९) गर्भभार से अलसायी हुई, उस सुवृत्ता की धाय के रूप में नियुक्त मैंने

निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगमद्वा न जानामि। क्लेशस्य परां काष्ठामधिगता सुवृत्तास्मिन्नटवीमध्येऽद्य सुतमसूत। प्रसववेदनया विचेतना सा प्रच्छायशीतले तरुतले निवसति। विजने वने स्थातुमशक्यतया जनपदगामिनं मार्गमन्वेष्टुमुद्युक्तया मया विवशायास्तस्याः समीपे बालकं निक्षिप्य गन्तुमनुचितमिति कुमारोऽप्यानायि' इति।

(६०) तस्मिन्नेव क्षणे वन्यो वारणः कश्चिददृश्यत। तं विलोक्य भीता सा

अहं = वृद्धा, कराभ्यां = पाणिभ्याम्, उद्वहन्ती = धारयन्ती, फलकं = काष्ठखण्डम्, अधिरुह्य = आरुह्य, दैवगत्या = संयोगात्, दैवात् तीरभूमि = तटप्रदेशम्, अगमम् = प्राप्तवती, सुहृज्जनपरिवृतः–सुहृज्जनैः = मित्रवर्गैः परिवृतः = परिवेष्टित, रत्नोद्भवः, तत्र = समुद्रजले, निमग्नः = अमज्जत्, वा = अथवा, केनोपायेन = केनचन, उपायेन = उद्योगेन, तीरं = तटम्, अगमत् = अगच्छत्, न जानामि = नाव-गच्छामि। क्लेशस्य = दुःखस्य वेदनायाः, परां काष्ठाम् = उत्कृष्टां दिशम्, अधिगता = प्राप्ता, सुवृत्ता = रत्नोद्भवपत्नी, अस्मिन्नटवीमध्ये = वनैकदेशे, अद्य = अस्मिन्नहनि, सुतम् = पुत्रम्, असूत = प्रासोष्ट, उत्पादितवती। प्रसववेदनया = प्रसवकालिकपीडया, विचेतना–विगता = विनष्टा, चेतना = चैतन्यं यस्याः सा विचेतना = संज्ञाशून्या, सा = सुवृत्ता, प्रच्छायशीतले—प्रच्छायेन = प्रचुरछायया शीतले = शिशिरे, तरुतले = वृक्षतले, निवसति = तिष्ठति, विजने = जनरहिते, वने = अरण्ये, स्थातुं = प्रतीक्षितुम्, अशक्यतया जनपदगामिनं = ग्रामप्रापकम् मार्गं = पन्थानाम् अन्वेष्टुं = मार्गितुम्, उद्युक्तया = प्रवृत्तया, मया = स्थविरया, विवशायाः = विकलाया अचेतनायाः, तस्याः = सुवृत्तायाः, समीपे = निकटे, बालकम् = शिशुम्, निक्षिप्य = संस्थाप्य, गन्तुं = व्रजितुम्, अनुचितम् = अयोग्यम् इति विचार्य कुमारः = शिशुरपि, आनायि = आनीतः।

(७०) तस्मिन्नेव क्षणे = उपर्युक्तवार्ताकाले एव, वन्यः = आरण्यकः, वारणः = गजः, कश्चन = एकः, अदृश्यत = दृष्टः, तं = वारणं, विलोक्य = दृष्ट्वा

अपने दोनों हाथों से उसे सँभाला और लकड़ी के एक तख्ते पर बैठकर समुद्र तटपर आ गयी। मित्रों के साथ रत्नोद्भव इस समुद्र में डूब गया या किसी प्रकार तीर पर जा लगा, कुछ पता नहीं चला। आज क्लेश की पराकाष्ठा को प्राप्त हुई उस सुवृत्ता ने इस वन में पुत्र को जन्म दिया। प्रसवपीड़ा में मूर्च्छित वह साध्वी एक सघन वृक्ष की शीतल छाया में बैठी है। निर्जन वन में रहना कठिन जानकर मैं नगर मार्ग खोजने निकली हूँ। प्रसव वेदना से मूर्च्छित उस विवश रमणी के पास बालक छोड़ना ठीक न समझकर मैं इस बालक को भी अपने साथ ले आयी हूँ।

(७०) इसी समय एक मतवाला जङ्गली हाथी दिखाई पड़ा। उसे देखकर वह बूढ़ी

बालकं निपात्य प्राद्रवत्। अहं समीपलतागुल्मके प्रविश्य परीक्षमाणोऽतिष्ठम्, निपतितं बालकं पल्लवकवलमिवाददति गजपतौ कण्ठीरवो महाग्रहेण न्यपतत्। भयाकुलेन दन्तावलेन झटिति वियति समुत्पात्यमानो बालको न्यपतत्। चिरायुष्मत्तया स चोन्नततरुशाखासमासीनेन वानरेण केनचित्पक्वफलबुद्ध्या परिगृह्य फलेतरतया विततस्कन्धमूले निक्षिप्तोऽभूत्। सोऽपि मर्कटः क्वचिदगात्।

भीता = भयत्रस्ता, सा–वृद्धा धात्री, बालकं–शिशुम्, निपात्य = प्रक्षिप्य, प्राद्रवत्–दधाव, पलायत, अहं = सोमदेवशर्मा, समीपलतागुल्मके–निकटस्थलतागृहे, कुञ्जे प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, परीक्षमाणः = चतुर्दिक्षु ईक्षमाणः परितो विलोकयन् अतिष्ठम् = स्थितः, निपतितं = हस्ताद् भ्रष्टम्, बालकं = शिशुम्, पल्लवकवलं = किसलयग्रासमिव, आददति = आददाने सति गजपतौ = आरण्यके वारणे, कण्ठीरवः = भयानकगर्जनः, सिंहः, महाग्रहेण = अधिकावेशेन, न्यपतत् = आक्रान्तवान्, पतितः, भयाकुलेन = भीतित्रस्तेन, दन्तावलेन = हस्तिना, झटिति = शीघ्रम्, वियति = आकाशे, समुत्पात्यमानः = सम्यक् उत्–ऊर्ध्वं पात्यमानः = क्षिप्यमाणः, बालकः = अर्भकः, न्यपतत् = पतितः, चिरायुष्मत्तया–आयुष्मतो भावः आयुष्मत्ता चिरं = बहुकालम्, आयुष्मत्ता चिरायुष्मत्ता तया चिरायुष्मत्तया–दीर्घजीविततया, सः = शिशुः, उन्नततरुशाखासमासीनेन—उन्नतस्य = उच्छ्रितस्य तरोः = वृक्षस्य शाखायां समासीनेन = समुपविष्टेन केनचित् वानरेण = कपिना पक्वफलबुद्ध्या = पक्वफलभ्रान्त्या परिगृह्य = गृहीत्वा, फलेतरतया = फलात् इतरत् = अन्यत् तस्य भावः तत्ता तया, इदं फलं नेति हेतोः, विततस्कन्धमूले–विततस्य–विस्तृतस्य स्कन्धस्य = वृक्षकाण्डस्य मूले = तलप्रदेशे, निक्षिप्तः = स्थापितः, अभूत् = जातः। सोऽपि मर्कटः, स वानरोऽपि, क्वचित् = कुत्रचित्, अगात् = ययौ।

डर गयी और बालक को वहीं छोड़कर भाग गयी। मैं वहीं पास के एक लताकुञ्ज में छिपकर देखने लगा। उस गजराज ने उस बालक को ज्यों ही भूमि पर गिरे पल्लव ग्रास के समान उठाना चाहा; त्यों ही भयङ्कर गर्जन करता हुआ एक शेर उसपर बड़े वेग से झपटा। उस शेर के भय से डरकर हाथी ने बच्चे को ऊपर की ओर उछालकर फेंक दिया, किन्तु दीर्घायु होने के कारण बच्चे को एक बन्दर ने, जो कि एक विशाल पेड़ की शाखा पर बैठा था, उसे धरती पर गिरने से पहले ही पका हुआ फल समझ कर रोक लिया और फल न होने के कारण एक मोटी डाल की विस्तृत शाखा पर रख दिया। इस कारण उसके प्राण बच गये और वह बन्दर भी कहीं चला गया।

(७१) बालकेन सत्त्वसंपन्नतया सकलक्लेशसहेनाभावि। केसरिणा करि[illegible] निहत्य कुत्रचिदगामि। लतागृहान्निर्गतोऽहमपि तेजःपुञ्जं बालकं शनैरवनीरुहा[illegible] वतार्य वनान्तरे वनितामन्विष्यावलोक्यैनमानीय गुरवे निवेद्य तन्निदेशेन भव[illegible] कटमानीतवानस्मि' इति।

(७२) सर्वेषां सुहृदामेकदैवानुकूलदैवाभावेन महदाश्चर्यं बिभ्राणो रा[illegible] 'रत्नोद्भवः कथमभवत्' इति चिन्तयंस्तन्नन्दनं पुष्पोद्भवनामधेयं विधाय तदु[illegible] व्याख्याय सुश्रुताय विषादसंतोषावनुभवंस्तदनुजतनयं समर्पितवान्।

(७१) बालकेन = शिशुना, सत्त्वसम्पन्नतया = बलशालितया, सकलक्ले[illegible] सहेन = सर्वविधक्लेशसहिष्णुना, अभावि = जातम्, केसरिणा = सिंहेन, करिणं = गजम्, निहत्य = व्यापाद्य, कुत्रचित् = इतस्ततः, अगामि = गतम्, लतागृहात् = निकुञ्जात्, निर्गतः = निःसृतः, अहमपि = सोमशर्माऽपि, तेजःपुञ्जं = तेजस्वि[illegible] बालकम् = अर्भकम्, शनैः = मन्दम्, अवनीरुहात् = वृक्षात्, अवतार्य = अ[illegible] कृत्वा, वनान्तरे = वनमध्ये, वनितां = वृद्धां स्त्रियम्, अन्विष्य = अन्वेषणं कृ[illegible] अविलोक्य = अदृष्ट्वा, एनं = अमुं बालकम्, गुरवे = महर्षये वामदेवाय, या[illegible] तथ्येन = सर्ववृत्तान्तं, निवेद्य = श्रावयित्वा, तन्निदेशेन = तद्गुर्वनुज्ञया, भवन्ति[illegible] = भवतः समीपम्, आनीतवान् = प्रापितवान् अस्मि, अहमिति शेषः।

(७२) सर्वेषां = समेषाम्, सुहृदाम् = मित्राणाम्, एकदैव = युगपदेव, अ[illegible] कूलदैवाभावेन = प्रतिकूलदैववशात्, महदाश्चर्यं = परमविस्मयम्, बिभ्राणः = धार[illegible] (सर्वेषामस्माकं दैवं सममेव प्रतिकूलं जातमिति विचारयन्) राजा = राजहं[illegible] रत्नोद्भवः = सुश्रुतानुजः, कथमभवत् = तस्य का गतिर्जाता इति चिन्तयन् = भावयन्, तन्नन्दनं = रत्नोद्भवबालकम्, पुष्पोद्भवनामधेयम् = पुष्पोद्भव इति ना[illegible] धेयं यस्य स तम् = पुष्पोद्भवाख्यम्, विधाय = कृत्वा, तदुदन्तं = रत्नोद्भववृत्तान्[illegible] व्याख्याय = कथयित्वा, सुश्रुताय = रत्नोद्भवस्य ज्येष्ठभ्रात्रे, विषाद-सन्तोषौ[illegible]

(७१) शक्तिसम्पन्न होने के कारण उस बालक ने सभी क्लेशों को सह लिया [illegible] शेर भी हाथी को मार कहीं चला गया। मैं भी लताकुञ्ज से निकलकर उस तेजस्वी बा[illegible] को धीरे-धीरे वृक्ष से नीचे उतारकर वन में उस वृद्धा को खोजने लगा किन्तु ढूँढने [illegible] भी जब वह नहीं मिल पायी, तब बालक को लाकर गुरुजी को समर्पित कर दिया। [illegible] उन्हीं की आज्ञा से इसे आपके पास लाया हूँ।

(७२) आश्चर्य के साथ राजा ने सोचा कि प्रतिकूल भाग्य के दोष से मेरे सभी मि[illegible] पर एक साथ ही आपत्ति आ पड़ी। न जाने रत्नोद्भव की क्या दशा हुई होगी? इस प्र[illegible] सोचते हुए रत्नोद्भव के पुत्र का नाम पुष्पोद्भव रखकर और उसके छोटे भाई सुश्रु[illegible]

(७३) अन्येद्युः कञ्चन बालकमुरसि दधती वसुमती वल्लभमभिगता। तेन 'कुत्रत्योऽयम्' इति पृष्टा समभाषत—'राजन्! अतीतायां रात्रौ काचन दिव्यवनिता मत्पुरतः कुमारमेनं संस्थाप्य निद्रामुद्रितां मां विबोध्य विनीताऽब्रवीत्—'देवि! त्वन्मन्त्रिणो धर्मपालनन्दनस्य कामपालस्य वल्लभा यक्षकन्याहं तारावली नाम, नन्दिनी मणिभद्रस्य। यक्षेश्वरानुमत्या मदात्मजमेतं भुवत्तनूजस्याम्भोनिधिवलयवेष्टितक्षोणीमण्डलेश्वरस्य भाविनो विशुद्धयशोनिधे राजवाहनस्य परिचर्या-

---

रत्नोद्भवस्य विनाशात् विषादः तत्पुत्रस्य लाभाच्च सन्तोषः इति खेद-हर्षौ, अनुभवन् = आवहन्, तदनुजतनयं = तद्भ्रातृपुत्रं, तस्मै समर्पितवान्=दत्तवान्।

(७३) अन्येद्युः = अन्यस्मिन् दिने, कञ्चन बालकम् = एकं शिशुम्, उरसि = वक्षसि क्रोडे, दधती = धारन्ती, वसुमती = राजमहिषी, वल्लभं = भर्तारम्, अभिगता = प्राप्ता, तेन = राज्ञा राजहंसेन, अयं बालकः, कुत्रत्यः = कस्मात् प्राप्तः? इति = एवं, पृष्टा = प्रेरिता सती, समभाषत = सम्यगवोचत, राजन्! = देव! अतीतायां = व्यतीतायाम् रात्रौ = निशि, काचन = एका, दिव्यवनिता = दिव्याङ्गना स्वर्गीया स्त्रीः, मत्पुरतः = ममाग्रे, एनम् = इमम्, कुमारं = बालकम्, संस्थाप्य = निधाय, निद्रामुद्रितां = निद्रानिमिलितनयनाम्, मां = वसुमतीम्, विबोध्य = प्रबोध्य, विनीता=विनम्रा, सा अब्रवीत्=अवोचत, देवि! त्वन्मन्त्रिणः= तवामात्यस्य, धर्मपालनन्दनस्य = धर्मपालपुत्रस्य, कामपालस्य = कामपालाख्यस्य वल्लभा = प्रिया पत्नी अहम्, मणिभद्रस्य = मणिभद्राख्यस्य नन्दिनी = आनन्दयित्री, यक्षस्य = गुह्यकस्य कन्या = पुत्री, यक्षदुहिता, तारावली नाम = तारावलीनामधेयाऽस्मि, यक्षेश्वरस्य = कुवेरस्य, अनुमत्या = आदेशेन, मदात्मजम् = मदीयम्=मम तनयम्, एतं=एनम्, अम्भोनिधिः=समुद्रः एव वलयं=कटकं तेन वेष्टिता=परिवेष्टिता या क्षोणी=पृथ्वी, तस्या मण्डलं तस्येश्वरः=पतिः शासकः तस्य तथोक्तस्य = समुद्रान्तपृथ्वीपतेः, भाविनः = भविष्यतः, विशुद्धयशोनिधेः—

रत्नोद्भव को सारी कथा सुनाकर उसके छोटे भाई के पुत्र को सौंप दिया।

(७३) एक दिन किसी बालक को गोद में लिये हुए रानी वसुमती अपने पति राजा राजहंस के पास आयी। राजा ने उसे देखकर पूछा—यह बालक कहाँ से आया है? उत्तर में रानी ने कहा—राजन्! गत रात में एक देवांगना इस बालक को मेरे सामने रखकर और मुझे सोते से जगाकर विनम्र भाव से बोली—देवि! मैं मणिभद्र नामक यक्ष की कन्या हूँ तथा आपके मन्त्री धर्मपाल के पुत्र कामपाल की पत्नी हूँ। मेरा नाम तारावली है। यक्षेश्वर कुबेर की आज्ञा से अपने इस पुत्र को समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी के भावी शासक और विशुद्धयश वाले आपके पुत्र राजवाहन की सेवा करने के लिए लायी हूँ। इसलिए आप इस कामदेव के

करणायानीतवत्यस्मि। त्वमेनं मनोजसंनिभमभिवर्धय, इति विस्मयविकसित-नयनया मया सविनयं सत्कृता स्वक्षी यक्षी साप्यदृश्यतामयासीत्' इति।

(७४) कामपालस्य यक्षकन्यासंगमे विस्मयमानमानसो राजहंसो रञ्जित-मित्रं सुमित्रं मन्त्रिणमाहूय तदीयभ्रातृपुत्रमर्थपालं विधाय तस्मै सर्वं वार्तादिकं व्याख्यायादात्।

(७५) ततः परस्मिन् दिवसे वामदेवान्तेवासी तदाश्रमवासी समाराधितं...

विशुद्धस्य=निर्मलस्य उज्ज्वलस्य, यशसः=कीर्तेः, निधिः=निधानमाकरः, तस्य विशुद्धयशोनिधेः भवत्तनूजस्य=भवत्याः=वसुमत्याः, तनूजस्य=आत्मजस्य पुत्रस्य राजवाहनस्य, परिचर्याकरणाय=सेवाकरणाय, आनीतवती=उपहृतवती अहम्, त्वम्=भवती वसुमती, मनोजसन्निभम्=शरीरसौन्दर्येण कामदेवतुल्यम्, एनं=ममार्भकम्, अभिवर्धय=पालय, विस्मयेन—आश्चर्यरसेन, विकसिते=प्रफुल्लिते नयने=लोचने यस्याः सा तया विस्मयविकसितनयनया मया = वसुमत्या सविनयं यथा स्यात्तथा सत्कृता संम्मानिता स्वक्षी—सु=शोभने अक्षिणी=नयने यस्याः सा स्वक्षी = सुनयना साऽपि यक्षी = यक्षपत्नी, मणिभद्रकन्या अदृश्यताम्=परोक्षताम्, अन्तर्धानम् अयासीत् = गता।

(७४) कामपालस्य=सुमित्रानुजस्य यक्षकन्यासंगमे = यक्षिणीसंगमे, यक्षविवाहे, विस्मयमानमानसः—विस्मयमानं=आश्चर्यमावहत् मानस यस्य सः विस्मयमानमानसः=राजहंसः, रञ्जितमित्रम्—रञ्जितानि = स्वभावेनावर्जितानि मनोविनोदेन तोषितानि मित्राणि=सुहृदो येन स तं तथोक्तम्, सुमित्रं = सुमित्रनामकं स्वकीयममात्यम्, कामपालस्य ज्येष्ठभ्रातरम् आहूय=आकार्य तदीयभ्रातृपुत्रम्=तस्यानुजतनयम्, अर्थपालं = अर्थपालनामानं विधाय = कृत्वा, तस्मै=सुमित्राय सर्वं वार्तादिकम्=सकलं वृत्तान्तम्, व्याख्याय=कथयित्वा, अदात्=समर्पितवान्।

(७५) ततः=तदनन्तरं, परस्मिन्=अन्यस्मिन् दिवसे=दिने, वामदेवान्तेवासी...

समान सुन्दर बालक का लालन-पालन करें। इस प्रकार उनके कहने पर आश्चर्य से आँखें खुल गयीं। मैंने विनयपूर्वक उस सुन्दर आँखवाली यक्षी का सत्कार किया। सत्कार को स्वीकार कर वह अदृश्य हो गयी।

(७४) कामपाल का यक्षकुमारी के साथ विवाह के सम्बन्ध में आश्चर्यचकित राजहंस ने मित्रों को प्रसन्न करने वाले सुमित्र नामक मन्त्री को बुलाकर उसके कामपाल के पुत्र का नाम अर्थपाल रखकर तथा उसे सारी कथा सुनाकर बालक सौंप दिया।

(७५) पश्चात् कुछ दिनों के बाद एक दिन वामदेव मुनि के आश्रम के निवासी...

कीर्ति निर्भर्त्सितमारमूर्ति कुसुमसुकुमारं कुमारमेकमवगमय्य नरपतिमवादीत्—'देव ! विलोलालकं बालकं निजोत्सङ्गतले निधाय रुदतीं स्थविरामेकां विलोक्यावोचम्—'स्थविरे ! का त्वम्, अयमर्भकः कस्य नयनानन्दकरः, कान्तारं किमर्थमागता, शोककारणं किम्' इति।

• (७६) सा करयुगेन बाष्पजलमुन्मृज्य निजशोकशङ्कूत्पाटनक्षममिव मामवलोक्य शोकहेतुमवोचत्—'द्विजात्मज ! राजहंसमन्त्रिणः सितवर्मणः कनीयाना-

=वामदेवशिष्यः तदाश्रमवासी तस्य वामदेवस्य आश्रमे वस्तुं शीलमस्येति तदाश्रमवासी=तदाश्रमस्थः, समाराधितदेवकीर्तिम्–समाराधिता=संसेविता देवानां=देवतानां कीर्तिः यशो येन स तथोक्तम्। निर्भर्त्सिता = स्वसौन्दर्येण तिरस्कृता, मारस्य = कामदेवस्य, मूर्तिः = आकृतिः स्वरूपं येन स तं निर्भर्त्सितमारमूर्तिम्, कुसुमसुकुमारं–कुसुमवत्=पुष्पमिव, सुकुमारं=कोमलम्, एकं=कञ्चन, कुमारं = बालकम् अवगमय्य=प्रापय्य, राज्ञः अग्रे उपस्थाप्य, नरपतिं=राजानम्, अवादीत्=अब्रवीत्। देव = राजन् ! तीर्थयात्राभिलाषेण=तीर्थयात्रायाः अभिलाषेण=मनोरथेन, अहं=वामदेवच्छात्रः, कावेरीतीरमागतः = कावेरीनदीतटमुपगतः, तत्र = कावेरीनदीतीरे, विलोलालकं–विलोलाः = चञ्चलाः, अलकाः = कुन्तलाः यस्य स तं विलोलालकम्, बालकम्=अर्भकम्, निजोत्सङ्गतले=स्वोत्सङ्गतले, अङ्के, निधाय = संस्थाप्य, रुदतीम् = अश्रुमुञ्चन्तीम्, स्थविरां = वृद्धाम्, एकाम् = काञ्चित्, विलोक्य=दृष्ट्वा, अवोचम्=अवदम्, स्थविरे=वृद्धे ! का त्वम्, कस्य = पुंसः, नयनानन्दकरः—नयनयोः = नेत्रयोः आनन्दकरः=प्रीतिप्रदः, अयं=असौ, अर्भकः = शिशुः, कान्तारम्=अरण्यमार्गम्, किमर्थं = केन प्रयोजनेन, आगता= आयाता, शोककारणम् किम्=दुःखकरणस्य को हेतुः, इति याथातथ्येन ब्रूहि।

(७६) सा=वृद्धा, करयुगेन=हस्तयुगलेन, बाष्पजलम् = उष्णाश्रुं, उन्मृज्य = प्रोञ्छ्य, निजशोकशङ्कूत्पाटनक्षमं—निजस्य = स्वकीयस्य शोकमेव = दुःखमेव शङ्कुः=कीलः, तस्योत्पाटने उद्धरणे = निष्काशने, क्षमः = समर्थो यः

शिष्य ने आकर देवताओं के समान कीर्तिशाली तथा कामदेव के समान सुन्दर एवं कुसुमसम सुकुमार एक बालक को वहाँ लाकर राजा राजहंस से कहा–राजन् ! मैं तीर्थयात्रा करते हुए कावेरी नदी के तट पर गया हुआ था। वहाँ पर चञ्चल केशवाले इस बालक को गोद में लेकर रोती हुई एक वृद्धा स्त्री को देखा और उससे पूछा—वृद्धे ! तुम कौन हो ? यह बालक किसका है ? तुम इस दुर्गम वन में क्यों आयी हो ? और तुम्हारे रोने का क्या कारण है ?

(७६) मेरी बातों को सुनकर वृद्धा ने अपने हाथों से आँसुओं को पोंछकर अपने शोक निवारण करने में समर्थ समझकर मुझसे कहा—विप्रवर ! महाराज राजहंस के मन्त्री

त्मजः सत्यवर्मा तीर्थयात्रामिषेण देशमेनमागच्छत्। स कस्मिंश्चिदग्रहारे कालीं नाम कस्यचिद् भूसुरस्य नन्दिनीं विवाह्य तस्या अनपत्यतया गौरीं नाम तद्भगिनीं काञ्चनकान्तिं परिणीय तस्यामेकं तनयमलभत। काली सासूयमेकदा धात्र्या मया सह बालमेनमेकेन मिषेणानीय तटिन्यामेतस्यामक्षिपत्। करेणैकेन बालमुद्धृत्या- परेण प्लवमाना नदीवेगागतस्य कस्यचित्तरोः शाखामवलम्ब्य तत्र शिशुं निधाय नदीवेगेनोह्यमाना केनचित्तरुलग्नेन कालभोगिनाहमदंशि। मद्वल्लीभूतो भूरुहो-

स: तमिव मां=वामदेवान्ते वासिनम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, शोकहेतुं = दु:खकारणम् अवोचत्=अवादीत्। द्विजात्मज ! =ब्राह्मणोत्तम ! राजहंसमन्त्रिण:=राजहंसामा- त्यस्य सितवर्मण:=सितवर्मनामकस्य, कानीयान् = कनिष्ठ:, आत्मज:=पुत्र:, सत्य- वर्मा = सत्यवर्माभिध:, तीर्थयात्रामिषेण—तीर्थस्य यात्राया मिषेण=व्याजेन, एनं= अमुम्, देशं=प्रदेशम्, अगच्छत्=अगमत्, स:=सत्यवर्मा कस्मिंश्चित् = एकस्मिन् अग्रहारे = राज्ञ: सकाशात् प्रतिग्रहे लब्धे स्थानविशेषे ग्रामे, कस्यचित्=एकस्य भूसुरस्य=ब्राह्मणस्य, नन्दिनीं=पुत्रीम्, कालीम्=कालीनामधेयाम्, विवाह्य=परि- णीय तस्या:=काल्या:, अनपत्यतया = नि:सन्तानतया, काञ्चनकान्तिम्—काञ्च- नस्य=सुवर्णस्य कान्ति:=औज्वल्यमिव औज्ज्वल्यं यस्या: सा तां तथोक्ताम्, गौरीं= गौरीनामधेयां तद्भगिनीं–तस्या:=काल्या:, भगिनीं=सहोदराम्, परिणीय=विवाह्य तस्यां=गौर्यां तनयं = पुत्रम् अलभत=प्राप्तवान्। कालीविद्वेषेण, सासूयं=सेर्ष्यं एकदा=एकस्मिन् काले धात्र्या=उपमात्र्या, मया सह=साकम्, एनम्=अमुम् बालम्=कुमारम्, एकेन=केनचित्, मिषेण=कपटेन, तटिन्याम्=नद्याम्, आनीय= उपास्थाप्य, अक्षिपत् = निक्षिप्तवती, एकेन करेण = हस्तेन, बालं = शिशुम् उद्धृत्य = उपरि धारयित्वा, अपरेण = अन्येन, हस्तेन प्लवमाना = तरन्ती नदीवेगागतस्य–नद्या:=तटिन्या:, वेगेन=प्रवाहेण, आगतस्य=प्राप्तस्य, कस्यचित्= एकस्य, तरो:=वृक्षस्य, शाखां=काण्डम्, अवलम्ब्य=धृत्वा, नदीवेगेन = तटिनी

सितवर्मा का छोटा भाई सत्यवर्मा तीर्थाटन के ब्याज से इस देश में आया हुआ था। उसने किसी अग्रहार = राजा के द्वारा दान में दिये गये ग्राम में एक ब्राह्मण की कन्या, जिसका नाम काली था, उससे विवाह किया, परन्तु उससे सन्तान न होने के कारण उसकी छोटी बहन गौरी से दूसरा विवाह किया, जो सोने के समान गोरी थी, उसको एक पुत्र प्राप्त हुआ। एक दिन काली ईर्ष्यावश उस बालक को मेरे सहित किसी बहाने नदी के तीर पर ले आई और हम दोनों को नदी से ढकेलकर भाग गयी। मैंने एक हाथ से बालक को पकड़ा और दूसरे हाथ से तैरती रही, इतने में नदी के प्रवाह में बहता हुआ एक वृक्ष आया जिसकी शाखा पकड़कर बालक को उसपर बैठा दिया और उसके सहारे धारा में बहती रही, दैववश

ऽयमस्मिन् देशे तीरमगमत्। गरलस्योद्दीपनतया मयि मृतायामरण्ये कश्चन शरण्यो नास्तीति मया शोच्यते' इति।

(७७) ततो विषमविषज्वालावलीढावयवा सा धरणीतले न्यपतत्। दयाविष्टहृदयोऽहं मन्त्रबलेन विषव्यथामपनेतुमक्षमः समीपकुञ्जेष्वौषधिविशेषमन्विष्य प्रत्यागतो व्युत्क्रान्तजीवितां तां व्यलोकयम्।

प्रवाहेण, उह्यमाना = नीयमाना, केनचित् = एकेन, तरुलग्नेन=वृक्षोपरिस्थितेन, कालभोगिनी = कृष्णसर्पेण अहं = वृद्धा, अदंशि=दष्टा। मदवलम्बीभूतः= मदाश्रयीभूतः, भूरुहः = वृक्षः, अस्मिन् देशे=अत्र प्रदेशे, तीरं = तटम् अगमत्= अगच्छत्, प्रापत्। गरलस्य=विषस्य, उद्दीपितया=उत्कटतया प्रवृद्धया, मृतायां= पञ्चत्वं प्राप्तायां, मयि=वृद्धायाम्, कश्चन=कोऽपि, शरण्यः=रक्षकः, नास्ति=न वर्तते इति हेतोः मया = वृद्धया, शोच्यते = चिन्त्यते, खेद क्रियते।

(७७) ततः=तदनन्तरम् विषमया=सोढुमशक्यया अतिविषह्यया, विषस्य= गरलस्य ज्वालया=उल्वणया शिखया: अवलीढाः=व्याप्ताः, अवयवाः = अङ्गानि यस्याः सा, विषमविषज्वालावलीढावयवा सा धरणीतले = पृथिव्याम् न्यपतत=पपात। दयाविष्टहृदयः-दयया = करुणया आविष्टं = आक्रान्तम् हृदयम् = मानसं यस्य सः अहं वामदेवर्षिशिष्यः, मन्त्रबलेन = मन्त्रशक्त्या, विषव्यथाम् = गरलपीडाम्, अपनेतुं = दुरीकर्तुम्, अक्षमः = असमर्थः सन्, समीपकुञ्जेषु = निकटस्थलतापिहितस्थानेषु, बल्लरीसमाच्छन्नस्थलेषु औषधिविशेषं=सर्वविषनाशकौषधम्, अन्विष्य = अन्वेषणं कृत्वा, प्रत्यागतः = आगतः, व्युत्क्रान्तजीविताम् व्युत्क्रान्तं = निर्गतम् जीवितं = जीवनं यस्याः स तां तथोक्ताम्, तां वृद्धाम् व्यलोकयम् = अपश्यम्।

पेड़ पर एक साँप लिपटा था, जिसने मुझे डस लिया। पानी में बहता हुआ वह पेड़ यहाँ किनारे आकर लग गया। विष की प्रचण्डता से मेरे मर जाने पर, इस वन में कोई दूसरा रक्षक नहीं है, यही सोचकर रो रही हूँ।

(७७) इतनी बात कहते-कहते भयङ्कर विष की ज्वाला से, जो सारे शरीर में व्याप्त हो गयी थी, वह अचानक भूमि पर गिर गयी। उसकी ऐसी दशा पर मुझे दया आ गयी, किन्तु मैं मन्त्र नहीं जानता था। अतः मन्त्र बल से, उसकी पीडा दूर नहीं कर सका, किन्तु मैं पास में ही वर्तमान झाड़ी से सर्वविषनाशक औषधि लेकर आया तो देखा कि उसके प्राणपखेरू उड़ चुके थे।

(७८) तदनु तस्याः पावकसंस्कारं विरच्य शोकाकुलचेताः बालमेनमगतिमादाय सत्यवर्मवृत्तान्तवेलायां तन्निवासाग्रहारनामधेयस्याश्रुततया तदन्वेषणमशक्यमित्यालोच्य भवदमात्यतनयस्य भवानेवाभिरक्षितेति भवन्तमेनमानयम्' इति।

(७९) तन्निशम्य सत्यवर्मस्थितेः सम्यगनिश्चिततया खिन्नमानसो नरपतिः सुमतये मन्त्रिणे सोमदत्तं नाम तदनुजतनयमर्पितवान्। सोऽपि सोदरमागतमिव मन्यमानो विशेषेण पुपोष।

(७८) तदनु = तत्पश्चात्, तस्याः = वृद्धायाः, पावकसंस्कारम् = अग्निदाहं, विरच्य = कृत्वा, तच्छरीरम्, भस्मसात्कृत्वा, शोकाकुलचेताः—शोकेन = दुःखेन आकुलं = व्याप्तं चेतः = हृदयं यस्य सः, अगतिम् = अनाथम्, एनं = बालं = बालकम्, आदाय = गृहीत्वा, सत्यवर्मवृत्तान्तश्रवणवेलायाम् = सत्यवर्मसुमत्यनुजस्य वृत्तान्तश्रवणसमये, तन्निवासाग्रहारनामधेयस्य = तस्य सत्यवर्मनिवासाग्रहारस्य वासस्थलभूतस्य ग्रामस्य यन्नामधेयं तस्य अश्रुततया = अकर्णिततया अश्रवणेन तदन्वेषणम् = सत्यवर्ममार्गणम् अशक्यम् = असाध्यम् इति आलोच्य = विचार्य, भवदमात्यतनयस्य = त्वमन्त्रिपुत्रस्य, भवानेव = त्वमेव अभिरक्षिता = पालकः इति हेतोः भवन्तं = भवत्समीपम्, आनयम् = प्रापितवान् अहमिति शेषः।

(७९) तत् = वामदेवशिष्यप्रोक्तम्, निशम्य = श्रुत्वा, सत्यवर्मस्थितेः = सत्यवर्मास्थानस्य जीवनस्य वा सम्यगनिश्चिततया = सम्यक् यथार्थम् अनिश्चिततया = अनिर्णीततया, सोऽद्यावतिष्ठते न वेति, जीवति न वेति सन्दिग्धतया खिन्नमानसः—खिन्नं मानसं यस्य स खिन्नमानसः, नरपतिः = राजहंसः, सुमतये = सुमतिनाम्ने मन्त्रिणे = अमात्याय, सोमदत्तं नाम = सोमदत्त इति नामकम् तदनुजतनयं = तत्कनिष्ठभ्रातृपुत्रम्, समर्पितवान् = दत्तवान्। सोऽपि = सुमतिरपि, सोदरम् = भ्रातरं सत्यवर्माणम् आगतं = प्राप्तमिव, मन्यमानः

(७८) उसके बाद शोकाकुल हो मैंने दाह क्रिया की और इस बालक को अपने साथ ले आया। सत्यवर्मा के चरित्र श्रवण के समय उसके निवासस्थान अग्रहार का नाम तो सुना किन्तु उसका पता न पा सका। अतः उस स्थान की खोज करना असंभव जानकर मैं इस बालक को आपके पास यह सोचकर लाया हूँ कि आपके ही मन्त्री का पुत्र है। अतः आप ही इसकी रक्षा कर सकेंगे।

(७९) उपर्युक्त वृत्तान्त का श्रवण कर तथा सत्यवर्मा की अनिश्चित स्थिति का विचार करके राजा राजहंस अति दुःखी हुए और सुमति नामक मन्त्री को बुलाकर उस बालक को उन्हें सौंप दिया और उसका नाम सोमदत्त भी रख दिया। उस सुमति मन्त्री ने भी पाकर आये हुए अपने सहोदर भाई के समान समझता हुआ विशेष रूप से उसका

(८०) एवं मिलितेन कुमारमण्डलेन सह बालकेलीरनुभवन्नधिरूढानेकवाहनो राजवाहनोऽनुक्रमेण चौलोपनयनादिसंस्कारजातमलभत। ततः सकललिपिज्ञानं निखिलदेशीयभाषापाण्डित्यंपडङ्गसहितवेदसमुदायकोविदत्वं काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकेतिहासचित्रकथासहितपुराणनैपुण्यं धर्मशब्दज्योतिस्तर्कमीमांसादिसम-

---

अनुभवन्, विशेषेण = अतिशयेन, पुपोष = पालयामास।

(८०) एवं = अनेन प्रकारेण, मिलितेन = एकत्रभूतेन, कुमारमण्डलेन = कुमारसमूहेन, सह = सार्द्धम्, बालकेली: = शैशवोचितक्रीडा:, अनुभवन् = कुर्वन्, अधिरूढानेकवाहन:—अधिरूढानि = आरूढानि, अनेकानि = विविधानि, वाहनानि—अश्वगजादीनि येन स तथोक्त:, कदाचिदश्वं कदाचिद्गजं समारुरोह इति भाव:, राजवाहन: = राजहंसनन्दन:, अनुक्रमेण = यथाक्रमम्, चौलोपनयनसंस्कारजातम् = चौलं च उपनयनं च चौलोपनयने चौलोपनयने आदिनी येषां संस्काराणां तेषां जातं समूहम्। चूडाकरणोपनयनवेदारम्भसमावर्तनादिसंस्कारम्, अलभत = अविन्दत।

तत: = तदनन्तरम्, सकललिपिज्ञानम्—सकलानां = समस्तानां लिपीनां = अक्षराणाम्, ज्ञानम् = परिचय:, सर्वविधाक्षरसंस्थानपरिचयम् निखिलदेशीयभाषापाण्डित्यम्—निखिलासु = समस्तासु देशीयभाषासु पाण्डित्यं = वैदग्ध्यम्, षडङ्गसहितवेदसमुदायकोविदत्वम्—षड्भिरङ्गै: = शिक्षा-कल्प-व्याकरण-छन्दो-निरुक्त-ज्योतिषरूपै: वेदाङ्गै:, सहिते = युक्ते वेदसमुदाये = वेदसमूहे, कोविदत्वं = पाण्डित्यम्। काव्यं = रामायणादि:, नाटकं = रूपकादि:, आख्यानकं = कथानकम्, आख्यायिका = श्रोत्रपरम्परागत: उदन्त:, कादम्बर्यादि:, इतिहास: = महाभारतादि पुरावृत्तम्, चित्रकथा = रमणीया कथा, एताभि:, सहित: = युक्त:, य: पुराणगण: = अष्टादशपुराणानि, तत्र नैपुण्यं = पाटवम्।

धर्मश्च शब्दश्च ज्योतिषश्च तर्कश्च मीमांसा चेति धर्मशब्दज्योतिषतर्क-

---

पालन पोषण करने लगा।

(८०) इस प्रकार दसों कुमार इकट्ठे हो गये। उनके साथ बालक्रीडा का अनुभव करता हुआ राजवाहन, विविध वाहनों पर चढ़ने की कला में निपुण हो गया और क्रमशः उसके चूडाकरण, उपनयन, वेदारम्भ एवं समावर्तन संस्कार विधिवत् सम्पन्न हो गये। बाद उसने समस्त लिपियों का ज्ञान प्राप्त किया, सभी देशों की भाषाओं की जानकारी की। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, निरुक्त एवं ज्योतिष इन छह अङ्गों के साथ साथ चारों वेदों का पाण्डित्य प्राप्त किया। काव्य, नाटक, आख्यानक, आख्यायिका, इतिहास, चित्रकथा के सहित पुराणों की निपुणता प्राप्त की। साथ ही साथ धर्मशास्त्र, शब्दशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, न्याय,

स्वशास्त्रनिकरचातुर्यं कौटिल्यकामन्दकीयादिनीतिपटलकौशलं वीणाद्यशेषवाद्य-दाक्ष्यं संगीतसाहित्यहारित्वं मणिमन्त्रौषधादिमायाप्रपञ्चचुञ्चुत्वं मातङ्गतुरङ्गादि-वाहनारोहणपाटवं विविधायुधप्रयोगचणत्वं चौर्यदुरोदरादिकपटकलाप्रौढत्वं च

मीमांसाः ता आदयो येषां ते तेषु तथोक्तेषु चातुर्यं = नैपुण्यम् । धर्म इत्यादि प्रत्येकं शास्त्रेण सम्बध्यते तेन धर्मशास्त्रं = स्मृतिः, शब्दशास्त्रं = व्याकरणम्, ज्योतिषशास्त्रं = नक्षत्रादिपरिज्ञापकम्, तर्कशास्त्रं = न्यायः, मीमांसाशास्त्रम् = पूर्वोत्तरमीमांसाभेदेन मीमांसाजैमिनिदर्शनं वेदान्तश्च वेदान्तदर्शनम्, ज्ञेयम् । अत्रादि-पदेन उपपुराणधनुर्वेदादीनां च संग्रहो बोद्धव्यः, कौटिल्येन = चाणक्येन निर्मितं कौटिल्यम्, कमन्दकेन विरचितं कामन्दकीयम्, कौटिल्यं च कामन्दकीयं च कौटिल्य-कामन्दकीये ते आदिनी येषां नीतिपटलानां = नीतिपटलसमुदायानां तेषु कौटिल्य-कामन्दकीयादिनीतिपटलेषु कौशलं = चातुर्यम्, (अत्रादिपदेन भर्तृहरि-शुक्रनीत्या-दीनां संग्रहः) वीणाद्यशेषवाद्यदाक्ष्यम्—वीणादिषु = वल्लकीप्रभृतिषु अशेषेषु=सकलेषु वाद्येषु दाक्ष्यं = प्रवीणताम् । सङ्गीत साहित्यहारित्वम्-सङ्गीतं = नृत्यगीतादि च साहित्यं = शिल्पकलादिकं च सङ्गीतसाहित्ये तयोः हारित्वं = मनोहरत्वम् मणि-मन्त्रौषधादिमायाप्रपञ्चचञ्चुत्वम्—मणिश्च मन्त्रश्च औषधं च मणिमन्त्रौषधानि तानि आदीनि यस्य मायाप्रपञ्चस्य तत्र चञ्चुत्वम् = प्रख्यातत्वम्, मणिमन्त्रौषधादि-प्रयोगरूपेषु सांसारिकमायाविस्तारेषु विख्यातत्वम् । सकलप्रबन्धकुशलत्वम् । मातङ्ग-तुरङ्गादिवाहनारोहणपाटवम्—मातङ्गश्च तुरङ्गश्च मातङ्गतुरङ्गौ तौ आदी येषां तानि मातङ्गतुरङ्गादीनि तानि च वाहनानि चेति मातङ्गतुरङ्गादिवाहनानि तेषु आरोहणस्य पाटवं = नैपुण्यम् मातङ्गतुरङ्गप्रभृतिषु यानेषु समारोहणपटुताम् अत्रादिपदेन रथादीनां संग्रहः ।

विविधायुधप्रयोगचणत्वम्—विविधानां = बहुप्रकाराणाम् आयुधानां=अस्त्राणां प्रयोगेण=चालनेन वित्तः विविधायुधप्रयोगचणः तस्य भावस्तत्त्वं प्रख्यातत्वम् चौर्यदुरोदरादिकपटकलाप्रौढत्वम्-चौर्यं च दुरोदरश्च चौर्यदुरोदरौ तौ आदी यस्याः कपटकलायाः तस्यां प्रौढत्वम् = स्तेयद्यूतादिषु [illegible] कुशलत्वम् प्रावीण्य

मीमांसा आदि शास्त्रों की प्रवीणता, कौटिल्य, कामन्दकीय, शुक्रनीति आदि नीतिशास्त्रों में कौशल, वीणा आदि वाद्ययन्त्रों को बजाने की दक्षता तथा नृत्य-गीत आदि शिल्पकलाओं में चातुर्य, मणि, मन्त्र, औषध आदि माया प्रपञ्च में कुशलता, हाथी, घोड़े आदि वाहनों पर चढ़ने की पटुता, विभिन्न अस्त्र-शस्त्रों के चलाने में कुशलता, चोरी, जुआ आदि कपट क्रियाओं में प्रौढ़ता आदि तत्तद् शास्त्रों के विशेषज्ञ विद्वानों से अच्छी तरह सीख लि

तत्तदाचार्येभ्यः सम्यग्लब्ध्वा यौवनेन विलसन्तं कुमारनिकरं निरीक्ष्य महीवल्लभः सः 'अहं शत्रुजनदुर्लभः' इति परमानन्दममन्दमविन्दत।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते कुमारोत्पत्तिर्नाम प्रथम उच्छ्वासः।

—:०:—

तत्तदाचार्येभ्यः = तत्तच्छास्त्रनिष्णातेभ्यः शिक्षकेभ्यो, लब्ध्वा = अधिगम्य, यौवनेन = तारुण्येन, विलसन्तं = शोभमानम्, कृत्येषु = कार्येषु, अनलसम् = आलस्यरहितम्, तं कुमारनिकरम् = बालसमूहम्, निरीक्ष्य = अवलोक्य, महीवल्लभः = पृथ्वीपतिः, सः = राजा राजहंसः—'अहम्, शत्रुजनदुर्लभः—शत्रुजनैः = रिपुभिः दुर्लभः = दुर्धर्षः' इति अमन्दम् = अतिशयं, परमानन्दं—परमश्चासो आनन्दश्चेति परमानन्दः तं परमानन्दम् = अतिशयं सुखम्, अविन्दत = अलभत।

इति आचार्यं दण्डिकृतस्य दशकुमारचरितस्य पूर्वपीठिकायां
पं० श्रीकृष्णमणित्रिपाठिना कृतायां चन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां प्रथमोच्छ्वासः समाप्तः।

इस प्रकार सर्वगुणसम्पन्न, युवावस्था से सुशोभित तथा कर्तव्य कार्यों में आलस्यरहित कुमारों को देखकर राजा राजहंस ने अपने को कृतकृत्य समझा और अपने मन में उन्होंने सोचा कि अब मैं शत्रुओं से अजेय हो गया, अब वे मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। यह सोच विचार कर उन्हें परम आनन्द होने लगा।

इस प्रकार जनपद देवरिया, पो० कुबेरनाथ, ग्राम धर्मागत छपरा, निवासी
पं० श्रीकृष्णमणित्रिपाठी द्वारा की गयी दशकुमारचरितपूर्वपीठिका
में प्रथम उच्छ्वास की हिन्दीव्याख्या 'विमला' समाप्त।

द्वितीयोच्छ्वासः

(१) अथैकदा वामदेवः सकलकलाकुशलेन कुसुमसायकसंशयितसौन्द कल्पितसोदर्येण साहसापहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारणकुलिशा करेण कुमारनिकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं समधिगम्य तेन तां कृतां चर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षं विदलिष्यम विपक्षं कुमारचयं गाढमालिङ्ग्य मितसत्यवाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत ।

---

(१) अथ = अनन्तरम्, एकदा = एकस्मिन् दिने, वामदेवः = वामदेवना महर्षिः, सकलकलाकुशलेन—सकलासु = निखिलासु कलासु = नृत्यगीतादिवि कुशलेन=निष्णातेन, कुसुमसायकसंशयितसौन्दर्येण–कुसुमसायकेन=कामेन संशयि सन्दिग्धं सौन्दर्यं = लावण्यं यस्य स तेन तथोक्तेन अथवा मनोज्ञत्वेन कुसुमसा कन्दर्पः संशयितः कन्दर्पो वा तदन्यो वेति सन्दिग्धः यस्मात् तथाभूतं सौन्दर्यं स तेन । कल्पितसोदर्येण-कल्पितं – विरचितं सोदर्यं = परस्परबन्धुत्वम् येन तादृशेन,साहसापहसितकुमारेण–साहसेन=पराक्रमेण अपहसितः=तिरस्कृतः कुमार कार्तिकेयः येन स तेन तथोक्तेन = कुमाराधिकबलेन, सुकुमारेण – कोमलशरी जयध्वजातपवारणकुलिशाङ्कितकरेण–जयध्वजः = पताका, आतपवारणः = छ कुलिशं = वज्रं तैः अङ्कितौ चिह्नितौ करौ = हस्तौ यस्य स तेन तथोक्तेन, कुम निकरेण = कुमारसमूहेन, परिवेष्टितं = परितः व्याप्तम्, आनतशिरसम्—आनतं प्रणतं शिरः – मस्तकं यस्य स तम् = कृतनमस्कारम्, राजानं = राजहंसम्, स धिगम्य – उपसृत्य, तेन = राज्ञा राजहंसेन कृतां = विहिताम्, तां परिचर्याम् सेवाम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्ष निजस्य = वामदेवस्य चरणयुगले = पादपङ्कजद्वये, मिलन्तः = पतन्तः मधुकर माणा भ्रमरा इवाचरन्तः काकपक्षाः शिखण्डका यस्य स तम्, विदलिष्यमाणवि विदलिष्यमाणाः पराजेष्यमाणाः विपक्षाः = शत्रवः येन स तम् कुमारचयं

---

(१) एक दिन वामदेव ऋषि सभी कलाओं में प्रवीण, सौन्दर्य से कामदेव का संशय उत्पन्न करनेवाले, वेष-भूषा से अत्यन्त रमणीय, साहस—शौर्य में कार्तिकेयजी का उपहास करनेवाले तथा जिनके हाथों में जयध्वज, छत्र एवं कुलिश के चिह्न हैं, सुकुमार कुमारसमुदाय से घिरे राजा राजहंस के समीप उनसे मिलने गये । राजा ने झुकाकर उनको प्रणाम किया और ऋषि ने राजा द्वारा की गयी परिचर्या स्वीकार बाद प्रणाम करते समय अपने पैरों पर गिरते हुए भौंरों जैसे काले-काले लम्बे बालों

(२) 'भूवल्लभ, भवदीयमनोरथफलमिव समृद्धलावण्यं तारुण्यं नुतमित्रो भवत्पुत्रोऽनुभवति। सहचरसमेतस्य नूनमेतस्य दिग्विजयारम्भसमय एषः। तदस्य सकलक्लेशसहस्य राजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं क्रियताम्' इति।

(३) कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतारयो रयोपहसित-

---

कुमाराणां = राजवाहनादिकुमाराणां चयं = संघं गणम् गाढं = दृढम्, निर्भरं आलिङ्ग्य = आश्लिष्य, मितसत्यवाक्येन—मितं = स्वल्पं, सत्यं = अवितथम् यद्वाक्यं = वचनं तेन तथोक्तेन परिमितसत्यप्रियवचनेन विहिताशीः दत्ताशीर्वादः, अभ्यभाषत = अवादीत्।

(२) भूवल्लभ = पृथ्वीपते। भवदीयमनोरथफलमिव—भवदीयानां = त्वदीयानाम्, मनोरथानां = अभिलाषाणाम्, फलमिव, समृद्धलावण्यम्—समृद्धं = समेधितम् वर्द्धितम्, लावण्यं = सौन्दर्यं यस्मिन् तत् तथोक्तम्, नुतमित्रः—नुतानि = प्रशंसितानि मित्राणि सुहृदः यस्य स तथोक्तः, भवत्पुत्रः = त्वदीयतनयः, अनुभवति = उपभुङ्क्ते। सहचरसमेतस्य—सहचरैः = सुहृद्भिः समेतस्य = सहितस्य, एतस्य = भवत्पुत्रस्य राजवाहनस्य, नूनं = निश्चयेन, एषः = अयम्, दिग्विजयारम्भसमयः—दिशां = काष्ठानाम् विजयस्य = जयस्य आरम्भः = प्रारम्भः उपक्रमः तस्य समयः = कालः, तथोक्तः। तत् = तस्मात् कारणात् अस्य = सकलक्लेशसहस्य, सकलान् = सर्वान्, क्लेशान् = दुःखादीन् सोढुं समर्थस्य सत्त्वसम्पन्नतया सकलक्लेशसहिष्णोः राजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं—दिशां विजयाय प्रयाणं = यात्रा, क्रियतां = विधीयताम्।

(३) कुमाराः = सर्वे बालकाः, माराभिरामाः—मारः = कामदेवः तद्वत् अभिरामाः = मनोहराः, रामाद्यपौरुषाः—रामः = दशरथनन्दनः आद्यः = प्रथमो येषां ते येषां पौरुषं = सामर्थ्यमिव पौरुषं = पराक्रमो येषां ते रामाद्यपौरुषः, रुषा = क्रोधेन भस्मीकृतारयो—न भस्म अभस्म अभस्म भस्म कृताः = सम्पद्यमानाः भस्मीकृताः, नाशिता अरयः = शत्रवः यैस्ते भस्मीकृतारयः, रयोपहसितसमीरणाः—रयेन =

एवं भविष्य में शत्रुदल का दमन करनेवाले कुमारों को स्नेहपूर्वक आलिङ्गन कर परिमित एवं सत्यवचनों से आशीर्वाद देकर कहने लगे।

(२) राजन्! प्रशंसित मित्रोंवाला आपका पुत्र राजवाहन आपके मनोरथ फल की तरह समृद्ध, लावण्य तथा युवावस्था का अनुभव कर रहा है। अतः सहचर वर्ग के साथ इसके दिग्विजययात्रा करने का यह समय अच्छा है। इसलिए सभी क्लेशों को सहन करने में समर्थ उस राजवाहन को आप दिग्विजय करने के निमित्त भेज दें।

(३) कामदेव के समान सुन्दर, श्रीरामचन्द्र आदि जैसे पराक्रमशील, क्रोध से शत्रुवर्ग को भस्म करने में समर्थ तथा अपने वेग से वायु के वेग को भी तिरस्कृत करनेवाले

समीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाशंसं राजानमकार्षुः । तत्साचिव्यमित
विधाय समुचितां बुद्धिमुपदिश्य शुभे मुहूर्ते सपरिवारं कुमारं विजयाय विसस

(४) राजवाहनो मङ्गलसूचकं शुभशकुनं विलोकयन्देशं कञ्चिदतिक्र
विन्ध्याटवीमध्यमविशत् । तत्र हेतिहतिकिणाङ्कं कालायसकर्कशकायं यज्ञोपवी
नानुमेयविप्रभावं व्यक्तकिरातप्रभावं लोचनपरुषं कमपि पुरुषं ददर्श ।

वेगेन उपहसिताः = तिरस्कृताः, अपमानिताः समीरणा = वायवः यैस्ते तथा
वेगतिरस्कृतपवनाः, रणाभियानेन-रणमभियातीति रणाभियानं तेन रणाभिया
यद्वा रणे युद्धे यत् अभियानं गमनं तादृशेन, यानेन = यात्रया, अभ्युदयाशं
अकार्षुः=कृतवन्तः, तत्साचिव्यम्-तस्य=राजवाहनस्य साचिव्यं=साहाय्यम्, इतरे
अन्येषां कुमाराणाम्, विधाय=कृत्वा, इतरान् कुमारान् राजवाहनस्य सहायता
नियुज्य समुचिताम् = योग्यां, रणोपयोगिनीम्, बुद्धिं=ज्ञानम्, उपदिश्य=आदि
शुभे मुहूर्ते = शोभनक्षणे सपरिवारं—परिवारेण सहितम्, सपरिजनं = सपरिवा
कुमारं = राजवाहनम् विजयाय = विजयं कर्तुम्, विससर्ज = प्रेषयामास ।

(४) राजवाहनः—राजहंससूनुः, मङ्गलसूचकं—शुभोदर्कज्ञानम्, शुभशकुनं
शुभनिमित्तम्, विलोकयन्=अवलोकयन्, कञ्चित् देशं=भूभागम् अतिक्रम्य=उल्लङ्
विन्ध्याटवीमध्यं = विन्ध्यवनान्तरम्, अविशत्=प्राविशत्, तत्र=वनमध्ये, हेति
किणाङ्कम्—हेतीनां=अस्त्राणाम्, हतिभिः—प्रहारैः ये किणाः=व्रणाः तेषाम्, अङ्कं
व्रणचिह्नानि यस्य स तं तथोक्तम्, कालायसवत् = कृष्णलोहवत् कर्कशः = क
कायः = देहो यस्य स तम्, यज्ञोपवीतेन = यज्ञसूत्रेण, अनुमेयविप्रभावं = अनु
योग्यः अनुमेयः विप्रस्य=ब्राह्मणस्य भावः विप्रभावः अनुमेयो विप्रभावो यस्य स
अनुमेयविप्रभावम्, व्यक्तकिरातप्रभावम्—व्यक्तः = प्रकटितः किरातस्य = श
प्रभावः = सामर्थ्यं यस्य स तं तथोक्तम् यज्ञोपवीतेनासौ ब्राह्मणः स्वरूपादि
किरातोऽयमिति ज्ञायते इति भावः । लोचनपरुषम्—लोचनयोः—नेत्रयोः परुषं=

राजकुमारों ने अपनी रणयात्रा के द्वारा राजा राजहंस को अभ्युदयार्थ प्रोत्साहित कर दि
राजा राजहंस ने राजवाहन की सहायता में अन्य कुमारों को लगाकर तथा समुचित
देकर शुभ मुहूर्त में सपरिवार राजवाहन को विजय पाने के निमित्त भेज दिया ।

(४) कुमार राजवाहन मङ्गलसूचक शुभ लक्षणों को देखता हुआ कुछ रास्ता त
विन्ध्याटवी में जा पहुँचा । वहाँ उसने भयङ्कर आँखवाले एक पुरुष को देखा, जिसके
पर अस्त्रों के अनेक चिह्न थे, उसका शरीर काले लोहे के समान कर्कश था, उसके दे

(५) तेन विहितपूजनो राजवाहनोऽभाषत—'ननु मानव, जनसङ्गरहिते मृगहिते घोरप्रचारे कान्तारे विन्ध्याटवीमध्ये भवानेकाकी किमिति निवसति। भवदंसोपनीतं यज्ञोपवीतं भूसुरभावं द्योतयति। हेतिहतिभिः किरातरीतिरनुमीयते। कथय किमेतत्' इति।

(६) 'तेजोमयोऽयं मानुषमात्रपौरुषो नूनं न भवति' इति मत्वा सः पुरुषस्तद्वयस्यमुखान्नामजनने विज्ञाय तस्मै निजवृत्तान्तमकथयत्—'राजनन्दन, केचि-

---

भीषणदर्शनं अथवा लोचनाभ्यां = नेत्राभ्यां परुषं = भयङ्करं कर्कशम्। कमपि = एकम् पुरुषं = मनुष्यम्, ददर्श = दृष्टवान्।

(५) तेन किरातवेशधारिणा पुरुषेण विहितपूजनः = कृतसत्कारः, राजवाहनः = राजहंसकुमारः, अभाषत = अवोचत्, अपृच्छत्। ननु मानव ! = हे पुरुषविशेष ! जनसङ्गरहिते = मनुष्यसम्पर्कशून्ये, मृगहिते—मृगाणां = पशूनां हिते = हितकरे घोरप्रचारे—घोरः = भयजनः प्रचारः = सञ्चारः यस्मिन् तत् तस्मिन् घोरप्रचारे, कान्तारे = दुर्गमे पथि, विन्ध्याटवीमध्ये = विन्ध्यवनैकदेशे भवान् किमिति = किमर्थम्, एकाकी = एकलः निवसति = निवासं करोति। भवतः = तव, स्कन्धेन = अंसेन उपनीतं = धृतं यद्वा भवदंसं स्कन्धमुपनीतं -प्राप्तम्, यज्ञोपवीतं = यज्ञसूत्रम्, भूसुरभावं = विप्रभावं, ब्राह्मणत्वम्, द्योतयति = सूचयति, हेतिहतिभिः = शस्त्रास्त्रघातचिह्नैः, किरातरीतिः = वनचरव्यवहारः, अनुमीयते = तर्क्यते कथय = भण, एतत् = इदं किम् ?।

(६) तेजोमयः = तेजःपुञ्जशरीरः, अयं = एषः, राजवाहनः, मानुषमात्रपौरुषः, मानुषः—प्रमाणमिति मानुषमात्रम् = मनुष्यप्रमाणम्, तथाविधं पौरुषं = पराक्रमं यस्य स तथोक्तः। नूनम् = अवश्यम् न भवति इति मत्वा = अवगम्य सः = पुरुषविशेषः तद्वयस्यमुखात्—तस्य = राजवाहनस्य वयस्यानां = सवयसां

मालूम पड़ता था कि कोई किरात है, किन्तु कन्धे पर जनेऊ पहनने के कारण तो ब्राह्मण प्रतीत होता था।

(५) उस पुरुष ने कुमार राजवाहन का बड़ा सत्कार किया। तब राजवाहन ने उससे पूछा—'हे मानव ! इस निर्जन विन्ध्याटवी के गहन वन में आप क्यों एकाकी निवास कर रहे हैं ? यह वन तो हरिणों के हित के लिए तथा हिंसक जन्तुओं के विचरण करने योग्य है। आपके कन्धे पर धारण किया हुआ यज्ञोपवीत ब्राह्मणत्व को व्यक्त करता है, किन्तु आयुधों के आघात से किरातों जैसा व्यवहार मालूम पड़ता है। बतलायें यह क्या बात है ?'

(६) राजवाहन के मित्रों द्वारा उनके नाम एवं जन्म के सम्बन्ध में पहले से ही जानकर उस पुरुष ने सोचा कि तेजःपुञ्ज आकृतिवाले पुरुष की शक्ति साधारण पुरुषों जैसी नहीं

दस्यामटव्यां वेदादिविद्याभ्यासमपहाय निजकुलाचारं दूरीकृत्य सत्यशौचादिधर्मव्रातं परिहृत्य किल्बिषमन्विष्यन्तः पुलिन्दपुरोगमास्तदन्नमुपभुञ्जाना बहवो ब्राह्मणब्रुवा निवसन्ति, तेषु कस्यचित्पुत्रो निन्दापात्रचारित्रो मातङ्गो नामाहं सह किरातबलेन जनपदं प्रविश्य ग्रामेषु धनिनः स्त्रीबालसहितानानीयाटव्यां बन्धने निधाय तेषां सकलधनमपहरन्नुद्धतो वीतदयो व्यचरम्। कदाचिदेकस्मिन् कान्तारे मदीय-

---

मुखात् = आननात् नामजनने = नाम च जननं चेति नामजनने = आख्योत्पत्ती, कुलनामनी वा विज्ञाय = ज्ञात्वा, तस्मै = राजवाहनाय, निजवृत्तान्तं = स्वकीयोदन्तम्, अकथयत् = श्रावयमास।

राजनन्दन != हे राजपुत्र! केचित्=कतिचन, अस्यामटव्याम् = अस्मिन्नरण्ये, वेदादिविद्याभ्यासम्–वेदादीनां विद्यानाम्, अभ्यासं = आवृत्तिम् अपहाय = त्यक्त्वा निजकुलाचारं = ब्राह्मणकुलोचितं धर्मं दूरीकृत्य=अपहाय, किल्बिषं=पापम्, अन्विष्यन्तः = मार्गमाणाः, पुलिन्दपुरोगमाः–पुलिन्दाः = शबराः पुरोगमाः = पुरःसराः येषां ते किरातनेतारः, तदन्नं = म्लेच्छान्नम्, उपभुञ्जाना = भक्षयन्तः बहवः = बहुसंख्याकाः ब्राह्मणब्रुवाः = आत्मानं ब्राह्मणं ब्रुवन्तीति ब्राह्मणब्रुवाः = ब्राह्मणाधमाः निवसन्ति।

तेषु = ब्राह्मणब्रुवेषु, कस्यचित् = एकस्य पुत्रः = तनयः, निन्दापात्रचारित्रः–निन्दापात्रं=गर्हणीयं चारित्रं=चरितं यस्य स तथोक्तः, मातङ्गो नाम=मातङ्गाख्यः किरातबलेन = शबरसैन्येन सह = साकम्, जनपदं = देशम्, प्रविश्य = उपस्थाय, ग्रामेषु = नगरेषु, धनिनः = धनाढ्यान्, स्त्रीबालसहितान्—स्त्रीभिः = पत्नीभिः बालैः = बालकैश्च सहितान् = युक्तान्, अटव्यां=विपिने, आनीय = नीत्वा, बन्धने = कारागारे निधाय = संस्थाप्य तेषाम् = आनीतानाम्, सकलधनं=समस्तवित्तम् अपहरन् = आत्मसात्कुर्वन् उद्धृत्य = उद्धतो भूत्वा वीतदयः–वीता = विनष्टा, दया = करुणा यस्य स वीतदयः = अपगतकृपः, व्यचरम् = व्यवहरम्।

है। अतः वह कोई अवश्य विशिष्ट तेजस्वी पुरुष है। ऐसा जानकर वह अपना वृत्तान्त राजवाहन से कहने लगा। उसने कहा—राजकुमार! इस विन्ध्याटवी में अपने को ब्राह्मण कहनेवाले अनेक कुत्सित ब्राह्मण निवास करते हैं। ये वेदादि विद्या का अभ्यास ब्राह्मणोचित अपना कुलाचार सत्य, दया एवं धर्मसमूह को छोड़कर केवल पापाचरण में लगे रहते हैं, और किरातों के अधीन रहकर उन्हीं का अन्न खाते हैं।

उन्हीं में से कुत्सित वृत्तिवाले एक ब्राह्मण का मैं पुत्र हूँ, मेरा नाम मातङ्ग है, मेरा चरित्र अति निन्दनीय है। मैं भी भीलों की सेना के साथ जनपदों में जाया करता था और पुत्र कलत्र आदि के साथ नगरों से धनिकों को पकड़कर लाया करता था तथा उन्हें बन्दी बनाकर उनका सारा धन छीन लेता था। इस प्रकार उद्धत एवं निर्दय होकर हमेशा घूम

सहचरगणेन जिघांस्यमानं भूसुरमेकमवलोक्य दयायत्तचित्तोऽब्रवम्—'ननु पापाः, न हन्तव्यो ब्राह्मण' इति।

(७) ते रोषारुणनयना मां बहुधा निरभर्त्सयन्। तेषां भाषणपारुष्यमसहिष्णुरहमवनिसुररक्षणाय चिरं प्रयुध्य तैरभिहतो गतजीवितोऽभवम्।

(८) ततः प्रेतपुरीमुपेत्य तत्र देहधारिभिः पुरुषैः परिवेष्टितं सभामध्ये रत्नखचितसिंहासनासीनं शमनं विलोक्य तस्मै दण्डप्रणाममकरवम्। सोऽपि मामवेक्ष्य

कदाचिद् = एकदा, एकस्मिन् कान्तारे = दुर्गमे मार्गे, मदीयसहचरगणेन, मममित्रसमूहेन जिघांस्यमानं = हन्तुमिष्यमाणम्, हननार्थं नीयमानं एकं भूसुरम् = कञ्चिद् ब्राह्मणम्, अवलोक्य = विलोक्य, दयायत्तचित्तो—दयया = कृपया आयत्तम् = अधीनम् आक्रान्तं चित्तं = मानसं यस्य सः तथोक्तम्, अब्रवम् = अवदम्, अकथयम्, ननु पापाः = नीचकर्मरताः ब्राह्मणो न हन्तव्यः = विप्रो न मारणीयः।

(७) ते = किराताः, रोषारुणनयनाः—रोषेण = क्रोधेन अरुणानि = रक्तवर्णानि नयनानि = नेत्राणि येषां ते तथोक्ताः। मां = मातङ्गम् बहुधा = अनेकप्रकारेण, निरभर्त्सयन् = अतर्जयन्, तेषां = वनेचराणाम्, भाषणपारुष्यं—भाषणस्य = संवादस्य, पारुष्यं = काठिन्यम्, कर्कशवचनानि, असहिष्णुः = असहनशीलः, अहं = मातङ्गः, अवनिसुररक्षणाय—अवनौ = पृथिव्यां, यः सुरः = देवः तस्य अवनिसुरस्य रक्षणं तस्मै तथोक्ताय ब्राह्मणत्राणाय, चिरं = बहुकालम्, प्रयुध्य = प्रकर्षेण युद्धं कृत्वा, तैः = किरातैः, अभिहतः = ताडितः, गतजीवितः—गतं जीवितं = जीवनम् प्राणा यस्य स गतजीवितः = व्यपगतप्राणः, अभवम् = आसम्।

(८) ततः = तदनन्तरम्, प्रेतपुरीम् = यमलोकम्, उपेत्य = प्राप्य, तत्र = यमालये, देहधारिभिः = सशरीरैः, पुरुषैः = किंकरैः, परिवेष्टितम् = परिवृत्तम्, सभामध्ये = समितिमध्ये रत्नखचितसिंहासनासीनं—रत्नैः = महार्हैः मणिभिः खचितं = व्याप्तम्, यत् सिंहासनं = भद्रासनं तत्र आसीनम् = उपविष्टम्, शमनं = यमम्, विलोक्य = वीक्ष्य तस्मै = यमाय, दण्डप्रणामं = दण्डवत् नमस्कारम्,

---

करता था। एक दिन एक दुर्गम वन में एक ब्राह्मण की हत्या करने में उद्यत अपने मित्रों को देख मुझे दया आ गयी और मैंने कहा—अरे पापियो! ब्राह्मण की हत्या नहीं करनी चाहिए।

(७) यह सुन वे लाल-लाल आँखें बनाकर मुझे डाँटने लगे। उनकी कटु निर्भर्त्सना को मैं न सह सका तथा ब्राह्मण की रक्षा के निमित्त उनसे देर तक लड़ता रहा। अन्त में उनके प्रहार से मेरा प्राणान्त हो गया।

(८) मरने के बाद मैं यमपुरी में पहुँचा। वहाँ शरीरधारी पुरुषों से घिरे सभा के बीच रत्नजटित सिंहासन पर विराजमान यमराज को देखकर उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया, उन्होंने

चित्रगुप्तं नाम निजामात्यमाहूय तमवोचत्—'सचिव, नैषोऽमुष्य मृत्युसमयः निन्दितचरितोऽप्ययं महीसुरनिमित्तं गतजीवितोऽभूत्। इतः प्रभृति विगलित कल्मषस्यास्य पुण्यकर्मकरणे रुचिरुदेष्यति। पापिष्ठैरनुभूयमानमत्र यातनाविशे विलोक्य पुनरपि पूर्वशरीरमनेन गम्यताम्' इति।

(६) चित्रगुप्तोऽपि तत्र तत्र सन्तप्तेष्वायसस्तम्भेषु बध्यमानान्, अत्युष्णीकृ वितत्तशरावे तैले निक्षिप्यमाणान्, लगुडैर्जर्जरीकृतावयवान् निशितटङ्कैः परितक्ष्य

अकरवम् = कृतवान्, सः = यमोऽपि मां = मातङ्गम्, अवेक्ष्य = विलोक्य चित्रगु नाम = चित्रगुप्ताख्यम् प्रसिद्धं निजामात्यम् = स्वमन्त्रिम्, आहूय = आकार्य, तं = चित्रगुप्तम्, अवोचत्। सचिव ! = मन्त्रिन् ! अमुष्य = अस्य, एषः = अयम् मृत्युसमयः = मरणकालः, न = नहि।

निन्दितचरितः—निन्दितम् = गर्हितम्, अशोभनीयं चरितं=चरित्रम्, आचरण यस्य स तथाभूतः, अपि अयम् = एषः, महीसुरनिमित्तं = ब्राह्मणार्थम्, ग जीवितः = विगतप्राणः, अभूत् = अजायत्, इतः प्रभृति = अस्माद् दिनात् आरम्भ विगलितकल्मषस्य—विगलितं = अपगतम् कल्मषं = पापं यस्य स तस्य, अस्य = अमुष्य मातङ्गस्य पुण्यकर्मकरणे—पुण्यानां = सुकृतानां कर्मणां करणे = सम्पादने रुचिः—अभिलाषः, बुद्धिः उदेष्यति=उत्पत्स्यते, अत्र—नरके पापिष्ठैः—पापाचारिभिः पापात्मभिः, अनुभूयमानम् = भुज्यमानम्, अत्र = यमालये नरके वा, यातना विशेषम् = पीडाविशेषम्, विलोक्य = दृष्ट्वा, गम्यतां = व्रज्यताम्।

(९) चित्रगुप्तोऽपि = यमामात्योऽपि, तत्र—तत्र = स्थाने-स्थाने, सन्तप्तेषु = अत्युष्णीकृतेषु, आयसस्तम्भेषु = लौहनिर्मितस्थूणासु बाध्यमानान्—बाध्यन्ते इति बाध्यमानास्तान्, अत्युष्णीकृते = सन्तप्ते विततशरावे तैले = स्नेहे, निक्षिप्यमाणान् पपात्यमानान्, लगुडैः = दण्डैः, यष्टिभिः, जर्जरीकृतावयवान् = जर्जरीकृताः प्रहारैः शिथिलीकृता अवयवा अङ्गानि येषां ते तान्, निशितटङ्कैः—निशिताः = तीक्ष्णाः

भी मुझे देखा और चित्रगुप्त नामक अपने मन्त्री को बुलाकर कहा—मन्त्रिवर ! अभी इस पुरुष की मृत्यु का समय नहीं है। यद्यपि इसका आचरण अत्यन्त निन्दित है, फिर भी यह पृथ्वी के देवता ब्राह्मण के लिए मरा है। उस पुण्य से अब इसके सारे पाप नष्ट हो गये। आज से इसकी बुद्धि पापाचरणरहित होकर धर्माचरण में लगेगी। अतः पापियों को दी जानेवाली नरकयातना को दिखाकर इसे पुनः पहले शरीर में भेज देना चाहिए।

(९) चित्रगुप्त ने भी मुझे ले जाकर निम्नाङ्कित नरक यातनाएँ दिखायीं, वहाँ पर देखा कि जीवों को यत्र-तत्र लोहे के तप्त खम्भों में बाँधा जा रहा था, कहीं-कहीं खूब गरम किये तेल के बड़े-बड़े कड़ाहों में जीवों फेंका जा रहा है, यत्र-तत्र लाठी के प्रहारों से,

माणानपि दर्शयित्वा पुण्यबुद्धिमुपदिश्य मामभुञ्चत्। तदेव पूर्वशरीरमहं प्राप्तो महाटवीमध्ये शीतलोपचारं रचयता महीसुरेण परीक्ष्यमाणः शिलायां शयितः क्षणमतिष्ठम्।

(१०) तदनु विदितोदन्तो मदीयवंशबन्धुगुणः सहसागत्य मन्दिरमानीय मामपक्रान्तव्रणमकरोत्। द्विजन्मा कृतज्ञो मह्यमक्षरशिक्षां विधाय विविधागम-तन्त्रमाख्याय कल्मषक्षयकारणं सदाचारमुपदिश्य ज्ञानेक्षणगम्यमानस्य शशिखण्ड-शेखरस्य पूजाविधानमभिधाय पूजां मत्कृतामङ्गीकृत्य निरगात्।

ते टङ्काश्चेति निशितटङ्काः तैः निशितटङ्कैः = तीक्ष्णपाषाणदारणैः, परितक्ष्यमाणान् = तनूक्रियमाणान् अपि दर्शयित्वा = प्रदर्श्य, पुण्यबुद्धिं = धर्ममतिम्, उपदिश्य = आदिश्य, मां = मातङ्गम्, अमुञ्चत् = त्यक्तवान्, तत् = पूर्वशरीरम्, एव अहं प्राप्तः = उपगतः, महाटवीमध्ये = विन्ध्याटवीवनमध्ये शीतलोपचारं = शिशिरोपचारं रचयता = कुर्वता, महीसुरेण = ब्राह्मणेन, परीक्ष्यमाणः = अवलोक्यमानः, जीवति न वेति संशयालुः, शिलायां = प्रस्तरे, शयितः = सुप्तः, क्षणं = मुहूर्तम्, यावत् अतिष्ठम् = स्थितवान्।

(१०) तदनु = तत्पश्चात्, विदितोदन्तः—विदितः = ज्ञातः, उदन्तः = वृत्तान्तो येन सः, मदीयवंशबन्धुगणः = मम ज्ञातिवर्गः, सहसा = अतर्कितम् आगत्य = उपस्थाय, मन्दिरम् = भवनम्, आनीय = नीत्वा, अपक्रान्तव्रणम्, अपक्रान्तः = औषधोपचारेण चिकित्सितः, व्रणः=आघातस्थानम्, यस्य स तं तथोक्तम् मां = मातङ्गम्, अकरोत् = अकार्षीत्, द्विजन्मा = ब्राह्मणः, मह्यं = मातङ्गाय, अक्षरस्य = लिपेः शिक्षाम् = ज्ञानम् अक्षरशिक्षाम्, विधाय = दत्त्वा, विविधागम-तन्त्रं—विविधानां = नानाप्रकाराणाम् आगमानां = शास्त्राणाम्, तन्त्रं = सिद्धान्तम्, आख्याय = उपदिश्य कथयित्वा, कल्मषक्षयकारणम्—कल्मषानां = पापानां क्षये = नाशे कारणं = निमित्तभूतम्, सदाचारं—सतां = सज्जनानाम्, आचारः = विचारः

के अंग-अंग किये जा रहे हैं और कहीं-कहीं पापी जीवों को आरी से चीरा जा रहा था। बाद चित्रगुप्त ने उपर्युक्त यातनाओं को दिखाकर मुझे पुण्य बुद्धि का उपदेश देकर छोड़ दिया। मैं पुनः अपने उसी पुराने शरीर में आ गया और देखा कि वहाँ ब्राह्मण, जिसके लिए मैं लड़कर मर गया था, वही मेरे मृत शरीर की शीतलोपचार से रक्षा कर रहा है तथा मेरे शरीर को एक शिला के ऊपर सुलाये हुए रखे है। मैं क्षणभर उसी दशा में लेटा रहा।

(१०) उसके बाद मेरे वंशज मेरा सारा समाचार सुनकर अचानक वहाँ आ गये और मुझे घर लिवा गये। वहाँ सेवा-शुश्रूषा, मलहम पट्टी के द्वारा मेरे व्रणों को अच्छा कर दिया। वृद्ध ब्राह्मण ने बड़ा उपकार माना, उसने मुझे अक्षर का ज्ञान कराया, अनेक आगम तन्त्र

(११) तदारभ्याहं किरातकृतसंसर्गं बन्धुवर्गमुत्सृज्य सकललोकैकगुरुमिन्दुकलावतंसं चेतसि स्मरन्नस्मिन्कानने दूरीकृतकलङ्को वसामि। 'देव, भवते विज्ञापनीयं रहस्यं किञ्चिदस्ति। आगम्यताम्' इति।

(१२) स वयस्यगणादपनीय रहसि पुनरेनमभाषत—'राजन्, अतीते निशान्ते गौरीपतिः स्वप्नसन्निहितो निद्रामुद्रितलोचनं विबोध्य प्रसन्नवदनकान्तिः प्रश्रया-

तं सदाचारं = महद्भिरुपासितं मार्गम्, ज्ञानेक्षणगम्यमानस्य—ज्ञानेक्षणेन = ज्ञाननेत्रेण गम्यमानस्य = अवबुध्यमानस्य, न तु चक्षुषा दृश्यस्य, शशिखण्डेभ्वरस्य शशिनः=चन्द्रमसः खण्डं=शकलम्, कला तत् शेखरे=भाले यस्य स तस्य तथोक्तस्य भगवतः शिवस्य, पूजाविधानं = अर्चाविधिम्, अभिधाय=प्रशिक्ष्य, मत्कृतां = मया सम्पाद्यमानाम्, पूजाम् = अर्चाम्, सत्कारम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, निरगात् = निरगच्छत्।

(११) तदारभ्य—तत्प्रभृति, अहं = मातङ्गः, किरातकृतसंसर्गः = किरातैः-वनेचरैः कृतः = विहितः, संसर्गः = सम्पर्कः येन स तम् तथोक्तम्, बन्धुवर्गम् = बान्धवसमूहम्, उत्सृज्य = त्यक्त्वा, सकललोकैकगुरुम्—सकलानां = समेषां, लोकानाम्=प्राणिनाम् एकम् = अद्वितीयम्, गुरुम् इन्दुकलावतंसम्—इन्दोः = चन्द्रमसः, कला=षोडशोभागः अवतंसः = शिरोभूषणं यस्य स तम् चेतसि = हृदये स्मरन् = चिन्तयन्, अस्मिन् कानने=अत्र वने, दूरीकृतकलङ्कः—दूरीकृतः=प्रक्षालितः कलङ्कः=पापं येन स तथाभूतः = निष्कलङ्कः, अहं=मातङ्गः, वसामि = निवसामि। देव!= राजकुमार! भवते = तुभ्यम्, रहस्यं = गोप्यम्, विज्ञापनीयम् = निवेदनीयम्, किञ्चित् = ईषद् अस्ति = वर्तते, अतो मया सह आगम्यताम् = आव्रज्यताम्।

(१२) सः — मातङ्गः, वयस्यगणात् = मित्रमण्डलात्, अपनीय=दूरं नीत्वा, रहसि = एकान्ते, पुनः = भूयः, एनं = राजवाहनम्, अभाषत = उवाच, राजन्! = देव, अतीते = विगते, निशान्ते = रात्रिशेषे उपसि, गौरीपतिः = पार्वतीपतिः भगवान् शङ्करः, स्वप्नसन्निहितः = स्वप्ने निद्रावस्थायाम्, सन्निहितः = समीपमागतः

पढ़ाये, पापनाशक सदाचार का उपदेश देकर ज्ञान की दृष्टि से जानने योग्य भगवान् शङ्कर की पूजा-विधि बतलायी, मेरे द्वारा किया गया सत्कार, दक्षिणा आदि को ग्रहण कर चला गया।

(११) उसी दिन मैं किरातों के साथ सम्बन्ध रखनेवाले अपने बान्धवों को त्यागकर समस्त भुवनों के एकमात्र कारण भगवान् शङ्कर की सेवा में दृढचित्त हो उन्हीं को हृदय से स्मरण करता हुआ सभी पापाचरणों से दूर रहकर इस वन में निवास करता हूँ। हे देव! आपसे एकान्त में मुझे कुछ गोपनीय कहना है। अतः आप मेरे साथ आइए।

(१२) मातङ्ग मित्रमण्डल से अलग ले जाकर राजवाहन से कहने लगा—राजन्!

नतं मामवोचत्—'मातङ्ग, दण्डकारण्यान्तरालगामिन्यास्तटिन्यास्तीरभूमौ सिद्ध-साध्याराध्यमानस्य स्फटिकलिङ्गस्य पश्चादद्रिपतिकन्यकापदपङ्क्तिचिह्नितस्याश्मनः सविधे विधेराननमिव किमपि बिलं विद्यते। तत्प्रविश्य तत्र निक्षिप्तं ताम्रशासनं शासनं विधातुरिव समादाय विधिं तदुपदिष्टं दिष्टविजयमिव विधाय पाताल-लोकाधीश्वरेण भवता भवितव्यम्। भवत्साहाय्यकरो राजकुमारोऽद्य श्वो वा समा-

निद्रामुद्रितलोचनं—निद्रया मुद्रिते = निमीलिते लोचने = नयने यस्य तं तथोक्तम्, मां, विबोध्य = प्रबोध्य प्रसन्नवदनकान्तिः-प्रसन्ना = सौम्या, वदनस्य = मुखस्य कान्तिः = शोभा = छटा यस्य सः, प्रश्रयावनतं-प्रश्रयेण = प्रणयेन आनतं = नम्नशिरस्कम् माम् = मातङ्गम्, अवोचत् = अवादीत्, मातङ्ग ! = हे मातङ्ग दण्डकारण्यान्तरालगामिन्याः = दण्डकारण्यवनमध्यसंचरणशीलायाः तटिन्याः = नद्याः, तीरभूमौ = तटप्रदेशे, सिद्ध-साध्याराध्यमानस्य—सिद्धैः = गुह्यकादिभिः साध्यैः = गणदेवताभिः आराध्यमानस्य = उपास्यमानस्य, स्फटिकलिङ्गस्य = स्फटिकनिर्मितशिवस्य, पश्चात् = पश्चिमे भागे, अद्रिपतिकन्यापदपङ्क्तिचिह्नितस्य—अद्रिपतेः = हिमालयस्य, कन्यायाः = पार्वत्याः, पदपद्धत्या = चरणपद्धत्या, चिह्नितस्य = अङ्कितस्य, अश्मनः = पाषाणस्य, सविधे = समीपे, विधेः = ब्राह्मणः, आननं = मुखम्, इव = सदृशम्, किमपि = एकम् बिलं = विवरं = छिद्रम्, विद्यते = वर्तते।

तत् = बिलम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, तत्र = बिले, निक्षिप्तं = स्थापितम् ताम्रशासनं = ताम्रपत्रम्, विधातुः = ब्रह्मणः, शासनम् = आज्ञापत्रम्, इव = सदृशम्, समादाय = गृहीत्वा, तदुपदिष्टम् = ताम्रपत्रे लिखितम्, दिष्टविजयम् = भाग्यस्य विजयकारिणम्, विधिं = व्यापारम्, विधाय = कृत्वा, पाताललोकाधी-श्वरेण—पाताललोकस्य = रसातलस्य अधीश्वरेण = स्वामिना, भवता = त्वया मातङ्गेन भवितव्यम्, भवतः = तव साहाय्यकरः = सहाय्यकारी, राजकुमारः = राजवाहनः, अद्य श्वो वा = अस्मिन्नहनि आगामिदिने वा, समागमिष्यति = एष्यति।

गत रात में भगवान् शङ्कर ने मुझे सोते हुए जगाकर कहा—मातङ्ग ! दण्डकारण्य के बीच में बहती हुई नदी के तट पर सिद्ध एवं साध्यों से आराध्यमान स्फटिक निर्मित शिवलिंग के पीछे पार्वती देवी के चरणों से चिह्नित पत्थर के पास ब्रह्मा जी के मुख के समान एक बिल है। उस विवर में प्रविष्ट होकर वहाँ ब्रह्मा के शासन के समान रखे हुए ताम्रपात्र में लिखी हुई विधि को भाग्योदय लिपि मानकर कार्य करो, तुम पाताल लोक के राजा बन जाओगे। इस कार्य में तुम्हारी सहायता करनेवाला एक राजकुमार आज या कल तुम्हारे समीप

गमिष्यति' इति। तदादेशानुगुणमेव भवदागमनमभूत्। साधनाभिलाषिणो मम तोषिणो रचय साहाय्यम्' इति।

(१३) 'तथा' इति राजवाहनः साकं मातङ्गेन नमितोत्तमाङ्गेन विहायार्धरात्रे निद्रापरतन्त्रं मित्रगणं वनान्तरमवाप। तदनु तदनुचराः कल्येन साकल्ये राजकुमारमनवलोकयन्तो विषण्णहृदयास्तेषु तेषु वनेषु सम्यगन्विष्यानवेक्षमाणा एतदन्वेषणमनीषया देशान्तरं चरिष्णवोऽतिसहिष्णवो निश्चितपुनःसंकेतस्थानाः परस्परं वियुज्य ययुः।

तदादेशानुगुणमेव = तस्य स्वप्नकथितस्य आदेशस्य = आज्ञायाः अनुगुणम् = अनुरूपमेव, अनुकूलमेव, भवदागमनम्—भवतः = राजवाहनस्य आगमनम् – समागमनम्, अभूत् = अजायत, साधनाभिलषिणः = साधनमभिलषते इति साधनाभिलाषी तस्य साधनाभिलाषिणः = तत्कार्यसिद्धिः कामयमानस्य, तोषिणः–सन्तुष्टस्य मम – मातङ्गस्य साहाय्यं = सहायताम्, रचय – विधेहि।

(१३) तथा इति = यथा भवान् वक्ति तथा एव अस्तु इति तत्प्रार्थनां स्वीकृत्य राजवाहनः – राजकुमारः नमितोत्तमाङ्गेन—नमितं=नम्रीभूतम् उत्तमाङ्गं= शिरः यस्य स तेन तथाभूतेन नम्रशिरसा, मातङ्गेन = मातङ्गनाम्ना ब्राह्मणेन, साकं = सह, निद्रापरतन्त्रं—निद्रायाः = संवेशस्य परतन्त्रम् = अधीनम्, निद्रापरतन्त्रं मित्रगणं = सुहृद्वर्गं, विहाय = त्यक्त्वा अर्धरात्रे = निशीथे, वनान्तरम् = अन्यद्वनम् अवाप = प्राप। तदनु = तत्पश्चात् अनुचराः = तस्य राजवाहनस्य भृत्याः, कल्ये = प्रत्यूषे ('प्रत्यूषोऽहर्मुखं कल्यमि'त्यमरः।) साकल्येन = समग्रेण, सर्वतोभावेन सर्वं सर्वत्र राजकुमारम् = राजवाहनम्, अनवलोकयन्तः = अनवेक्षमाणाः विषण्णहृदयाः–विषण्णं = खिन्नं हृदयं = चित्तं येषां ते विषण्णहृदया = खिन्नान्तःकरणाः तेषु तेषु वनेषु = तत्तदरण्येषु सम्यक् = सुष्ठुतया, अन्विष्य = मार्गयित्वा, अनवेक्षमाणाः = अनवलोकयन्तः, एतदन्वेषणमनीषया— एतस्य = राजवाहनस्य अन्वेषणस्य = गवेषणस्य मनीषया = बुद्धया, देशान्तरं =

आयेगा। भगवान् शङ्कर के उस आदेशानुसार आपका आगमन हुआ है। अतः अब आप मुझे सन्तुष्ट एवं कार्यसाधनाभिलाषी की सहायता करें।

(१३) 'मैं आपकी सहायता करूँगा' ऐसा कहकर राजकुमार राजवाहन आधी रात के समय सोते हुए मित्रों को छोड़कर नतमस्तक मातङ्ग के साथ दूसरे वन में चला गया। बाद वनों में अच्छी तरह ढूँढ़ने पर भी जब वह नहीं मिला, तब वे साहसी कुमार उसे ढूँढ़ने की कामना से अन्य देशों में जाने को तैयार हो गये और उन अतिसाहसी कुमारों ने पुन

(१४) लोकैकवीरेण कुमारेण रक्ष्यमाणः सन्तुष्टान्तरङ्गो मातङ्गोऽपि बिलं शशिशेखरकथिताभिज्ञानपरिज्ञातं निःशङ्कं प्रविश्य गृहीतताम्रशासनो रसातलं पथा तेनैवोपेत्य तत्र कस्यचित्पत्तनस्य निकटे केलीकाननकासारस्य विततसारसस्य समीपे नानाविधेनेशशासनविधानोपपादितेन हविषा होमं विरच्य प्रत्यूहपरिहारिणि

अन्यद्देशम्, चरिष्णवः = गमनशीलाः गन्तुकामाः, अतिसहिष्णवः = क्लेशसहनशीलाः क्लेशविषयं सोढुं समर्थाः, निश्चितपुनःसंकेतस्थानाः—निश्चितं = निर्णीतं पुनःसंकेतस्थानं = भूयो मिलनचिह्नस्थलम्, यैस्ते तथोक्ताः, परस्परम् = अन्योन्यम्, वियुज्य – पृथग्भूय, ययुः = जग्मुः।

(१४) लोकैकवीरेण = एकश्चासौ वीरः एकवीरः लोकेषु – त्रिभुवनेषु एकवीरः = अद्वितीयो वीरः तेन लोकैकवीरेण कुमारेण – राजवाहनेन रक्ष्यमाणः – गोप्यमानः सन्तुष्टान्तरङ्गः—सन्तुष्टं = हृष्टम्, अन्तरङ्गं मानसं यस्य स सन्तुष्टान्तरङ्गः = हृष्टमानसः प्रीतान्तकरणः मातङ्गः अपि शशिशेखरकथिताभिज्ञानपरिज्ञातम्—शशिशेखरेण = भालचन्द्रेण कथितं = उक्तम्, यत् अभिज्ञानं = लक्षणं तेन परिज्ञातं = अवगतम्, बिलं = विवरम्, निःशङ्कं = निर्भयम्, यथा स्यात्तथा प्रविश्य = अन्तर्गत्वा, गृहीतताम्रशासनः—गृहीतं = आदत्तं ताम्रशासनं = ताम्रपत्रं येन स तथोक्तः स मातङ्गः, तेनैव = विवरेण, पथा = मार्गेण, रसातलम् = पृथ्वीतलम्, उपेत्य = प्राप्य, तत्र = रसातले, कस्यचित् = एकस्य, पत्तनस्य = नगरस्य निकटे = समीपे विततसारसस्य—वितताः = सर्वतः प्रसृताः सारसाः – पक्षिविशेषाः हंसा यस्मिन् स तस्य, केलीकाननकासारस्य—केल्याः = क्रीडायाः यत् काननं = उद्यानं तस्मिन् यः कासारः = सरः तस्य, समीपे = निकटे, नानाविधेन = बहुप्रकारेण ईशशासनविधानोपपादितेन—ईशस्य – भगवतः शिवस्य यत् शासनं तदेव विधानम् = आज्ञाविधिः तेन उपपादितं – सम्पादितं, निर्मितं तेन तथोक्तेन हविषा = हवनीयद्रव्येण, होमं = आहुतिं विरच्य = विधाय, सविस्मयं = साश्चर्यं, निरीक्षयति- पश्यति प्रत्यूहपरिहारिणि प्रत्यूहः = विघ्नः तं परिहर्तुं शीलमस्य सः

मिलने के निमित्त पुनः संकेत स्थान भी निश्चित कर दिया। इसके पश्चात् वे अलग-अलग दिशाओं में खोजने के लिए चल दिये।

(१४) विश्व के अद्वितीय वीर राजवाहन द्वारा सुरक्षित होने के कारण प्रसन्नचित्त उस मातङ्ग ने भी भगवान् शङ्कर द्वारा निर्दिष्ट चिह्नों से परिज्ञात विवर में निःशङ्क होकर प्रवेश किया और ताम्रफलक लेकर उसी मार्ग से पाताल लोक में चला गया। वहाँ एक नगर के समीप सारस पक्षियों से युक्त क्रीडोद्यान में वर्तमान तालाब के पास ताम्रपत्र निर्दिष्ट शिवजी के आज्ञानुसार एकत्र की गयी सामग्रियों से होम करके विघ्नविनाशक राजवाहन के

सविस्मयं विलोकयति राजवाहने समिधाज्यसमुज्ज्वलिते ज्वलने पुण्यगेहं देहं मन्त्रपूर्वकमाहुतीकृत्य तडित्समानकान्ति दिव्यां तनुमलभत।

(१५) तदनु मणिमयमण्डनमण्डलमण्डिता सकललोकललनाकुलललामभूता कन्यका काचन विनीतानेकसखीजनानुगम्यमाना कलहंसगत्या शनैरागत्यावनिसुरोत्तमाय मणिमेकमुज्ज्वलाकारमुपायनीकृत्य तेन 'का त्वम्' इति पृष्टा सोत्कण्ठा कलकण्ठस्वनेन मन्दं मन्दमुदञ्जलिरभाषत।

तस्मिन् तथोक्ते = विघ्नविनाशके राजवाहने, समिधाज्यसमुज्ज्वलिते-समिद्भिः = काष्ठैः आज्यैः = हविभिः समुज्ज्वलिते = सम्यक् प्रकारेण उद्दीपिते, ज्वलने = अग्नौ पुण्यगृहं = पुण्याधामम्, देहं = शरीरं मन्त्रपूर्वकं = समन्त्रं यथास्यात्तथा आहुतीकृत्य = अग्नौ प्रक्षिप्य, तडित्समानकान्तिम्—ताडिताः = विद्युता समानाः = तुल्या कान्तिः = प्रभा यस्याः सा तां तथोक्ताम् दिव्याम् = दैवीम् स्वर्गीयमपूर्वमनोहराम्, तनुं = शरीरम् अलभत् = अविन्दत।

(१५) तदनु = तत्पश्चात्, मणिमयमण्डनमण्डलमण्डिता—मणिमयानां = रत्नप्रचुराणाम् मण्डनानां = भूषणानां मण्डलैः = समूहैः मण्डिता = अलङ्कृता, सकललोकललनाकुलललामभूता—सकलस्य = समस्तस्य लोकस्य = भुवनस्य ललनाकुलेषु = कामिनीगणेषु ललामभूता = भूषणस्वरूपा काचन—एका कन्यका = कुमारी, विनीता—नम्रा अनेकसखीजनानुगम्यमाना—अनेकैः = बहुभिः सखीजनैः—सहचरीवर्गैः अनुगम्यमाना = अनुस्रियमाणा, कलहंसवत् गतिः = गमनं यस्याः सा कलहंसगतिः तया कलहंसगत्या = राजहंसवन्मन्थरगमनेन शनैः—मन्दं-मन्दम् आगत्य—समीपमुपस्थाय, अवनिसुरोत्तमाय = ब्राह्मणवराय, मातङ्गाय, उज्ज्वलाकारं = देदीप्यमानम् एकं मणिम् = रत्नविशेषम् उपायनीकृत्य = समर्प्य तेन = मातङ्गेन का त्वम् = त्वं काऽसि इति = एवं पृष्टा सती, सोत्कण्ठा = सोत्सुका, कलकण्ठस्वनेन कलकण्ठः = कोकिलः तस्य स्वनेन = ध्वनिना कोकिलस्वरेण उदञ्जलिः = बद्धाञ्जलिः, मन्दं मन्दं = शनैः, अभाषत = अवोचत्।

आश्चर्यपूर्वक देखते-देखते आग एवं इन्धन से प्रज्वलित अग्नि में पुण्य के आधार शरीर की मन्त्र से आहुति दे दी, पश्चात् बिजली जैसा देदीप्यमान दिव्य स्वर्गीय शरीर धारण कर लिया।

(१५) इसके बाद रत्नों के अलङ्कारों से अलंकृत, विश्व की सारी स्त्रियों में श्रेष्ठ एक कुमारी ने विनीत सखियों के साथ राजहंस की चाल से धीरे-धीरे शरीरधारी ब्राह्मण के पास आकर एक उज्ज्वल मणि उसे भेंट की। उस पुरुष द्वारा 'तुम कौन हो' ऐसा पूछे जाने पर उस अनिन्द्य कुमारी ने उत्सुकतापूर्वक कोयल जैसे मधुर स्वर में हाथ जोड़कर उत्तर देना प्रारम्भ किया।

(१६) "भूसुरोत्तम, अहमसुरोत्तमनन्दिनी कालिन्दी नाम। मम पितास्य लोकस्य शासिता महानुभावो निजपराक्रमासहिष्णुना विष्णुना दूरीकृतामरे समरे यमनगरातिथिरकारि। तद्वियोगशोकसागरमग्नां मामवेक्ष्य कोऽपि कारुणिकः सिद्धतापसोऽभाषत—

(१७) 'बाले, कश्चिद्दिव्यदेहधारी मानवो नवो वल्लभस्तव भूत्वा सकलं रसातलं पालयिष्यति' इति। तदादेशं निशम्य घनशब्दोन्मुखी चातकी वर्षागमन-

---

(१६) भूसुरोत्तम! = ब्राह्मणश्रेष्ठ! अहम् असुरोत्तमनन्दिनी-असुरोत्तमस्य = असुरराजस्य नन्दिनी = कन्या अस्मि, कालिन्दी = कालिन्दी नाम्नी, मम पिता = मे जनकः, अस्य = पाताललोकस्य शासिता = शासकः पालकः, महानुभावः— महान् अनुभावः = प्रभावो यस्य सः महानुभावः = महाप्रतापः, निजपराक्रमासहिष्णुना—निजस्य = स्वस्य, पराक्रमस्य = प्रभावस्य, असहिष्णुः तेन तथोक्तेन = स्वप्रभावसहनासमर्थेन, विष्णुना = नारायणेन, दूरीकृतामरे—दूरीकृताः = विजिताः अमराः—देवा यस्मिन् स तस्मिन्, समरे = आहवे, यमनगरातिथिः = यमलोकस्याभ्यागतः अकारि = कृतः, मारित इत्यर्थः। तद्वियोगशोकसागरमग्नां—तस्य = पितुः वियोगः = विनाशः तस्मात् यः शोकः एव सागरः = समुद्रः तत्र मग्ना तां तथोक्ताम् = जनकवियोगशोकसागरे निमज्जन्तीम् मां = कालिन्दीम्, अवेक्ष्य = अवलोक्य, कोऽपि = एकः कारुणिकः = दयावान्, सिद्धतापसः = सिद्धतपस्वी, ज्ञानवान् योगी, अभाषत = अकथयत्।

(१७) बाले! कश्चित् = एकः, दिव्यदेहधारी = दिव्यशरीरभृत्, मानवः = मनुष्यः, तव = भवत्याः, नवः = नूतनः, वल्लभः = पतिः, भूत्वा सकलं = सम्पूर्णम्, रसातलं = पाताललोकम्, पालयिष्यति = रक्षिष्यति, तस्य = सिद्धतापसस्य, आदेशं = वचनम्, निशम्य = श्रुत्वा, घनशब्दोन्मुखी—घनस्य = मेघस्य, शब्देन = गर्जनेन ध्वनिना, उन्मुखी = ऊर्ध्वमुखी, मेघध्वनिमाकर्ण्योर्ध्वानना, चातकी = सारङ्गी,

---

(१६) हे द्विजश्रेष्ठ! मैं असुरराज की कन्या हूँ, मेरा नाम कालिन्दी है, परम प्रतापी मेरे पिता इस पाताल लोक के शासक थे, जब उन्होंने अपने पराक्रम से समर में देवताओं को पराजित कर दिया तब इस पराक्रम को सहन करनेवाले विष्णु ने मेरे पिता को संग्राम में मार डाला। उनके वियोगरूपी शोक सागर में निमग्न मुझे देखकर एक दयालु सिद्ध तपस्वी ने मुझसे कहा—

(१७) 'कोई दिव्य देह धारण करनेवाला नवीन पुरुष तुम्हारा पति होगा वही समस्त पाताल का स्वामी होगा।' उसी आदेश को शिरोधार्य करके मैं मेघ के शब्द को सुनकर ऊपर शिर को उठाकर वर्षा की प्रतीक्षा करनेवाली चातकी की तरह आपके

मिव तवालोकनकाङ्क्षिणी चिरमतिष्ठम्। मन्मनोरथफलायमानं भवदागमनमवगम्य मद्राज्यावलम्बभूतामात्यानुमत्या मदनकृतसारथ्येन मनसा भवन्तमागच्छम्। लोकस्यास्य राजलक्ष्मीमङ्गीकृत्य मां तत्सपत्नीं करोतु भवान्" इति।

(१८) मातङ्गोऽपि राजवाहनानुमत्या तां तरुणीं परिणीय दिव्याङ्गनालाभेन हृष्टतरो रसातलराज्यमुररीकृत्य परमानन्दमाससाद।

(१९) वञ्चयित्वा वयस्यगणं समागतो राजवाहनस्तदवलोकनकौतूहलेन भुवं

वर्षागमनम् = प्रावृडागमनमिव, तव = भवतः, आलोकनाकाङ्क्षिणी = आलोकनस्य = दर्शनस्य, आकाङ्क्षा = स्पृहा, यस्या सा, तवालोकनकाङ्क्षिणी = त्वद्दर्शनाभिलाषिणी, अहम्, चिरं = बाहुकालं अतिष्ठम् = प्रत्यैक्षिषि, मन्मनोरथफलायमानम् मम = कालिन्द्याः, मनोरथस्य = आकाङ्क्षायाः, फलायमानं = फलभूतम्, भवदागमनं = त्वदागमनम्, अवगम्य = ज्ञात्वा, मद्राज्यावलम्बभूतामात्यानुमत्या मम राज्यस्य = पाताललोकस्य, अवलम्बभूतानां = रक्षकाणाम्, अमात्यानां = मन्त्रिणाम्, अनुमत्या = सम्मत्या, मदनकृतसारथ्येन—मदनेन = कामेन, कृतं = सम्पादितम्, सारथ्यं = सारथित्वम्, यस्य तत् तेन तथोक्तेन, मनसा = हृदयेन, भवन्तं = त्वाम्, भवत्समीपम्, आगच्छम् = उपस्थिता। अस्य लोकस्य = पाताललोकस्य राज्यलक्ष्मीम् = सौभाग्यश्रियम्, स्वीकृत्य माम् = कालिन्दिम्, तत्सपत्नीम्—तस्याः राज्यलक्ष्म्याः सपत्नीं = प्रतिपक्षवनितां द्वितीयां तां करोतु = विदधातु भवान्।

(१८) मातङ्गोऽपि राजवाहनानुमत्या—राजकुमारादेशेन, तां = तरुणीं युवतीम् कालिन्दीं परिणीय = विवाह्य दिव्याङ्गनालाभेन दिव्याङ्गनायाः = स्वर्गीयाङ्गनायाः लाभेन = प्राप्त्या हृष्टतरः = अतिप्रसन्नः रसातलराज्यं = पाताललोकम्, उररीकृत्य = स्वीकृत्य, परमानन्दम् = उत्कृष्टानन्दम्, आससाद = प्राप।

(१९) वयस्यगणं = मित्रमण्डलम्, वञ्चयित्वा = प्रतार्य, मातङ्गेन सार्कं, समागतः राजवाहनः, तदवलोकनकौतूहलेन—तस्य = वयस्यगणस्य अवलोकन-

---

दर्शन की प्रतीक्षा में अधिक दिनों से बैठी थी। आपके आगमन को अपने मनोरथ का फल जानकर अपने राज्य का संचालन करनेवाले मन्त्रियोंकी अनुमति से कामहारी वासनायुक्त हृदय से आपके पास आयी हूँ।

(१८) राजवाहन की अनुमति से मातङ्ग ने भी उस युवती से विवाह कर लिया और दिव्य स्त्री के लाभ से प्रसन्नचित्त वह रसातल के राज्य को स्वीकार कर परमानन्द को प्राप्त हुआ।

(१९) अपने मित्र मण्डल को छोड़कर राजवाहन मातङ्ग के साथ आया था। अब उनको देखने की उत्कण्ठा से जब वह पृथ्वी पर आने लगा, तब भूख और प्यास की निद्रा

गमिष्णुः कालिन्दीदत्तं क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनं मणिं साहाय्यकरणसन्तुष्टान्मतङ्गाल्लब्धा काञ्चनाध्वानमनुवर्तमानं तं विसृज्य बिलपथेन तेन निर्ययौ। तत्र च मित्रगणमनवलोक्य भुवं बभ्राम।

(२०) भ्रमंश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य तत्र विश्रमिषुरान्दोलिकारूढं रमणीसहितमाप्तजनपरिवृतमुद्याने समागतमेकं पुरुषमपश्यत्। सोऽपि परमानन्देन पल्लवितचेता विकसितवदनारविन्दः 'मम स्वामी सोमकुलावतंसो

कौतूहलेन = दर्शनकौतुकेन, भुवं = पृथ्वीम्, गमिष्णुः = गमनशीलः कालिन्द्या दत्तं = समर्पितं, क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनम् = क्षुत् च पिपासा च क्षुत्पिपासे ते आदी येषां क्लेशानां ते क्षुत्पिपासादिक्लेशाः तेषां नाशनम् = नाशकम्, मणिं = रत्नम्, साहाय्यकरणसन्तुष्टात्—साहाय्यकरणेन = सहायताविधानेन, सन्तुष्टात् = हृष्टात्, मातङ्गात् लब्ध्वा = प्राप्य, कञ्चन = कमपि, कियन्तम् अध्वानं = मार्गम्, अनुवर्तमानं = अनुसरन्तं गच्छन्तम्, तं = मातङ्गम्, विसृज्य = त्यक्त्वा, तत्र = पृथ्वीतले, मित्रगणं = सुहृद्वर्गम्, अनवलोक्य = अदृष्ट्वा, भुवं = पृथ्वीम्, बभ्राम = पर्यटत्।

(२०) भ्रमन् = अटन्, विशालोपशल्ये—विशालं = महत्, उपशल्यं = ग्रामान्तः तस्मिन् विशालोपशल्ये 'ग्रामान्त उपशल्यः स्यात्' इत्यमरः। कमपि = एकम् आक्रीडम् = उद्यानम्, 'आक्रीड उद्यानं राज्ञः साधारणं वनम्' इत्यप्यमरः। आसाद्य = प्राप्य, विश्रमिषुः = विश्रमितुमिच्छुः राजवाहनः, आन्दोलिकारूढं = शिबिकारूढम् रमणीसहितम् = कान्तासनाथम्, आप्तजनपरिवृतं = इष्टजनपरिवेष्टितम्, उद्याने = आक्रीडे समागतं = प्राप्तम्, एकं = कञ्चित् पुरुषम् अपश्यत् = अवलोकितवान्। सोऽपि = आन्दोलिकारूढः पुरुषोऽपि, परमानन्देन = परमश्चासौ आनन्दश्च परमानन्दः तेन परमानन्देन = अतिप्रसन्नेन, पल्लवितचेताः—पल्लवितं = प्रफुल्लितं चेतः = हृदयं यस्यासौ पल्लवितचेताः, विकसितवदनारविन्दः, विकसितं = पल्लवितं वदनारविन्दम् = मुखकमलं यस्य सः, मम = स्वामी सोमकुलावतंसः—सोमकुलस्य =

वाली एक मणि कालिन्दी ने दे दी और सहायता करने से सन्तुष्ट मतङ्ग उसे कुछ दूर पहुँचाने आया; किन्तु बीच से ही उसे लौटाकर राजवाहन स्वयं उस बिवर मार्ग से बाहर आ गया। जहाँ से मित्रवर्ग को छोड़कर वह मतङ्ग के साथ पाताल गया था, वहाँ आने पर उसने उन लोगों को न देखकर उनकी खोज में वह पृथ्वीतल में इधर-उधर घूमने लगा।

(२०) घूमते हुए वह राजवाहन एक दिन विशालग्राम के समीप वर्तमान एक उद्यान में आ पहुँचा और वहाँ विश्राम करने की इच्छा कर रहा था कि उसने देखा, पालकी में स्त्री सहित बैठा हुआ और आत्मीय जनों से घिरा एक पुरुष आ रहा है। परमानन्द से प्रसन्न चित्त तथा खिले मुखकमलवाले उस पुरुष के मुख से निकला कि अरे! यह तो

विशुद्धयशोनिधी राजवाहन एषः। महाभाग्यतयाकाण्ड एवास्य पादमूलं गतवान् स्मि। सम्प्रति महान्नयनोत्सवो जातः' इति ससंभ्रममान्दोलिकाया अवतीर्य सरभसपदविन्यासविलासिहर्षोत्कर्षचरितस्त्रिचतुरपदान्युद्गतस्य चरणकमलयुगलं गलदुल्लसन्मल्लिकावलयेन मौलिना पस्पर्श।

(२१) प्रमोदाश्रुपूर्णो राजा पुलकिताङ्गं तं गाढमालिङ्ग्य 'अये सौम्य सोमदत्त!' इति व्याजहार। ततः कस्यापि पुन्नागभूरुहस्य छायाशीतले 'तले

चन्द्रकुलस्य, अवतंस=भूषणम्, विशुद्धयशोनिधिः—विशुद्धानि च तानि यशांसि विशुद्धयशांसि विशुद्धयशसां निधिः=आकरः, एषः=अयं राजवाहनः, महाभाग्यतया=अनुकूलदैवप्रभावेण, अकाण्डे=असमये, सहसा एव अस्य=राजवाहनस्य, पादमूलम्=चरणसमीपम्, गतवान्=प्राप्तवान्, अस्मि=जातः, सम्प्रति=इदानीम्, महान्=विपुलः, नयनोत्सवः=लोचनानन्दः जातः, ससंभ्रमम्=हठात् सत्वरादरम्, आन्दोलिकायाः=दोलात् अवतीर्य, सरभसेन—रभसेन सहितः सरभसः तेन=वेगवता, पादविन्यासेन=पादप्रक्षेपेण चरणनिक्षेपेण विलसतीति विलासी हर्षाणामुत्कर्षस्य चरितं=भावं यस्य सः हर्षोत्कर्षचरितः, त्रिचतुरपदानि त्रीणि चत्वारि वा त्रिचतुराणि पदानि, उद्गतस्य=चलितस्य राजवाहनस्य चरणकमलयुगलं=पादद्वयम्, गलदुल्लसन्मल्लिकावलयेन—गलत्=अवनमनेन सवलत् भ्रदयत्, उल्लसत्=विकसत् मल्लिकाया वलयं=मल्लिकाख्यकुसुमस्य वलयं=वेष्टनं यस्मात् तथाभूतेन मौलिना=शिरसा पस्पर्श=स्पृष्टवान्।

• (२१) प्रमोदाश्रुपूर्णः—प्रमोदस्य=हर्षस्य अश्रुभिः=नेत्रजलैः पूर्णः=व्याप्तः, सुहृदवलोकनानन्दजन्यनयनवारिपूर्णः। राजा=राजवाहनः, पुलकिताङ्गं पुलकितं=रोमाञ्चितम्, अङ्गं=शरीरं यस्य स तं तथोक्तम्, गाढम्=निर्भरम्, आलिङ्ग्य=आश्लिष्य, अये सौम्य—सोमदत्त! इति—इत्थम् व्याजहार=उक्तवान्।

चन्द्रवंशभूषण विशुद्ध कीर्ति मेरे स्वामी राजवाहन हैं, बड़े सौभाग्य से मैं अनायास इनके चरण-कमलों में पहुँच गया। सम्प्रति नेत्रों को महान् आनन्द हो रहा है, ऐसा कहते हुए हर्ष के साथ शीघ्र पालकी से उतरकर बड़े वेग से पैरों को भूमि पर रखते हुए विलासी तथा हर्षातिरेक चरितवाले उस पुरुष ने तीन चार बढ़े हुए राजवाहन के चरण-कमलों को अपने मस्तक से स्पर्श किया। चरण स्पर्श करते समय झुकने के कारण उसके गले से मल्लिकापुष्पमाला गिर रही थी।

(२१) आनन्दाश्रु से परिपूर्ण राजवाहन ने आनन्दविभोर होकर उस पुलकित पुरुष को गाढालिङ्गन करके छाती से लगा लिया और कहा—अरे सौम्य सोमदत्त! अनन्तर किसी एक नागकेशर वृक्ष की शीतल छाया के नीचे बैठकर राजा राजवाहन ने नम

संविष्टेन मनुजनाथेन सप्रणयमभाणि—'सखे ! कालमेतावन्तं, देशे कस्मिन्, प्रकारेण केनास्थायि भवता, संप्रति कुत्र गम्यते, तरुणी केयम्, एष परिजनः सम्पादितः कथम्, कथय' इति ।

(२२) सोऽपि मित्रसंदर्शनव्यतिकरापगतचिन्ताज्वरातिशयो मुकुलितकरकमलः सविनयमात्मीयप्रचारप्रकारमवोचत्—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते द्विजोपकृतिर्नाम द्वितीय उच्छ्वासः ।

ततः = तदनन्तरम् कस्यापि = एकस्य, पुन्नागभूरुहस्य = नागकेशरवृक्षस्य छायाशीतले = छायया शीतले तले = अधोभागे, संविष्टेन = उपविष्टेन, मनुजनाथेन = राजवाहनेन, सोमदत्तः सप्रश्रयं = सविनयम्, अभाणि = अभाणि, सखे ! = मित्र ! एतावन्तं कालं = समयम्, कस्मिन् देशे केन प्रकारेण = कुत्र कथं वा भवता अस्थायि = स्थितम् । संप्रति—इदानीम् कुत्र गम्यते—क्व व्रज्यते, इयं तरुणी=युवती का ? एष परिजनः = अयं परिजनः, कथं = केन प्रकारेण, सम्पादितः = अर्जितः, कथय = भण इति ।

(२२) सोऽपि = सोमदत्तोऽपि, मित्रस्य = सख्युः सन्दर्शनम्—अवलोकनम्, तस्य व्यतिकरः = व्यापारः तेन अपगतः = दूरीभूतः विनष्टः चिन्ताज्वरस्य = चिन्तारूपीसन्तापस्य अतिशयः = आधिक्यं यस्मात् सः, तथोक्तः, मुकुलितकरकमलः—मुकुलितं = बद्धं, करकमलं—हस्तकमलं येन स तथोक्तः बद्धाञ्जलिः सन्, सविनयं = विनयेन सहितम् यथा स्यात्तथा आत्मीयप्रचारप्रकारम्—आत्मनः अयं आत्मीयः, आत्मीयः = स्वकीयः यः प्रचारः = भ्रमणं तस्य प्रकारः = भेदः, वृत्तान्तः तं तथोक्तम्, अवोचत् = अकथयत् ।

इति आचार्यदण्डिकृतस्य दशकुमारचरितस्य पूर्वपीठिकायां पं० श्रीकृष्णमणित्रिपाठिना कृतायां चन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीय उच्छ्वासः समाप्तः ।

पूर्वक कहा—मित्र ! इतने दिनों तक किस देश में और किस तरह तुमने बिताया, इस समय कहाँ जा रहे हो, यह युवती कौन है और ये परिजन कैसे मिले ?

(२२) यह सुनकर सोमदत्त भी बड़ा प्रसन्न हुआ तथा मित्र के समागम से उत्पन्न हर्ष के द्वारा चिन्तायुक्त ज्वर से रहित होकर अपने कर-कमलों की अंजलि बाँधकर नियमपूर्वक अपने भ्रमण वृत्तान्त को कहना आरम्भ किया ।

इस प्रकार पं० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी द्वारा की गयी दशकुमारचरित पूर्वपीठिका द्वितीय उच्छ्वास की 'विमला' हिन्दी व्याख्या समाप्त ।

—:o:—

तृतीयोच्छ्वासः

(१) 'देव, भवच्चरणकमलसेवाभिलाषीभूतोऽहं भ्रमन्नेकस्यां वनावनौ पिपासाकुलो लतापरिवृतं शीतलं नदसलिलं पिबन्नुज्ज्वलाकारं रत्नं तत्रैकमद्राक्षम्। तदादाय गत्वा कञ्चनाध्वानमम्बरमणेरत्युष्णतया गन्तुमक्षमो वनेऽस्मिन्नेव कमपि देवतायतनं प्रविष्टो दीनाननं बहुतनयसमेतं स्थविरमहीसुरमेकमवलोक्य कुशलमुदितदयोऽहमपृच्छम्।

(२) कार्पण्यविवर्णवदनो महदाशापूर्णमानसोऽवोचदग्रजन्मा-'महाभाग, सुता-

---

(१) देव!-स्वामिन्! भवच्चरणकमलसेवाभिलाषीभूतः-भवतः=तव, चरणकमलयोः=पादपद्मयोः, सेवायाम्-शुश्रूषायाम्, अभिलाषीभूतः=साभिलाषः अहं-सोमदत्तः, भ्रमन् एकस्याम् = कस्याश्चित् वनावनौ = काननप्रदेशे, पिपासाकुलः= पिपासया व्याकुलः लतापरिवृतम्-वल्लरीवेष्टितम्, शीतलं=शिशिरम्, नदसलिलं-अर्णवसलिलम्, 'सरस्वन्तो नदार्णवौ' इत्यमरः। पिबन् = पयन्, तत्र = नदसलिले उज्ज्वलाकारम् = देदीप्यमानम्, एकं रत्नं = मणिमेकम् अद्राक्षम् = अपश्यम्। तदादाय=तं मणिं गृहीत्वा, कञ्चन = कियन्तम्, अध्वानं = मार्गं, गत्वा = व्रजित्वा, अम्बरमणेः = आकाशमणेः सूर्यस्य, अत्युष्णतया = अधिकतेजस्वितया, गन्तुमक्षमः = गन्तुमसमर्थः, अस्मिन्नेव वने कमपि = एकं देवतायतनं = देवमन्दिरं प्रविष्टः-गतः, दीनाननम्-दीनं = दुर्गतम्, आननं = मुखं यस्य स तं दीनाननम्= विषण्णवदनम्, बहुतनयसमेतम्—बहुभिः = अनेकैः तनयैः = पुत्रैः समेतम् = युक्तम्, एकम्, स्थविरं = वृद्धम्, महीसुरम् = ब्राह्मणम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, उदितदयः = उदिता=उत्पन्ना दया = अनुकम्पा यस्य स उदितदयः, अहं = सोमदत्तः कुशलं= श्रेयम्, अपृच्छम् = पृष्टवान्।

(२) कार्पण्यविवर्णवदनः-कार्पण्येन = दैन्येन, विवर्णं = मलिनं वदनं =

---

(१) हे स्वामिन्! आपके चरण-कमलों की सेवा का अभिलाषी मैं पर्यटन करता हुआ एक दिन वन में पहुँचा। वहाँ प्यास से व्याकुल हो लताओं से आच्छादित नदी का शीतल जल पी रहा था कि एक उज्ज्वल रत्न को पड़ा हुआ देखा, उसे उठाकर कुछ दूर आगे बढ़ा तो भगवान् भास्कर की अधिक गर्मी से चलने में जब असमर्थ हो गया तब उसी वन में एक देवमन्दिर को देखा और उसमें घुस गया। वहाँ अनेक बालकों के साथ एक दुःखी मुखवाले दीन ब्राह्मण को देखा, उसे देखकर मुझे दया आ गयी और मैंने उस ब्राह्मण से (दीनता का कारण) पूछा।

(२) दीनता के कारण विवर्णमुख तथा विशाल आशाओं से (यह पुरुष मुझे कुछ

नेतान्मातृहीनाननेकैरुपायै रक्षन्निदानीमस्मिन्कुदेशे भैक्ष्यं संपाद्य ददंदेतेभ्यो वसामि शिवालयेऽस्मिन्' इति ।

(३) 'भूदेव एतत्कटकाधिपती राजा कस्य देशस्य, किं नामधेयः, किमत्रागमनकारणमस्य' इति पृष्टोऽभाषत महीसुरः—'सौम्य, मत्तकालो नाम लाटेश्वरो देशस्यास्य पालयितुर्वीरकेतोस्तनयां वामलोचनां नाम तरुणीरत्नसमानलावण्यं श्रावं श्रावमवधूतदुहितृप्रार्थनस्य तस्य नगरीमरौत्सीत्। वीरकेतुरपि भीतो महदु-

---

मुखं यस्य सः तथोक्तः, महदाशापूर्णमानसः—महत्या = प्रचुरया आशया = आकाङ्क्षया=उपास्यतोऽयं पुरुषो मह्यं किञ्चिदवश्यं दास्यतीत्येवंरूपया पूर्णं = व्याप्तं मानसं=हृदयं यस्य सः तथोक्तः, अग्रजन्मा = ब्राह्मणः अवोचत् = अभाषत, महाभाग !—महान् = विपुलः भागः = अंशो यस्य स महाभागः तत्संबुद्धौ हे महाभाग ! = महापुरुष ! एतान् = इमान् मातृहीनान् = जननीरहितान् मात्रावियुक्तान् सुतान् = तनयान्, अनेकैः = बहुविधैः, उपायैः=उद्योगैः, रक्षन्=पालयन्, इदानीं=साम्प्रतम्, अस्मिन् कुदेशे = निकृष्टस्थाने, शिवालये = मन्दिरे वसामि ।

(३) भूदेव ! = महीसुर ! एतत्कटकाधिपतिः—एतस्य = पुरतो वर्तमानस्य अमुष्य कटकस्य=सैन्यावासस्य अधिपतिः = स्वामी कस्य देशस्य राजा ? किंनामधेयोऽसौ=किं नामाख्यः, अस्यात्रागमनकारणं किमिति। सोपदत्तेन पृष्टः, महीसुर= अग्रजन्मा, अभाषत = अवादीत्, सौम्य ! = सुभग ! लाटेश्वरः = लाटदेशाधिपतिः मत्तकालो नाम = मत्तकालाख्यः, अस्य देशस्य पालयितुः = रक्षकस्य वीरकेतो तनयां = पुत्रीम् वामलोचनां नाम = वामलोचनाख्याम्, असमानलावण्यां = असमानं = अतुलनीयं लावण्यं = सौन्दर्यं यस्य तत्, तरुणीरत्नम्—तरुणीषु = युवतीषु रत्नं = श्रेष्ठम्, श्रावं श्रावं = भूयो भूयः श्रुत्वा, अवधूतदुहितृप्रार्थनस्य = अवधूता = अगणिता, तिरस्कृता दुहितु =कन्याया वामलोचनायाः प्रार्थना येन तेन

अवश्य देगा इस आशा से) परिपूर्ण चित्त होकर उस वृद्ध ब्राह्मण ने उत्तर दिया। हे महाभाग ! मैं अनेक उपायों से इन मातृहीन बच्चों का पालन-पोषण करता हूँ। इस समय मैं इस कुदेश में भिक्षा मांगकर इन बच्चों को देता हुआ इसी शिवालय में निवास करता हूँ।

(३) मैंने उस ब्राह्मण से पूछा—हे विप्रवर ! इस सेना का राजा कौन है एवं उसका क्या नाम है और वह राजा सेना सहित क्यों इस स्थान पर आया है। ऐसा पूछने पर उत्तर देते हुए उसने कहा—सौम्य ! इस देश का स्वामी वीरकेतु है, उसकी पुत्री का नाम वामलोचना है, जो सौन्दर्य में अद्वितीय है और तरुणियों में रत्न है। उसके गुण तथा सौन्दर्य को सुनकर लाट (बंग) देश के अधिपति मत्तकाल ने उससे विवाह करने की

'पायनमिव तनयां मत्तकालायादात्। तरुणीलाभहृष्टचेता लाटपतिः 'परिणेया निजपुर एव' इति निश्चित्य गच्छन्निजदेशं प्रति संप्रति मृगयादरेणात्र वने सैन्यावासमकारयत्।

(४) कन्यासारेण नियुक्तो मानपालो नाम वीरकेतुमन्त्री मानधनश्चतुरङ्गबलसमन्वितोऽन्यत्र रचितशिबिरस्तं निजनाथावमानखिन्नमानसोऽन्तर्बिभेद' इति।

स तस्य तथाभूतस्य वीरकेतोः, नगरीं = पुरीम्, अरोत्सीत् = रुरुधे, भयाकुलः = भयभीतः वीरकेतुः अपि महदुपायनमिव = महोपहारामिव तनयां = पुत्रीम्, नामवामलोचनाम्, मत्तकालाय = लाटेश्वराय अदात् = प्रदत्तवान्। तरुणीलाभहृष्टचेताः - तरुण्याः = युवत्याः, लाभेन = प्राप्त्या, हृष्टं = प्रसन्नं, चेतः = मनो यस्य स तथोक्तः लाटपतिः = लाटदेशाधिपतिः, निजपुरे एव = स्वनगरे एव, परिणेया = विवाहनीया इति निश्चित्य = निर्णीय, निजदेशं = स्वदेशम्, प्रतिगच्छन्, सम्प्रति = इदानीम्, मृगयादरेण - मृगयायाः = आखेटस्य आदरेण = अभिलाषेण अत्र = वने, सैन्यवासं = कटकम्, अकारयत् = कारितवान्।

(४) कन्यासारेण - कन्या = तनया एव सारः = धनं यस्य सः तेन कन्यासारेण = पुत्रिमात्रधनेन वीरकेतुना नियुक्तः = प्रेरितः, मानपालो नाम = मानपालाख्यः वीरकेतुमन्त्री = वीरकेतोः अमात्यः, मानधनः = मानाभिमानी चतुरङ्गबलसमन्वितः चतुरङ्गं = हस्त्यश्वरथपदातिरूपम् बलं = सैन्यम् यस्य स तेन समन्वितः = युक्तः, अन्यत्र = लाटेश्वरादन्यस्थाने रचितशिबिरः = रचितं कृतं शिबिरं = सैन्यनिवेशः येन स, कृतशिबिरः, कृतसैन्यावासः, निजनाथावमानखिन्नमानसः - निजनाथस्य = स्वस्वामिनः अवमानेन = परिभवेन खिन्नं = विषण्णं मानसं = हृदयं यस्य सः तथाभूतः, तं = लाटेश्वरम् अन्तर्बिभेद = अन्तःप्रकृत्यमात्ययोर्भेदे तत्परो बभूव।

इच्छा प्रकट की, किन्तु वीरकेतु ने उसकी इच्छा को विफल कर दिया, जिसपर क्रुद्ध होकर मत्तकाल ने वीरकेतु की नगरी को घेर लिया, इससे वीरकेतु ने भयभीत होकर विशाल भेंट के समान अपनी पुत्री वामलोचना को समर्पित कर दिया। उस तरुणी की प्राप्ति से प्रसन्न होकर मत्तकाल ने सोचा कि अपने नगर में ले जाकर ही इसके साथ विवाह संस्कार कर लूंगा। ऐसा निश्चय कर वहाँ से वह अपने देश को जाता हुआ शिकार खेलने की इच्छा से इस वन में पड़ाव डाले पड़ा है।

(४) इधर वीरकेतु के आदेश से मानपाल नामक मानधनी मन्त्री ने चतुरङ्गिणी सेना के साथ पड़ाव डाल रखा है और अपने स्वामी के अनादर से खिन्न होकर मत्तकाल की सेना में भेद डाल दिया है।

(५) विप्रोऽयं बहुतनयो विद्वान्निर्धनः स्थविरश्च दानयोग्य इति तस्मै करुणापूर्णमना रत्नमदाम्। परमाह्लादविकसिताननोऽभिहितानेकाशीः कुत्रचिदग्रजन्मा जगाम। अध्वश्रमखिन्नेन मया तत्र निरवेशि निद्रासुखम्। तदनु पश्चान्निगडितबाहुयुगलः सः भूसुरः कशाघातचिह्नितगात्रोऽनेकनैस्त्रिंशिकानुयातोऽभ्येत्य माम् 'असौ दस्युः' इत्यदर्शयत्।

---

(५) असौ=अयम्, विप्रः=ब्राह्मणः बहुतनयः—बहवः=अनेके तनयाः=सन्ततयः यस्य सः बहुतनयः=अनेकसन्ततिः विद्वान्=पण्डितः, निर्धनः=धनहीनः स्थविरः=वृद्धः, दानयोग्यः=दानपात्रं चास्ति इति करुणापूर्णमनाः—करुणया=दयया पूर्णं=व्याप्तं मनः=चित्तं यस्य सः तथोक्तः, अहं=सोमदत्तः तस्मै=वृद्धब्राह्मणाय, रत्नं=मणिम्, अदाम्=दत्तवान्, परमाह्लादविकसिताननः परमाह्लादेन=अत्यानन्देन विकसितं=प्रफुल्लं, आननं=वदनं यस्य सः तथोक्तः, अभिहितानेकाशीः—अभिहिताः=उक्ताः अनेकाः=असंख्येयाः आशिषः=आशीर्वादा येन स तथोक्तः, अग्रजन्मा=ब्राह्मणः, कुत्रचित्=क्वचन, जगाम=गतवान् अध्वश्रमखिन्नेन—अध्वनि=मार्गे, श्रमेण=परिश्रमेण खिन्नः=श्रान्तः तेन तथोक्तेन, मया=सोमदत्तेन, तत्र=देवतायतने, निद्रासुखं—निद्रायाः=स्वापस्य सुखम्=आनन्दः निरवेशि=अन्वभावि, तदनु=तदनन्तरम् पश्चात्=पृष्ठभागे निगडितं=बद्धं बाहुयुगलं=हस्तद्वयम् यस्य सः, सः=पूर्वपरिचितः दत्तमणिः भूसुरः=अग्रजन्मा, कशाघातचिह्नितगात्रः—कशाघातेन=वेत्रप्रहरणेन चिह्नितं=अङ्कितं गात्रं=शरीरं यस्य सः तथोक्तः, अनेकनैस्त्रिंशिकानुयातः—अनेकैः=बहुभिः नैस्त्रिंशिकैः=अस्त्रधारिभिः पुरुषैः अनुयातः=अनुसृतः, परिवृतः, असौ दस्युः=एष चौरः (इत्यङ्गुल्या निर्दिश्य माम्) अदर्शयत्।

---

(५) इस वृत्तान्त को सुनकर मैंने सोचा कि यह ब्राह्मण विद्वान, वृद्ध, निर्धन तथा बड़कुटुम्बी है अतः यह दान देने योग्य पात्र है ऐसा सोचकर मैंने दयावश वह रत्न जो पानी पीते समय पाया था वह उसे दे दिया। रत्नप्राप्ति की प्रसन्नता से उसका मुख कमल खिल उठा और वह अनेक आशीर्वाद देता हुआ वहाँ से कहीं चला गया। रास्ता चलने के कारण थका हुआ मैं भी गहरी नींद में वहीं सो गया। थोड़ी देर बाद देखता हूँ कि उस ब्राह्मण के दोनों हाथ पीछे बँधे हुए हैं, उसकी देह पर चाबुकों मार के निशान पड़े हुए हैं और उसे अनेक सिपाही घेरे हुए हैं। इस अवस्था में मेरे पास आकर मुझे संकेत करते हुए उसने कहा—यही चोर है।

(६) परित्यक्तभूसुरा राजभटा रत्नावाप्तिप्रकारं मदुक्तमनाकर्ण्य भयरहितं मां गाढं नियम्य रज्जुभिरानीय कारागारम् 'एते तव सखायः' इति निगडितान्कांश्चिन्निर्दिष्टवन्तो मामपि निगडितचरणयुगलमकार्षुः। किङ्कर्तव्यतामूढेन निराशक्लेशानुभवेनावाचि मया—'ननु पुरुषा वीर्यपरुषाः, निमित्तेन केन निविशथ कारावासदुःखं दुस्तरम्। यूयं वयस्या इति निर्दिष्टमेतैः, किमिदम्' इति।

(७) तथाविधं मामवेक्ष्य भूसुरान्मया श्रुतं लाटपतिवृत्तान्तं व्याख्याय चोर-

---

(६) परित्यक्तभूसुराः—परित्यक्तः=मुक्तः भूसूरः=महीसुरो ब्राह्मणो यैस्ते तथोक्ताः, राजभटाः=राजपुरुषाः, मदुक्तं=मया प्रोक्तम्, रत्नावाप्तिप्रकारं रत्नस्य=मणेः अवाप्तेः=लाभस्य प्रकारं=विधिम्, अनाकर्ण्य=अश्रुत्वा मां=सोमदत्तं गाढं=दृढम्, रज्जुभिः=दामभिः, बन्धनैः नियम्य=बद्ध्वा कारागारं=बन्धनालयम् आनीय=प्रापय्य, एते=कारागारस्थिताः, तव=भवतः, सखायः=मित्राणि, इति निगडितान्=संयमितान् शृंखलाबद्धान् कांश्चित्=बहून् निर्दिष्टवन्तः=दर्शितवन्तः, मां=सोमदत्तमपि निगडितचरणयुगलम्, निगडे स्थितं=संयमितम्, चरणयुगलं=पादद्वयम् यस्य स तम्, अकार्षुः=कृतवन्तः, किं कर्तव्यस्य भावः किंकर्तव्यता किंकर्तव्यतायां मूढः तेन किंकर्तव्यतामूढेन, निराशक्लेशानुभवेन—निराशः=अप्रतिकारः क्लेशानुभवः=बन्दीग्रहवासदुःखप्रतीकारम् अपश्यता मया=सोमदत्तेन अवोचि=उक्तम्) ननु पुरुषाः वीर्यपरुषाः—वीर्येण=पराक्रमेण परुषाः=कठोराः तीक्ष्णपराक्रमशालिनः, केन निमित्तेन=केन कारणेन दुस्तरम्=अपारम्—कारावासदुःखम्=बन्दीगृहवासयन्त्रणाम् निविशथ=अनुभवथ। यूयम्=भवन्तः, वयस्याः=सखाय इति, एतैः=राजभट्टैः निर्दिष्टम्=दर्शितम्। किमिदम्=किमभिप्रायकम्।

(७) तथाविधं=तथाकारं निगडितचरणम्, मां=सोमदत्तम् अवेक्ष्य=

---

(६) उन राजपुरुषों ने यह सुनकर उस ब्राह्मण को छोड़ दिया और मुझनिर्भीक को रस्सियों से कसकर बांध दिया। रत्नप्राप्ति का सारा वृत्तान्त मैंने उनसे कह सुनाया, किन्तु उन्होंने मेरे कथन पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और मुझे जेल में ले जाकर कुछ अपराधी बंदियों को दिखाते हुए मुझसे कहा—"ये सब तुम्हारे मित्र हैं" और मेरे भी दोनों पैरों में बेड़ी डालकर बन्द कर दिया। किंकर्तव्यविमूढ होकर तथा उस जेल से मुक्ति का कोई उपाय न देखकर मैंने उन बन्दियों से कहा—वीरो! तुम लोग इतने बलवान् होकर भी क्यों इस कारावास के कठिन दुःखों को झेल रहे हो, और इन राजपुरुषों ने तुमलोगों को निर्दिष्ट करते हुए मुझे तुम लोगों का मित्र कहा है इसका क्या अभिप्राय है?

(७) इस प्रकार मुझे निगडित तथा दुःखी देखकर लाटपति का वृत्तान्त ब्राह्मण के

चीराः पुनरवोचन्—'महाभाग! वीरकेतुमन्त्रिणो मानपालस्य किङ्करा वयम्। तदाज्ञया लाटेश्वरमारणाय रात्रौ सुरङ्गद्वारेण तदागारं प्रविश्य तत्र राजाभावेन विषण्णा बहुधनमाहृत्य महाटवीं प्राविशाम। अपरेद्युश्च पदान्वेषिणो राजानुचरा बहवोऽभ्येत्य धृतधनचयानस्मान्परितः परिवृत्य दृढतरं बद्ध्वा निकटमानीय समस्तवस्तुशोधनवेलायामेकस्यानर्घ्यरत्नस्याभावेनास्मद्वधाय माणिक्यादानादस्मान् किलाश्रृङ्खलयत्' इति।

दृष्ट्वा, लाटपतिवृत्तान्तम्—लाटपतेः = लाटेश्वरस्य वृत्तान्तं = उदन्तम् भूसुरात् = ब्राह्मणात् यथाश्रुतम् = आकर्णितम् मया = सोमदत्तेन, यथा ममाग्रे आख्याय = कथयित्वा चोरवीराः = पूर्वोक्तचोरवीराः, पुनः = भूयः अवोचन् = उक्तवन्तः। महाभाग!, वीरकेतुमन्त्रिणः-वीरकेतोः मन्त्रिणः = अमात्यस्य मानपालस्य किङ्कराः = भृत्या वयम् तदाज्ञया = मानपालस्य आदेशेन लाटेश्वरस्य मारणाय = लाटाधिपतिं निहन्तुम् रात्रौ = निशायाम् सुरङ्गद्वारेण = बिलमार्गेण तदागारं = लाटेश्वरस्यागारं = गृहं प्रविश्य, तत्र = गृहे राजाभावेन-राज्ञः = लाटपतेः अभावेन = अनुपस्थित्या विषण्णाः = म्लानाः वयं, बहुधनं = प्रचुरं द्रव्यम्, आहृत्य = समादाय महाटवीं = महारण्यम्, प्राविशाम् = प्रविष्टाः।

अपरेद्युः = अपरस्मिन् दिने, पदान्वेषिणः—अन्वेष्टुं = मार्गितुं शीलं येषां ते अन्वेषिणः पदानि = चरणचिह्नानि अन्वेषिणः पदान्वेषिणः चरणचिह्नमनुसरन्तः, बहवः = बहुसंख्याकाः राजानुचराः = राजसेवकाः अभ्येत्य = आगत्य, धृतधनचयान् = धृतः रक्षितः धनानां = रत्नानां चयः राशिर्यैस्ते तान् तथोक्तान् अस्मान् = मानपालभृत्यान् परितः = समन्तात् परिवृत्य = परिवेष्ट्य, दृढतरम् = अत्यन्तगाढम् बद्ध्वा = संयम्य निकटमानीय = समीपमुपस्थाप्य समस्तवस्तुशोधन-वेलायाम्, समस्तानां = सकलानां वस्तूनां = पदार्थानां शोधनवेलायाम् = मार्गणकाले परीक्षण-

---

मुख से जैसा मैंने सुना था वैसा ही उन लोगों ने भी कह सुनाया, पुनः वे कहने लगे—महाभाग! हम लोग वीरकेतु के मन्त्री मानपाल के सेवक हैं। उनकी आज्ञा से रात में लाटदेशाधिपति की हत्या करने के निमित्त हम लोग सुरङ्ग की राह उसके घर में प्रवेश कर गये किन्तु वहाँ लाटपति को न पाकर अत्यन्त दुःखी हुए, बाद वहाँ की अतुल सम्पत्ति चुराकर एक अत्यन्त गहन वन में चले गये।

दूसरे दिन पदचिह्नों को ढूँढ़ते हुए बहुत से राजपुरुषों ने आकर धन के साथ हम लोगों को घेर लिया और दृढ़तापूर्वक बाँधकर राजा के पास लाया गया। बाद सब समान इकट्ठा किया गया और उनका निरीक्षण होने लगा किन्तु निरीक्षण के समय एक बहुमूल्य रत्न नहीं मिला इसपर हम लोगों के वध की आज्ञा दे दी गयी और बाँधकर जेल में डाल दिया गया।

(८) श्रुतरत्नरत्नावलोकनस्थानोऽहम् 'इदं तदेव माणिक्यम्' इति निश्चित्य भूदेवदाननिमित्तां दुरवस्थामात्मनो जन्म नामधेयं युष्मदन्वेषण पर्यटनप्रकारं चाभाष्य समयोचितैः संलापैर्मैत्रीमकार्षम्। ततोऽर्धरात्रे तेषां मम च शृङ्खलाबन्धनं निर्भिद्य तैरनुगम्यमानो निद्रितस्य द्वाःस्थगणस्यायुधजालमादाय पुररक्षानभिमुखागतान्‌पुरतो-

काले, एकस्य अनर्घ्यरत्नस्य = अमूल्यमणेः अभावेन = अदर्शनेन, अप्राप्त्या अस्म-द्वधाय = अस्माकं वधहेतवे माणिक्यादानात् = रत्नग्रहणार्थम्, अस्मान् = चोरवीरान्, अशृंखलयन् = निगडितान् अकुर्वन्, शृङ्खलाबद्धानकार्षुरित्यर्थः।

(८) श्रुतरत्नरत्नावलोकनस्थान:—श्रुतं = आकर्णितं रत्नरत्नस्य = श्रेष्ठरत्नस्य अवलोकनस्थानं येन सः तथोक्तः, अहं = सोमदत्तः 'इदं यन्मया ब्राह्मणायार्पितं = तदेव = लाटेश्वरगृहात् चोरैरपहृतम् माणिक्यं = रत्नरत्नम्' इति निश्चित्य = निर्णीय भूदेवदाननिमित्ताम्—भूदेवाय = ब्राह्मणाय दानं = अर्पणं निमित्तं कारणं यस्याः सा तां पूर्वोक्ताम् दुरवस्थां = दुर्दशां यन्त्रणाम्, आत्मनः = स्वस्य जन्म = उत्पत्तिः नाम-धेयं = नाम युष्मदन्वेषणपर्यटनप्रकारम्—युष्माकं = भवताम् अन्वेषणाय = मार्गणाय, पर्यटनस्य = भूभ्रमणस्य प्रकारं = स्वरूपं प्रणालीं वा आभाष्य = उक्त्वा समयो-चितैः = तत्कालयोग्यैः संलापैः = भाषणैः, मैत्रीम् = सख्यम् अकार्षम् = कृतवान्।

ततः = तदन्तरम्, अर्धरात्रे = निशीथे तेषां = चोरवीराणाम् मम च शृङ्खला-बन्धनं = निगडबन्धनम् निर्भिद्य = भङ्क्त्वा तैः = चोरवीरैः अनुगम्यमानः = अनुसृयमाणः निद्रितस्य = प्रसुप्तस्य द्वाःस्थगणस्य—द्वारि तिष्ठन्तीति द्वाःस्थाः = दौवारिकाः तेषां गणस्य = समूहस्य, आयुधजालः—आयुधानां = अस्त्राणां जालं = समूहम्, आदाय = गृहीत्वा, पुरतः = ममाग्रतः, अभिमुखागतानां = संमुखागतानाम्, पुररक्षान् = नगररक्षकान्, पटुपराक्रमलीलया—पटुः समर्था या पराक्रमलीला तया

साथ हाँ यह कहा गया कि तब तक वे विचार कर लें और मणि लौटा दें, मणि न मिलने पर इनका प्राण दण्ड होगा।

(८) उस श्रेष्ठ रत्न तथा उसे प्राप्त करने की विधि जाननेवाला मैंने निश्चय किया कि यह वही रत्न है जिसे चोरों ने लाटपति के भवन से चुराया था। तब मैंने अपना रत्न पाना और ब्राह्मण को दान देने के कारण हुई दुरवस्था, अपनी जन्मकथा, अपना नाम और आपकी खोज के निमित्त पर्यटन आदि बताकर समयोचित वार्तालाप द्वारा उन चोर वीरों से मित्रता कर ली। बाद आधी रात के समय मैंने उनके बन्धनों को तोड़ा तथा उन्होंने मेरे बन्धन को तोड़ दिया। सभी लोग एक साथ बाहर निकल पड़े, फाटक पर पहरेदार सो रहे थे, हम लोगों ने उनके अस्त्र-शस्त्र उठा लिये। आगे बढ़ने पर कुछ नगररक्षक मिले

ऽभिमुखागतान्पटुपराक्रमलीलयाभिद्राव्य मानपालशिविरं प्राविशम्। मानपालो निजकिङ्करेभ्यो मम कुलाभिमानवृत्तान्तं तत्कालीनं विक्रमं च निशम्य मामार्चयत्।

(९) परेद्युर्मत्तकालेन प्रेषिताः केचन पुरुषा मानपालमुपेत्य 'मन्त्रिन्, मदीयराजमन्दिरे सुरङ्गया बहुधनमपहृत्य चौरवीरा भवदीयं कटकं प्राविशन् तानर्पय। नो चेन्महाननर्थः भविष्यति' इति क्रूरतरं वाक्यमब्रुवन्। तदाकर्ण्य रोषारुणितनेत्रो मन्त्री लाटपतिः कः, तेन मैत्री का, पुनरस्य वराकस्य सेवया किं लभ्यम्' इति

निजपराक्रमेण, अभिद्राव्य = प्रपलाय्य, मानपालस्य मन्त्रिणः शिविरं = कटकं, सैन्यनिवासम् मानपालशिविरं, प्राविशम् = प्रविष्टः। मानपालो निजकिङ्करेभ्यः = स्वसेवकेभ्यः मम = सोमदत्तस्य कुलाभिमानवृत्तान्तं—कुलस्य = वंशस्य अभिमानस्य = गौरवस्य वृत्तान्तं = वार्ताम्, तत्कालीनं = तस्मिन् काले कारागृहान्निर्गमनसमये जातं वृत्तान्तम् विक्रमम् = पराक्रमम् च निशम्य = श्रुत्वा, मां = सोमदत्तम् अर्चयत् = अपूजयत्, सत्कृतवानित्यर्थः।

(९) परेद्युः = तत्परे दिने, मत्तकालेन = लाटदेशाधिपतिना प्रेषिता = प्रहिताः केचन = कतिचन, पुरुषाः = मानवाः मानपालम् उपेत्य = प्राप्य मन्त्रिन्! = अमात्य! मदीयराजमन्दिरे = मदीयस्य राज्ञः = लाटाधिपतेः मन्दिरे = गृहे चोरवीराः = लुण्टाकाः सुरङ्गया = बिलपथेन बहुधनं = प्रचुरं वित्तम् अपहृत्य = आदाय, भवदीयं = मावत्कं कटकं = सैन्यावासं, सैन्यमण्डलम्, प्राविशन् = प्रविष्टाः तान् = आगतान् चोरवीरान्, अर्पय = देहि, नो चेत् = अन्यथा, महान् अनर्थः = अत्यन्तम् अहितं भविष्यति। इति = इत्थं क्रूरतरं = कठोरतरम् वाक्यं = वचनम्-अब्रुवन् = अवोचन्।

तदाकर्ण्य = तेषां क्रूरतरं वाक्यम् आकर्ण्य = श्रुत्वा रोषारुणितनेत्रः = रोषेण = क्रोधेन अरुणिते = रक्ते नेत्रे यस्य सः, मन्त्री = मानपालः कः = कोऽसौ लाटपतिः = लाटदेशाधिपः, तेन = लाटपतिना का मैत्री ? = कीदृशी मित्रता, अस्य = लाटपतेः

जिन्हें अपने पराक्रम से पराजित कर हम लोग मानपाल के शिविर में आ पहुंचे। मानपाल ने अपने भृत्यों द्वारा मेरे कुल तथा उस समय मेरे द्वारा किये वीरोचित कार्यों को सुनकर मेरा बड़ा सत्कार किया।

(९) अनन्तर दूसरे दिन मत्तकाल द्वारा प्रेषित सिपाहियों ने मानपाल मन्त्री के समीप आकर कहा—मंन्त्रिन्! मेरे राजभवन में सुरंग के द्वारा घुसकर बहुत सा माल चुराकर चोर आपके शिविर में घुस आये हैं, कृपया उन्हें आप मुझे सौंप दीजिए, नहीं तो महान् अनर्थ हो जायेगा। यह सुनकर अमात्य मानपाल की आँखें क्रोध से लाल हो उठीं, उन्होंने कहा—अरे! कौन है लाटपति? मैंने उससे मित्रता कब की? उस अधम की

तान्निरभर्त्संयत्, ते च मानपालेनोक्तं विप्रलापं मत्तकालाय तथैवाकथयन्। कुपितोऽपि लाटपतिर्दोर्वीर्यगर्वेणाल्पसैनिकसमेतो योद्धुमभ्यगात्। पूर्वमेव कृतरणनिश्चयो मानी मानपालः संनद्धयोधो युद्धकामो भूत्वा निःशङ्कं निरगात्। अहमपि सबहुमानं मन्त्रिदत्तानि बहुलतुरङ्गमोपेतं चतुरसारथि रथं च दृढतरं कवचं मदनुरूपं चापं च विविधबाणपूर्णं तूणीरद्वयं रणसमुचितान्यायुधानि गृहीत्वा युद्ध

वराकस्य = विवेकशून्यस्य सेवया = परिचर्यया पुनः किं लभ्यम्? इति एभिः क्रूरतरैः वचनैः = वाक्यैः, तान् = प्रेषितपुरुषान् निरभर्त्संयत् = अतर्जयत्। ते च पुरुषाः पुनः मानपालेनोक्तं = मानपालेन कथितम् विप्रलापं = विरोधोक्तिम्, मत्तकालाय = लाटेश्वराय यथा मानपालेन प्रोक्तं तथैव = तेनैव प्रकारेण यथाश्रुतम् अकथयन् = कथितवन्तः।

कुपितः = क्रुद्धः अपि लाटपतिः = मत्तपालः दोर्वीर्यगर्वेण—दोषोः = भुजयोः वीर्यं = पराक्रमः यस्य सः तस्य, गर्वेण = अहङ्कारेण, अल्पसैनिकसमेतः—अल्पेन = न्यूनेन सैनिकेन = सैन्येन सहितः = सनाथः योद्धुं = संग्रामाय अभ्यगात् = निःसृतः। पूर्वमेव = प्रागेव, कृतरणनिश्चयः = संकल्पितयुद्धसिद्धान्तः, मानपालः सन्नद्धयोधः—सन्नद्धाः योधाः यस्य स सन्नद्धयोधः। युद्धकामः = संग्रामाभिलाषः भूत्वा निःशङ्कम्—यथा स्यात्तथा निरगात् = निःसृतः।

अहमपि = सोमदत्तोऽपि, सबहुमानं बहुमानेन सहितं यथा स्यात्तथा मन्त्रिदत्तानि = अमात्येन प्रदत्तानि बहुलतुरङ्गमोपेतम्—बहुलैः = असंख्याकैः तुरङ्गमैः = अश्वैः, उपेतं = युक्तम्, चतुरसारथिम्—चतुरः = कुशलः सारथिः = चालकः यस्य स तम् तथोक्तम्, रथं = स्यन्दनं दृढतरं = सुदृढम् कवचं = तनुत्रम्, वर्म, मदनुरूपं = मद्योग्यम्, चापं = धनुः, विविधबाणपूर्णं—विविधैः = बहुप्रकारैः बाणैः = इषुभिः पूर्णं = युक्तम् तूणीरद्वयम्—तूणीरस्य द्वयम् तूणीरद्वयम् रणसमुचितानि = युद्धयोग्यानि आयुधानि = अस्त्राणि गृहीत्वा = आदाय, युद्धसन्नद्धः = युद्धार्थमुद्यतः,

दासता से मुझे क्या लाभ है? इस प्रकार उन्होंने राजपुरुषों की खूब भर्त्सना की, सिपाहियों ने लौटकर मत्तपाल से सब ज्यों का त्यों कह सुनाया, यह सुनकर लाटपति अपने भुजबल के अखर्व गर्व से क्रोधान्ध हो गया और अपने साथ थोड़ी सी सेना लेकर युद्ध के लिए आ गया। अभिमानी मानपाल पहले से ही लड़ने के लिए तैयार बैठा था, उसकी सेना सुसज्जित थी, वह युद्ध के लिए निःशङ्क होकर निकल पड़ा।

मैं भी अत्यन्त आदर तथा आग्रह के साथ भेंट किये हुए घोड़ों से खींचे जानेवाले रथ, जिसका सारथि बड़ाकुशल था, मजबूत कवच, मेरे योग्य धनुष, अनेक प्रकार के बाणों से भरे दो तरकस और समरयोग्य अस्त्रास्त्र लिये, युद्ध के लिए मन्त्री के साथ युद्धस्थल में जा

संनद्धो मदीयबलविश्वासेन रिपूद्धरणोद्युक्तं मन्त्रिणमन्वगाम् । परस्परमत्सरेण तुमुलसंगरकरमुभयसैन्यमतिक्रम्य समुल्लसद्भुजाटोपेन बाणवर्षं तदङ्गे विमुञ्चन्नरातीन् प्राहरम् ।

(१०) ततोऽतिरयतुरंगमं मद्रथं तन्निकटं नीत्वा शीघ्रलङ्घनोपेततदीयरथोऽहमरातेः शिरःकर्तनमकार्षम् । तस्मिन्पतिते तदवशिष्टसैनिकेषु पलायितेषु नानाविधहयगजादिवस्तुजातमादाय परमानन्दसंभृतो मन्त्री ममानेकविधां संभावनामकार्षीत् ।

मदीयबलविश्वासेन = मम बलस्य विश्वासेन शत्रुविनाशे सर्वथा समर्थोऽयमिति निश्चयेन रिपूद्धरणोद्युक्त–रिपूणां = शत्रूणाम्, उद्धरणे = विनाशे, उद्युक्तं = सन्नद्धम्, प्रवृत्तम् । मन्त्रिणं = मानपालम्, अन्वगाम्–अनु = पश्चात् अगच्छम् ।

परस्परमत्सरेण = अन्योऽन्यस्य विद्वेषेण, तुमुलसङ्गरकरम् = महासङ्ग्रामकरम् तुमुलयुद्धकारि, उभयसैन्यम्–सैनिकद्वयम्, अतिक्रम्य= उल्लङ्घ्य, समुल्लसद् भुजाटोपेन–समुल्लसतोः=वृद्धिं गच्छतोः भुजयोः = बाह्वोराटोपेन = गर्वेण बलेन । तदङ्गे = शत्रुसैन्यशरीरे बाणवर्षम् बाणवृष्टिम् विमुञ्चन् = त्यजन् अरातीन्=शत्रून् प्राहरम् = अताडयम् ।

(१०) ततः=तदनन्तरम्, अतिरयतुरङ्गमं–अतिरयाः=अतिजवाः तुरङ्गमाः= अश्वाः यस्मिन् स तं तथोक्तम्, मद्रथं = मम स्यन्दनम् तन्निकटं–तस्य = लाटपतेः निकटं=समीपम् नीत्वा=प्रापय्य शीघ्रलङ्घनोपेतं–शीघ्रं = सत्वरम् यल्लङ्घनं तेन शीघ्रलङ्घनेन=सत्वराक्रमणेन उपेतः = प्राप्तः, तदीयरथः–तदीयः = लाटपतेः रथो येन सः पूर्वोक्तः अहं = सोमदत्तः, अरातेः = शत्रोः लाटपतेः शिरःकर्तनम्–शिरसः = मूर्ध्नः, कर्तनं = छेदनम्, अकार्षम् = अकरवम् । तस्मिन् = लाटपतौ, निपतिते = रथाच्च्युते, मृते, सति, तदवशिष्टसैनिकेषु तस्य = लाटपतेः, अवशिष्टेषु शेषेषु सैनिकेषु = सैन्येषु, पलायितेषु = इतस्ततो गतेषु नानाविधहयगजादिवस्तुजातम्— नानाविधं = अनेकप्रकारकम्, बहुविधम्, हयाश्चगजाश्च आदौ येषां वस्तूनां तानि

पहुँचा । मन्त्री को मेरे पराक्रम पर पूर्ण विश्वास था कि मैं अवश्य ही शत्रुदल को परास्त कर दूँगा । परस्पर द्वेष एवं क्रोध से घमासान युद्ध करने की अभिलाषा से परिपूर्ण दोनों सेनाओं के बीच पहुँचकर मैं अपने बाहुबल के आरोप से शत्रुओं के ऊपर बाणों की वर्षा करने लगा ।

(१०) इसके बाद चंचल तथा वेगवान् अश्वों से संयुक्त अपने रथ को लाटपति के समीप ले जाकर शीघ्रतापूर्वक आक्रमण करके उसके रथ को प्राप्त कर शत्रु का सिर काट डाला । लाटपति के मरते ही उसके अवशिष्ट सैनिक योधा भाग खड़े हुए । तब शत्रु के अनेक

(११) मानपालप्रेषितात्तदनुचरादेनमखिलमुदन्तजातमाकर्ण्य सन्तुष्टमना राजाभ्युद्गतो मदीयपराक्रमे विस्मयमानः समहोत्सवममात्यबान्धवानुमत्या शुभदिने निजतनयां मह्यमदात्। ततो यौवराज्याभिषिक्तोऽहमनुदिनमाराधित-महीपालचित्तो वामलोचनयानया सह नानाविधं सौख्यमनुभवन्भवद्विरहवेदना-

हयगजवस्तूनि तेषां जातं समूहम् गजाश्ववस्तुसमूहम् आदायगृहीत्वा परमानन्द-संभृतः—परमानन्देन = महदानन्देन संभृतः = पूर्णः, मन्त्री = मानपालः मम = सोमदत्तस्य अनेकविधां = बहुप्रकाराम्, सम्भावनां = सम्मानताम् अकार्षीत् = कृतवान्।

(११) मानपालप्रेषितान्—मानपालेन मन्त्रिणा प्रेषितान् तत्प्रेरणयाऽऽगतान् तदनुचरात् = मानपालभृत्यात्, उपयुक्तं = पूर्वं वर्णितम्, अखिलं = समस्तम् उदन्तजातम्—वार्तासमूहम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, सन्तुष्टमनाः — प्रसन्नचेताः राजा = वीरकेतुः, अभ्युद्गतः = अग्रतः सत्कारार्थमागतः, मदीयपराक्रमे—मम वीरतायाम्, विस्मयमानः = आश्चर्यमनुभवन्, समहोत्सवं = महांश्चासावुत्सवश्चेति महोत्सवः तेन सहितं समहोत्सवम् अमात्यबान्धवानुमत्या अमात्यानां=मन्त्रिणां बान्धवानां=सगोत्राणां च अनुमत्या=विचारेण शुभदिने=शुभे मुहूर्ते निजतनयं = स्वदुहितरम् बालचन्द्रिकाम् इमाम् मह्यं = सोमदत्ताय अदात् = दत्तवान्।

ततः=तदनन्तरम्, यौवराज्याभिषिक्तः=युवा चासौ राजा युवराजः युवराजस्य भावः यौवराज्यम् तस्मिन् अभिषिक्तः=नियुक्तः यौवराज्याभिषिक्तः, अहं=सोमदत्तः, अनुदिनं=प्रत्यहम् आराधितमहीपालचित्तः—आराधितं = सेवितम् अनुकूलाचरणेन सन्तोषितम् महीपालस्य = राज्ञो वीरकेतोः चित्तं हृदयं येन सः तथोक्तः अनया= अमुया, वामलोचन = चञ्चलनेत्रया बालचन्द्रिकया सह नानविधं = बहुप्रकारकम्, सौख्यम् = आनन्दम् अनुभवन्, भवद्विरवेदनाशल्यमुलभवैकल्यः—भवतः = तव राजवाहनस्य• विरहेण = वियोगेन या वेदना = व्यथा सा एव शल्यं = शङ्कुः तेन

प्रकार के घोड़े, हाथी, रथ आदि वस्तुओं को लेकर मैं मन्त्री मानपाल के पास उपस्थित हुआ जिससे देखकर उन्होंने परमानन्दित होकर मेरा अत्यन्त आदर-सत्कार किया।

(११) तदनन्तर मानपाल द्वारा प्रेषित सैनिकों से मत्तपाल का वध तथा मेरा वृत्त सुनकर राजा वीरकेतु अत्यन्त प्रसन्न हुआ और मेरी अगवानी के लिए स्वयं चल पड़ा। उसे मेरे पराक्रम पर बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने बड़े उत्साह के साथ अपने मंत्री तथा इष्ट मित्रों की राय से शुभ मुहूर्त में सविधि अपनी कन्या से मेरा विवाह कर दिया।

कुछ दिनों के बाद वीरकेतु ने मुझे युवराज पद पर अभिषिक्त कर दिया और मैं भी अपनी सेवाओं से राजा को प्रतिदिन प्रसन्न रखता हुआ इस वामलोचना के साथ

हृदयसुलभवैक्लव्यहृदयः सिद्धादेशेन सुहृज्जनावलोकनफलं प्रदेशं महाकालनिवासिनः परमेश्वरस्याराधनायाद्य पत्नीसमेतः समागतोऽस्मि। भक्तवत्सलस्य गौरीपतेः कारुण्येन त्वत्पदारविन्दसंदर्शनानन्दसंदोहो मया लब्धः' इति।

(१२) तन्निशम्याभिनन्दितपराक्रमो राजवाहनस्तन्निरपराधदण्डे दैवमुपालभ्य तस्मै क्रमेणात्मचरितं कथयामास। तस्मिन्नवसरे पुरतः पुष्पोद्भवं विलोक्य ससंभ्रमं

वैक्लव्यं = कातर्यं विह्वलता यत्र तादृशं हृदयं यस्य सः तथोक्तः–नवद्विरहदुःखाकुलहृदयः, सिद्धादेशेन–सिद्धस्य = योगिनः आदेशेन = आज्ञया सिद्धादेशवशात् सुहृज्जनावलोकनफलं–सुहृज्जनस्य = सख्युः तव अवलोकनं = दर्शनमेव फलं = लाभः यस्य यत्र वा स तं तथोक्तम्, प्रदेशम्=स्थानम् प्रदेशेऽस्मिन् त्वत्सार्थितं मित्रावलोकनं भविष्यतीति सिद्धेनादिष्टम्। महाकालनिवासिनः–महाकालायामुज्जयिन्यां महादेवस्थानं तत्र निवासिनो वर्तमानस्य परमेश्वरस्य = भगवतः शिवस्य आराधनाय = सन्तोषणाय अर्चनाय, अद्य = अस्मिन्नहनि इदानीम्। पत्नीसमेतः = भार्याद्वितीयः समागतः = उपस्थितोऽस्मि। भक्तवत्सलस्य—भक्तेषु = सेवकेषु वत्सलः = कृपालुः तस्य भक्तवत्सलस्य, गौरीपतेः = उमावल्लभस्य, कारुण्येन = कृपया त्वत्पादरविन्दसंदर्शनानन्दसन्दोहः—तव = भवतः राजवाहनस्य पादारविन्दयोः = चरणकमलयोः सन्दर्शनेन = सम्यगवलोकनेन य आनन्दः हर्षः तस्य सन्दोहः = समूहः त्वदङ्घ्रिसरोजदर्शनहर्षावसरः, मया = सोमदत्तेन, लब्धः = आप्तः।

(१२) तन्निशम्य—तत् = सोमदत्तवृत्तान्तं निशम्य = श्रुत्वा, अभिनन्दितपराक्रमः–अभिनन्दितः = प्रशंसितः पराक्रमः=सोमदत्तस्य सामर्थ्यं येन स तथोक्तः, राजवाहनः = राजहंसतनयो युवराजा, तन्निरपराधदण्डे–तस्य = सोमदत्तस्य निरपराधस्य = अपराधरहितस्य दण्डे=कारावासे, दैवम्=अदृष्टम्, उपालभ्य=विनिन्द्य निन्दित्वा, तस्मै = सोमदत्ताय, क्रमेण = क्रमशः, आत्मचरितम् = निजवृत्तान्तम्, कथयामास = अचकथत्। तस्मिन्नवसरे = तस्मिन्नेव क्षणे, पुरतः–अग्रे, पुष्पोद्भव–

अनेक प्रकार के सुखों का उपभोग करने लगा, किन्तु आपकी विरह-जनित वेदना से विकलचित्त होकर एक सिद्ध पुरुष के आदेश से महाकाल निवासी भगवान् शिवजी की आराधना से मैं अपनी पत्नी के साथ मित्र से दर्शन कराने वाले इस प्रदेश में आया हूँ भक्तों में ऊपर दया करने वाले भगवान् शङ्कर की अनुपम अनुकम्पा से आज मैं आपके इन चरण-कमलों के दर्शन का सौभाग्य पा रहा हूँ और परम आनन्दित हो रहा हूँ।

(१२) सोमदत्त के मुख से यह सब वृत्तान्त सुनकर राजवाहन ने उसके पराक्रम की अत्यन्त प्रशंसा की और निरपराधी का दण्ड देने के निमित्त दैव को उपालम्भन दिया तथा उसमें क्रमशः अपना चरित कह सुनाया। उसी अवसर पर बड़े हर्ष के साथ अपना शिर

निजनिटिलतटस्पृष्टचरणाङ्गुलिमुदञ्जलिममुं गाढमालिङ्ग्यानन्दबाष्पसंकुलसंफुल्ललोचनः 'सौम्य सोमदत्त, अयं सः पुष्पोद्भवः' इति तस्मै तं दर्शयामास।

(१३) तौ च चिरविरहदुःखं विसृज्यान्योन्यालिङ्गनसुखमन्वभूताम्। ततस्तस्यैव महीरुहस्य छायायामुपविश्य राजा सादरहासमभापत—'वयस्य, भूसुरकार्यं करिष्णुरहं मित्रगणो विदितार्थः सर्वथान्तरायं करिष्यतीति निद्रितान्भवतः परित्यज्य

रत्नोद्भवपुत्रम् ससंभ्रमम् = साश्चर्यं सचकितम् विलोक्य = दृष्ट्वा, निजनिटिलतटस्पृष्टचरणाङ्गुलि:—निजेन = स्वेन, निटिलतटेन = भालस्थलेन, स्पृष्टाः = संसक्ताः राजवाहनस्य चरणाङ्गुलयः=पादपद्मकरशाखाः येन स तं तथोक्तम् उदञ्जलिं = बद्धाञ्जलिम्, अमुम् = पुरोवर्तिनम्, पुष्पोद्भवं = रत्नोद्भवपुत्रम् गाढं=अतिशयम्, आलिङ्ग्य = आश्लिष्य, आनन्दबाष्पसंकुलसम्फुल्ललोचनः—आनन्दबाष्पेण = हर्षजनिताश्रुणा संकुले = व्याप्ते सम्फुल्ले—विकसिते लोचने = नयने यस्य सः तथोक्तः, राजवाहनः, सौम्य! = सुभग! सोमदत्त! अयं = एष पुरतो दृश्यमानः स पुष्पोद्भवः = रत्नोद्भवपुत्रः इति तस्मै = सोमदत्ताय तं = पुष्पोद्भवम् दर्शयामास = अदर्शयत्।

(१३) तौ = सोमदत्त-पुष्पोद्भवौ, चिरविरहदुःखं—चिरेण = दीर्घकालेन विरहेण = वियोगेन यत् दुःखम् = क्लेशः तं तथोक्तं दीर्घकालादर्शनजनितक्लेशम्, विसृज्य = त्यक्त्वा, अन्योन्यालिङ्गनसुखम्—अन्योन्यस्य = परस्परस्य आलिङ्गने यत् सुखं तत्, अन्वभूताम्=अनुभवम् अकुरुताम्। ततः—तदनन्तरम्, तस्यैव महीरुहस्य=वृक्षस्य, छायायाम् = अधस्तले, उपविश्य = स्थित्वा, राजा = राजवाहनः, आदरेण सहितः=सादरः, सादरः हासो यत्र तत् सादरहासम्, अभाषत=उवाच, वयस्य! = सखे! भूसुरकार्यं = महीसुरकार्यम्, करिष्णुः = कर्तुं शीलः, अहं = राजवाहनः मित्रगणः—वयस्यसमूहः विदितार्थ—विदितः = ज्ञातः, अर्थः—प्रयोजनं येन स तथोक्तः सर्वथा = सर्वतोभावेन सर्वप्रकारेण, अन्तरायं = विघ्नं करिष्यतीति निश्चित्य

झुककर हाथ जोड़े हुए तथा राजवाहन के चरणों की अंगुलियों पर अपने मस्तक का स्पर्श करने वाले पुष्पोद्भव को अपने सामने देख राजवाहन ने शीघ्र उठकर उसे गले लगाया और आनन्दाश्रुओं से भरे नेत्रों से देखते हुए सोमदत्त से कहा—सौम्य सोमदत्त! देखो, यह पुष्पोद्भव भी आ पहुँचा।

(१३) वे दोनों भी परस्पर अधिक काल से प्राप्त वियोग व्यथा को त्यागकर परस्पर आलिङ्गन सुख का अनुभव करने लगे। अनन्तर उसी सघन वृक्ष की शीतल छाया में बैठकर राजवाहन ने बड़े आदर के साथ हँसते हुए प्रफुल्लित चित्त होकर कहा—'मित्र! उस ब्राह्मण का कार्य मुझे करना था। अतः मैंने सोचा कि आप लोगों से कहूँगा तो आप लोग अवश्य

निरगाम्। तदनु प्रबुद्धो वयस्यवर्गः किमिति निश्चित्य मदन्वेषणाय कुत्र गतवान्। भवानेकाकी कुत्र गतः' इति। सोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः सविनयमलपत्।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते सोमदत्तचरितं नाम तृतीय उच्छ्वासः।

—:o:—

निद्रितान् = निद्रापरवशान्, भवतः = युष्मान्, परित्यज्य = विहाय, निरगाम् = अगच्छम्, तदनु = तत्पश्चात्, प्रातःकाले प्रबुद्धः = शयनादुत्थितः, जागरितः, वयस्यवर्गः = मित्रसमूहः किं निश्चित्य = निर्णीय मदन्वेषणाय = अस्मन्मार्गणाय कुत्र गतवान्, एकाकी = असहायः भवान् त्वं = पुष्पोद्भवः कुत्र गतः? ?- इति सः- पुष्पोद्भवोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः—ललाटतटं = भालस्थलम् चुम्बत् = स्पृशत् अञ्जलिपुटं यस्य स तथोक्तः = शिरसि बद्धाञ्जलिः सविनयं = विनयेन सहितम् यथा स्यात्तथा अलपत् = अवोचत्।

इति आचार्यदण्डिकृतस्य दशकुमारचरितस्य पूर्वपीठिकायां
पं० श्रीकृष्णमणित्रिपाठिना कृतायां चन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां तृतीय उच्छ्वासः समाप्तः।

—:o:—

बाधक होंगे। इसलिए आप लोगों को सोते हुए छोड़कर मैं चला गया। उस ब्राह्मण के साथ मेरे चले जाने पर जब आप लोग जगे तो क्या निश्चय करके कहाँ गये? और आप अकेले कहाँ गये?' यह सुनकर विनयपूर्वक हाथ जोड़कर अपने मस्तक पर लगाकर पुष्पोद्भव भी कहने लगा।

इस प्रकार जनपद देवरिया, पो० कुबेरनाथ, ग्राम धर्मागतछपरा
निवासी पं० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी द्वारा की गयी
दशकुमारचरित पूर्वपीठिका तृतीय उच्छ्वास
की हिन्दी व्याख्या विमला समाप्त।

चतुर्थोच्छ्वासः

(१) 'देव, महीसुरोपकारायैव देवो गतवानिति निश्चित्यापि देवेन गन्तव्यं देशं निर्णेतुमशक्नुवानो मित्रगणः परस्परं वियुज्य दिक्षु देवमन्वेष्टुमगच्छत्।

(२) अहमपि देवस्यान्वेषणाय महीमटन्कदाचिदम्बरमध्यगतस्याम्बरमणेः किरणमसहिष्णुरेकस्य गिरितटमहीरुहस्य प्रच्छायशीतले तले क्षणमुपाविशम्। मम पुरोभागे दिनमध्यसंकुचितसर्वावयवां कूर्माकृतिं मानुषच्छायां निरीक्ष्योन्मुखो

---

(१) देव! महीसुरोपकाराय–महीसुरस्य=भूदेवस्य–ब्राह्मणस्य उपकारः=साहाय्यं तस्मै तथोक्ताय=विप्रोपकारार्थमेव देवः=भवान्, गतवान्=प्रस्थितः, इति निश्चित्य=निर्णीय अपि, देवेन–भवता, गन्तव्यं=गन्तुं योग्यम्, देशं=स्थानम्, निर्णेतुं=निश्चेतुम, अशक्नुवानः=अशक्नुवन् असमर्थः, मित्रगणः=वयस्यसमूहः परस्परम्=अन्योन्यम, वियुज्य=पृथग्भूय, दिक्षु=विभिन्नदेशेषु देवं=भवन्तम्, अन्वेष्टुम=मार्गितुम्, अगच्छत्=गतवान्।

(२) अहमपि–पुष्पोद्भवोऽपि, देवस्य=भवतः, अन्वेषणाय=मार्गणाय महीं=पृथिवीम, अटन्=भ्रमन्, कदाचित्=एकदा, अम्बरमध्यगतस्य अम्बरस्य–आकाशस्य मध्यं अन्तरालम्; गतस्य=प्राप्तस्य, मध्याकाशस्थितस्य अम्बरमणेः–सूर्यस्य किरणम्=अंशुम् तापम्, असहिष्णुः=सोढुमसमर्थः, एकस्य कस्यचित् गिरितटमहीरुहस्य—गिरे=पर्वतस्य तटम्=तीरम्, उपत्यका तत्र महीरुहस्य=वृक्षस्य, प्रच्छायशीतले=प्रकृष्टा छाया प्रच्छायम् तेन शीतलं=शीतं तस्मिन् तथोक्ते, तले=अधोभागे, क्षणम्=मुहूर्तम्, उपाविशम्=उपविष्टवान्। मम–पुष्पोद्भवस्य, पुरोभागे=अग्रे, सम्मुखे दिनमध्यसमये—दिनस्य=दिवसस्य मध्यः=मध्यभागः तस्मिन् समये=मध्याह्ने, संकुचितावयवं—संकुचिताः=आकुञ्चिताः संक्षिप्ताः सर्वे=सकलाः अवयवाः=अङ्गानि यस्याः सा ताम्, तथोक्ताम्, कूर्माकृतिम्=

---

(१) हे देव! आप ब्राह्मण के उपकारार्थ गये होंगे, यह निश्चय होने पर भी मित्रवर्ग यह निश्चय नहीं कर पाया कि आप किधर गये होंगे। अन्त में हम लोग परस्पर संकेतस्थल (पुनः आकर मिलने का स्थान) को निश्चय करके अलग-अलग होकर आपको चारों दिशाओं में ढूँढ़ने के लिए निकल पड़े।

(२) अन्त में, मैं भी आपको ढूँढ़ने के लिए पृथ्वी पर घूमते-घूमते एक दिन दोपहर के समय सूर्य की प्रखर किरणों को न सह सकने के कारण पर्वत के किनारे एक सघन छाया वाले वृक्ष के नीचे कुछ देर विश्राम करने के निमित्त बैठ गया। दोपहर के समय अपने समक्ष सभी अवयवोंको सिकुड़ाये कछुए के समान आकारवाले मनुष्यकी छाया दिखाई दी।

गगनतलान्महारयेण पतन्तं पुरुषं कंचिदन्तराल एव दयोपनतहृदयोऽहमवलम्ब्य शनैरवनितले निक्षिप्य दूरापातवीतसंज्ञं तं शिशिरोपचारेण विबोध्य शोकातिरेकेणोद्गतबाष्पलोचनं तं भृगुपतनकारणमपृच्छम्।

(३) सोऽपि कररुहैरश्रुकणानपनयन्नभाषत-'सौम्य, मगधाधिनाथामात्यस्य पद्मोद्भवस्यात्मसंभवो रत्नोद्भवो नामाहम्। वाणिज्यरूपेण कालयवनद्वीपमुपेत्य

कूर्मस्य = कमठस्य आकृतिः=आकारः यस्याः सा ताम् = कमठाकृतिम् मानुषच्छायाम्—मानुषस्य = मनुष्यस्य छाया इति मानुषच्छाया तां तथोक्ताम्, निरीक्ष्य = अवलोक्य, उन्मुखः उत् = ऊर्ध्वं मुखं = आननं यस्य सः उन्मुखः = ऊर्ध्वमुखः, गगनतलात्=आकाशात्, महारयेण = बहुवेगेन, पतन्तं = स्खलन्तम्, कश्चित् = एकम् पुरुषम्, अन्तराले = मध्ये भूमिस्पर्शात् प्रथमम् एव दूरापातवीतसंज्ञं—दूरात् = दूरदेशात् आपातः = पतनम् तेन वीता = अपगता संज्ञा = चेतना, चेष्टा यस्य स तं तथोक्तम्, तं = छायाकृति पतन्तं पुरुषम्, दयोपनतहृदयः—दयया = कारुण्येन, उपनतं = नम्रीभूतं, हृदयं = स्वान्तःकरणं यस्य स तथोक्तः अहं = पुष्पोद्भवः, अवलम्ब्य = गृहीत्वा, शनैः = मन्दम्, अवनितले = पृथ्वीतले, निक्षिप्य = संस्थाप्य शिशिरोपचारेण—जलसेकादिना, विबोध्य—प्रकृतिस्थं कृत्वा, विधाय शोकातिरेकेण—दुःखातिशयेन, उद्गतबाष्पलोचनं—उद्गतं = निर्गतं बाष्पं = अश्रु याभ्यां तादृशी लोचने = नयने यस्य स तम्, तं = पतन्तं पुरुषम् भृगुपतनकारणम् = भृगोः पर्वतात् पतनस्य = स्खलनस्य कारणं = हेतुम् अपृच्छं = पृष्टवान्।

(३) सोऽपि = पतन् पुरुषोऽपि, कररुहैः = अङ्गुलिभिः, अश्रुकणान् = नयनाम्बुबिन्दून् अपनयन् = दूरीकुर्वन्, अभाषत = उक्तवान्। सौम्य ! = सुभग ! मगधाधिनाथामात्यस्य—मगधाधिनाथस्य = राजहंसस्य अमात्यस्य=मन्त्रिणः पद्मोद्भवस्य = पद्मोद्भवनामकस्य, आत्मसम्भवः=पुत्रः रत्नोद्भवो नाम—रत्नोद्भवनामा अहम् अस्मि, वाणिज्यरूपेण = वाणिज्येन कर्मणा व्यापाराभिलाषेण कालयवनद्वीपम्—कालयवननामकं द्वीपम् = देशम्, उपेत्य = गत्वा कामपि = एकाम्

मैंने ऊपर की ओर मुँह करके देखा तो मालूम पड़ा कि कोई पुरुष आकाश से गिरकर नीचे की ओर आ रहा है। यह देख मुझे दया आ गयी। मैंने उसे बीच में ही रोककर धीरे से नीचे उतार दिया। दूर से गिरने के कारण वह बेहोश हो गया था, शीतोपचार से उसे होश में लाया। अधिक शोक के कारण उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे। तब मैंने पहाड़ पर से गिरने का कारण उससे पूछा।

(३) उस पुरुष ने अपने हाथों से अपने अश्रुबिन्दुओं को पोंछकर कहा—सौम्य ! मैं मगधेश्वर राजहंस के मन्त्री पद्मोद्भव का पुत्र हूँ और मेरा नाम रत्नोद्भव है, मैं व्यापार के

कामपि वणिक्कन्यकां परिणीय तया सह प्रत्यागच्छन्नम्बुधौ तीरस्यानतिदूर एव प्रवहणस्य भग्नतया सर्वेषु निमग्नेषु कथंकथमपि दैवानुकूल्येन तीरभूमिमभिगम्य निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे प्लवमानः कस्यापि सिद्धतापसस्यादेशादरेण षोडश हायनानि कथंचिन्नीत्वा दुःखस्य पारमनवेक्षमाणः गिरिपतनमकार्षम्' इति।

(४) तस्मिन्नेवावसरे किमपि नारीकूजितमश्रावि—'न खलु समुचितमिदं यत्सिद्धादिष्टे पतितनयमिलने विरहमसहिष्णुर्वैश्वानरं विशामि' इति।

वणिक्कन्यकाम् = व्यापारिणः पुत्रीम्, परिणीय = विवाह्य उपयम्य, तया = स्वभार्यया, सह = साकम् प्रत्यागच्छन् = परावर्तमानः, अम्बुधौ = समुद्रे, तीरस्य = तटस्य अनतिदूरे = समीपे एव, प्रवहणस्य = पोतस्य, नौकायाः, भग्नतया = विदीर्णतया, सर्वेषु = समस्तेषु नौकास्थितेषु समुद्रे निमग्नेषु कथंकथमपि = येन केन प्रकारेणापि अतिकष्टेन दैवानुकूल्येन = दैवसाहाय्येन, तीरभूमिं = तटप्रदेशम्, अभिगम्य = उपस्थाय, निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे - निजायाः = स्वकीयायाः अङ्गनायाः = पत्न्याः यद् वियोगदुःखं = विरहक्लेशम् तदेव अर्णवः = समुद्रः तस्मिन् तथोक्ते। प्लवमानः = संतरन्, कस्यापि = एकस्य सिद्धतापसस्य = सिद्धयोगिनः आदेशादरेण = आज्ञाविश्वासेन, षोडश = षट् च दश चेति षोडश = षडुत्तरदश, हायनानि = वत्सरान् वर्षाणि, कथञ्चित् = कथंकथमपि, महता कष्टेन नीत्वा = अतिवाह्य, दुःखस्य = कष्टस्य पारम् = अन्तम्, अनवेक्षमाणः = अपश्यन्, गिरिपतनम् = पर्वतपतनम्, अकार्षम् = कृतवान्।

(४) तस्मिन्नेव अवसरे = समये किमपि नारीकूजितम् = नार्याः स्त्रियाः कूजितम्—नारीक्रन्दितम्, स्त्रीक्रन्दनध्वनिः, अश्रावि = श्रुतम्। इदं = कार्यम् न समुचितं = न युक्तम्, पतितनयमिलने = पत्युः तनयस्य च मिलने = संगमे पतिपुत्र-

सिलसिले में कालयवनद्वीप में गया हुआ था, वहाँ एक वणिक्पुत्री के साथ मेरा विवाह हो गया। कुछ दिनों के बाद उसे साथ लेकर मैं नौका द्वारा अपने घर लौट ही रहा था कि कुछ दूर आने पर मेरी नाव एक पत्थर से टकराकर टूट गयी तथा उसपर चढ़े सभी यात्री डूब गये। दैववश मैं बहता हुआ किसी प्रकार अकेला तटभूमिपर आ लगा। अपनी स्त्री के वियोगरूप दुःख-समुद्र में बहता हुआ किसी एक तपस्वी के आश्रम पर जा पहुँचा। वहाँ तपस्वी के आश्वासन दिलाने पर कि तुम्हारी पत्नी सोलह वर्ष में मिलेगी उस सिद्ध तपस्वी के वचन पर विश्वास कर मैंने १६ वर्ष बिताये किन्तु, अब भी उसके न मिलने के कारण निराश होकर अपने दुःख का अन्त करने के निमित्त मैं पर्वत से नीचे कूद पड़ा हूँ।

(४) इस प्रकार बातें कर ही रहा था कि उसी समय एक स्त्री के रोने की आवाज सुनाई पड़ी। वह कह रही थी कि हे भगवान! जब एक तपस्वी ने बता दिया है कि तुम्हारे पति

(५) तन्निशम्य मनोविदितजनकभावं तमवादिषम्—'तात, भवते विज्ञापनीयानि बहूनि सन्ति। भवतु। पश्चादखिलमाख्यानव्यम्। अधुना नारीकूजितमनुपेक्षणीयं मया। क्षणमात्रमत्र भवता स्थीयताम्' इति।

(६) तदनु सोऽहं त्वरया किंचिदन्तरमगमम्। तत्र पुरो भयङ्करज्वालाकुलहुतभुगवगाहनसाहसिकां मुकुलिताञ्जलिपुटां वनितां कांचिदवलोक्य ससंभ्रममबलादनीय कूजन्त्या वृद्धया सह मत्पितुरभ्यर्णमभिगमय्य स्थविरामवोचम—

-संगमविषये। सिद्धादिष्टे=मुनिकथिते षोडशवर्षानन्तरं ते पति-पुत्रयोर्मिलनं नूनं भविष्यतीति सिद्धवचने, विरहेण=वियोगजन्यं दुःखम् असहिष्णु.=सोढुमशक्नुवती, वैश्वानरं=वह्निम् विशसि=त्वं प्रविशसि।

(५) तन्निशम्य=नारीकूजितं श्रुत्वा मनोविदितजनकभावं—मनसा=अन्तःकरणेन विदितः=ज्ञातः जनकभावः=मत्पितृत्वं यस्य स तम् अयमेव मे जनक इति निश्चयविषयीकृतम्, तं=पुरः पतितम् पुरुषम्, अवादिषम्=प्रोक्तवान् अहम्—तात! भवते विज्ञापनीयानि=निवेदनीयानि बहूनि सन्ति। भवतु=तिष्ठतु। अधुना=साम्प्रतम्, नारीकूजितम्=स्त्रीक्रन्दनम्, अनुपेक्षणीयम्=नोपेक्षणीयमस्ति, उपेक्षितुमनुचितमिति भावः। मया=पुष्पोद्भवेन, अत्र=अस्मिन् प्रदेशे क्षणमात्रं=मुहूर्तमात्रम् भवता स्थीयतां=आस्यताम्।

(६) तदनु=तत्पश्चात्, सोऽहं=अहं पुष्पोद्भवः त्वरया=अतिशीघ्रम् किञ्चित्, अन्तरं=दूरम्, अगमम्=गतवान् तत्र=तस्मिन् स्थाने, पुरतः=अग्रे भयङ्करज्वालाकुलहुतभुगवगाहनसाहसिकाम्—भयङ्कराभिः ज्वालाभिः=भीषणशिखाभिः व्याप्ते=पूर्णे, हुतभुजिः=अग्नौ, अवगाहने=प्रवेशे, साहसिकां—कृतोत्साहाम् =अनलप्रवेष्टुमुद्यताम्, मुकुलिताञ्जलिपुटाम्—मुकुलितं=बद्धम्, अञ्जलिपुटं यस्याः सा ताम् बद्धाञ्जलिम्, काञ्चित्=एकाम्, वनितां=स्त्रियम्, विलोक्य=वीक्ष्य,

तथा पुत्र दोनों सोलह वर्ष में मिल जायेंगे, तो फिर क्यों वियोग जनित कष्टों को सहन करने में असमर्थ होकर आग में प्रवेश कर रही हो?

(५) यह सुनकर मेरे मन में आ गया कि ये मेरे पिता हैं। मैंने कहा—तात! मुझे आपसे बहुत कुछ कहना है। अतः आप क्षणमात्र बैठें, सारी बातें पीछे कहूँगा। सम्प्रति उस नारीक्रन्दन की उपेक्षा करना समुचित नहीं।

(६) ऐसा कहकर मैं शीघ्र ही बड़े वेग से कुछ दूर आगे बढ़ गया। वहाँ देखा कि एक स्त्री हाथ जोड़े खड़ी है तथा अपने सामने भयङ्कर आग की ज्वाला में कूदने का साहस कर रही है। मैंने तत्काल वहाँ पहुँचकर उसे आग से दूर कर दिया और उस महिला के पास जो एक वृद्धा स्त्री रो रही थी, उसे तथा जलने के लिए उद्यत हुई स्त्री को

'वृद्धे, भवत्यौ कुत्रत्ये। कान्तारे निमित्तेन केन दुरवस्थानुभूयते। कथ्यताम्' इति।

(७) सा सगद्गदमवादीत्—'पुत्र, कालयवनद्वीपे कालगुप्त नाम्नो वणिजः कस्यचिदेषा सुता सुवृत्ता नाम रत्नोद्भवेन निजकान्तेनागच्छन्ती जलधौ मग्ने प्रवहणे निजधात्र्या मया सह फलकमेकमवलम्ब्य दैवयोगेन कूलमुपेतासन्नप्रसवसमया कस्याञ्चिदटव्यामात्मजमसूत। मम तु मन्दभाग्यतया बाले वनमातङ्गेन गृहीते मद्द्वितीया परिभ्रमन्ती 'षोडसवर्षानन्तरं भर्तृपुत्रसङ्गमो भविष्यति' इति

ससंभ्रमम् = सहसा झटिति = सत्वरम्, अनलात् = अग्नेः, अपनीय = दूरीकृत्य कूजन्त्या = क्रन्दन्त्या रुदन्त्या, वृद्धया = स्थविरया सह = साकम्, मत्पितुः = स्वतातस्य, अभ्यर्णम् = अन्तिकं समीपम्, अभिगमय्य = प्रापय्य, आनीय, स्थविराद् = वृद्धाम् अवोचम् = अगादिषम्, वृद्धे = स्थविरे। भवत्यौ = युवाम् द्वयमेषां च कुत्रत्ये = कुत्र जाते कस्मात् स्थानादत्रागते, कान्तारे = अस्मिन् दुर्गमे पथि केन निमित्तेन = कारणेन, दुरवस्था—दुर् = दुःखदा अवस्था = दशेति दुरवस्था = एतादृशी दुर्दशा, अनुभूयते = अनुभवविषयीक्रियते भवतीभ्यामिति याथातथ्येन कथ्यताम्।

(७) सा = वृद्धा, सगद्गदम् = बाष्पावरुद्धकण्ठम्, कालगुप्तनाम्नः = कालगुप्तनामकस्य वणिजः = व्यापारवृत्तेः, सुवृत्तानाम = सुवृत्तानाम्नी, सुता = पुत्री, रत्नोद्भवेन = रत्नोद्भवनामकेन निजभर्त्रा = स्वपतिना, जलधौ = समुद्रे, प्रवहणे = जलयाने, मग्ने = बूडिते सति, निजधात्र्या = स्वोपमात्रा, मया = वृद्धया, सह = साकम्, फलकं = काष्ठखण्डम्, अवलम्ब्य = आधृत्य, कूलं = तटम् उपेता = प्राप्ता, आसन्नप्रसवसमया—आसन्नः समीपवर्ती प्रसवो गर्भो यस्याः सा तया = पूर्णगर्भया, अटव्यां = अरण्ये, आत्मजं = तनयम् असूत = प्रासोष्ट, मन्दभाग्यतया = दुर्दैवेन बाले = बालके, वनमातङ्गेन = अरण्यगजेन, गृहीते = स्वाधीनीकृते, मद्द्वितीया =

लेकर अपने पिता के समीप आकर मैंने उसके समक्ष उस वृद्धा स्त्री से पूछा—वृद्धे! तुम दोनों कौन हो एवं कहाँ की रहनेवाली हो, और इस जंगल में क्यों इस प्रकार का दुःसाहस कर कष्ट उठा रही हो?

(७) वह वृद्धा स्त्री आँखों में आँसू भरे धीमे स्वर से बोली—वत्स! कालयवन द्वीप के कालगुप्त नामक बनिये की यह पुत्री है, इसका नाम सुवृत्ता है। यह अपने पति रत्नोद्भव के साथ नौका में बैठकर आ रही थी। दैवात् नौका समुद्र में डूब गयी, मैं इसकी धायी थी, हम दोनों एक काठ के सहारे भाग्यवश तीर पर आ लगीं। इसका गर्भ पूरा हो चुका था। अतः इसको एक जंगल में पुत्र उत्पन्न हो गया। दुर्भाग्य से एक जंगली हाथी उस बच्चे को ले भागा। यह विलाप करती हुई मेरे साथ एक सिद्ध महात्मा के पास गयी, उन्होंने फल बतलाया कि तुम्हारे पति तथा पुत्र दोनों १६ वर्ष के बाद अवश्य मिल जायेंगे। तब से

सिद्धवाक्यविश्वासादेकस्मिन्पुण्याश्रमे तावन्तं समयं नीत्वा शोकमपारं सोढुमक्षमा समुज्ज्वलिते वैश्वानरे शरीरमाहुतीकर्तुमुद्युक्तासीत्' इति।

(८) तदाकर्ण्य निजजननीं ज्ञात्वा तामहं दण्डवत्प्रणम्य तस्यै मदुदन्तमखिलमाख्याय धात्रीभाषणफुल्लवदनं विस्मयविकसिताक्षं जनकमदर्शयम्। पितरौ तौ साभिज्ञानमन्योन्यं ज्ञात्वा मुदितान्तरात्मानौ विनीतं मामानन्दाश्रुवर्षेणाभिषिच्य गाढमाश्लिष्य शिरस्युपाघ्राय कस्यांचिन्महीरुहच्छायायामुपाविशताम्।

अहं द्वितीया यस्याः सा, मच्छरणाः परिभ्रमन्ती = परितः संचरन्ती, षोडशवर्षानन्तरं=षडधिकदशवर्षोर्ध्वं, भर्तृपुत्रसंगमः = पतिपुत्रसंयोगः, भविष्यति, इति सिद्धवाक्यविश्वासात् = फलादेशवक्तृवचनात्, पुण्याश्रमे=पवित्रस्थाने, तावन्तं = षोडशवर्षमितम्, नीत्वा = यापयित्वा, अपारं = अनन्तम्, शोकं = भर्तृपुत्रविरहजं दुःखं, सोढुं = सहनं कर्तुम् अक्षमा=असमर्था, समुज्ज्वलिते=प्रज्वलिते, वैश्वानरे = अग्नौ, आहुतीकर्तुं = प्रक्षिप्य भस्मसात् कर्तुम्, उद्युक्ता = तत्परा, आसीत् = अजायत।

(८) तत् = वृद्धोक्तं वचनम्, आकर्ण्य=निशम्य अहं=पुष्पोद्भवः निजजननीं=स्वां मातरम् ज्ञात्वा=बुद्ध्वा इयमेव मे मातेति निश्चित्य तां = वनिताम् दण्डवत् = साष्टाङ्गं प्रणम्य = नमस्कृत्य तस्यै = स्वमात्रे अखिलं = सकलम् मदुदन्तं=आत्मीयं वृत्तान्तम्, आख्याय = कथयित्वा, धात्रीभाषणप्रफुल्लवदनं—धात्र्याः=उपमातुः वृद्धाया भाषणेन = कथनेन, फुल्लं = हर्षविकसितम् वदनम् = आननं यस्य स तं तथोक्तम्, विस्मयविकसिताक्षम्, विस्मयेन = आश्चर्यरसेन विकसिते = उत्फुल्ले अक्षिणी = नेत्रे यस्य स तं तथोक्तम् जनकं = पितरम्, अदर्शयम् = दर्शितवानहम्। तौ—माता च पिता च पितरौ = मातापितरौ, साभिज्ञानं—अभिज्ञानेन = परिचित्य मुदितात्मनौ=मुदितः प्रसन्न आत्मा ययोस्तौ, विनीतं = प्रश्रितम्, मां = पुष्पोद्भवम्, आनन्दाश्रुवर्षेण-आनन्दस्य = प्रसन्नतायाः अश्रूणि = नेत्राम्बूनि तेषां वर्षेण = हर्षजनितनेत्रजलवर्षणेन अभिषिच्य = सिक्त्वा गाढं = दृढम्, आश्लिष्य = आलिङ्ग्य,

---

महात्मा के वाक्य में विश्वास करके यह सुवृता मेरे साथ एक पवित्र आश्रम में जीवनयापन कर रही थी, किन्तु १६ वर्ष पूर्ण होनेपर भी इसके पुत्र पति न मिले तो यह अपार शोक-सागर में डूबकर इस जलती हुई आग में,आज जलने के लिए तत्पर हो गयी थी।

(८) धाई की इन बातों को सुनकर मैंने समझ लिया कि यह महिला मेरी माँ है, मैं उन्हें दण्डवत् प्रणाम करके अपनी सारी कहानी कह सुनायी, धात्री की बातें सुनकर प्रसन्नमुख और विस्मय से प्रफुल्ल नेत्रवाले अपने पिता को उनके दर्शन कराये। पुनः वे मातापिता परस्पर परिचयात्मक चिह्नों से एक-दूसरे को पहचान कर प्रसन्न हुए और मुझे अपने हृदय से लगा लिया और आनन्दाश्रुओं से मुझे भिगोते हुए मेरा मस्तक सूँघा। बाद आनन्द

(९) 'कथं निवसति महीवल्लभो राजहंसः' इति जनकेन पृष्टोऽहं तस्य राज्यच्युतिं त्वदीयजननं सकलकुमारावाप्तिं तव दिग्विजयारम्भं भवतो मातङ्गानुयानमस्माकं युष्मदन्वेषणकारणं सकलमभ्यधाम्। ततस्तौ कस्यचिदाश्रमे मुनेरस्थापयम्। ततो देवस्यान्वेषणपरायणोऽहमखिलकार्यनिमित्तं वित्तं निश्चित्य भवदनुग्रहाल्लब्धस्य साधकस्य साहाय्यकरणदक्षं शिष्यगणं निष्पाद्य विन्ध्यवनमध्ये पुरातनपत्तनस्थानान्युपेत्य विविधनिधिसूचकानां महीरुहाणामधोनिक्षिप्तान्

शिरसि = मस्तक, उपाघ्राय = घ्रात्वा। कस्याञ्चित् = कस्याम् महीरुहच्छायायाम् = वृक्षच्छायायाम्, उपाविशताम् = जननीजनकौ उपविष्टौ।

(९) महीवल्लभ = महावल्लभो महीपतिः राजा राजहंसः, कथं = केन प्रकारेण निवसति = निवासं करोति। इति जनकेन = तातेन पृष्टः = जिज्ञासितः, अहं = पुष्पोद्भवः तस्य = राज्ञः, राज्यच्युति = राज्यभ्रंशम्, त्वदीयजननं = युष्मदुत्पत्ति, सकलकुमारावाप्ति—सकलानां कुमाराणां अवाप्ति = प्राप्ति, तव = भवतः दिग्विजयारम्भं = दिग्यात्राप्रारम्भं भवतः = तव मातङ्गानुयानम् = मातङ्गनाम्ना ब्राह्मणस्य, अनु = पश्चात् यानम् = गमनम्, अस्माकं = कुमाराणां च युष्मदन्वेषणं = त्वन्मार्गणं, सकलं = सम्पूर्णम् अभ्यधाम् = अकथयम्। ततः = तदनन्तरम्, तौ = मातापितरौ कस्यचित् = एकस्य, मुनेः = ऋषेः, आश्रमे = निवासस्थले, अस्थापयम् = न्यवासयम्, ततः = तदनन्तरम् देवस्य = भवतः, अन्वेषणे = मार्गणे, परायणः = तत्परः, अहं = पुष्पोद्भवः, अखिलकार्यनिमित्तं—अखिलानां = सकलानां कार्याणां निमित्तं = साधनम्, वित्तं = धनम् निश्चित्य = निर्णीय भवदनुग्रहात्—भवतः = तव अनुग्रहात् = कृपावशात्, लब्धस्य = प्राप्तस्य, साधकस्य = मुनेः साहाय्यकरणदक्ष = सहायताकार्यकरणे प्रवीणम्, शिष्यगणं = छात्रवर्गम्, निष्पाद्य = सम्पाद्य, विन्ध्यवन-

---

विभोर होकर समीपस्थ एक वृक्ष की छाया में बैठ गये।

(९) पिताजी के यह पूछने पर कि महाराज राजहंस किस प्रकार निवास कर रहे हैं? उनका क्या समाचार है? मैंने उनकी राज्यच्युति, आपका जन्म, सभी कुमारों का मिलना, आपके दिग्विजयार्थ प्रस्थान, मातङ्ग ब्राह्मण के कार्यसिद्ध्यर्थ आपका पाताल प्रवेश, आपके ढूँढ़ने के निमित्त हम लोगों के प्रस्थान का समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। बाद उन दोनों को एक मुनि के आश्रम पर ले जाकर ठहरा दिया।

फिर मैं आपकी खोज में निकला। एक दिन मैंने सोचा कि सभी कार्य धन से साधे जाते हैं। अतः धनप्राप्ति का उपाय ढूँढ़ना चाहिए। आपकी कृपा से उसी समय मुझे धनप्राप्ति का एक उपाय सूझ गया, मैंने कुछ चतुर शिष्य तैयार किये, जो मुझे इस कार्य में सहयोग दे सकें। बाद विन्ध्याचल के एक प्राचीन नगर के भग्नावशेष स्थल में जा पहुँचा। वहाँ अपनी

वसुपूर्णान् कलशान् सिद्धाञ्जनेन ज्ञात्वा रक्षिषु परितः स्थितेषु खननसाधनैरुत्पाट्य दीनारानसंख्यान् राशीकृत्य तत्कालागतमनतिदूरे निवेशितं वणिक्कटकं कञ्चिदभ्येत्य तत्र बलिनो बलीवर्दान् गोणींश्च क्रीत्वान्यद्द्रव्यमिषेण वसु तद्गोणीसंचितं तैरुह्यमानं शनैः कटकमनयम्।

(१०) तदधिकारिणा चन्द्रपालेन केनचिद्वणिक्पुत्रेण विरचितसौहृदोऽहममुनैव साकमुज्जयिनीमुपाविशम्। मत्पितरावपि तां पुरमभिगमय्य सकलगुणनिलयेन

मध्ये = विन्ध्याटवीमध्ये, पुरातनपत्तनस्थानानि = प्राचाननगरभूमाः, उपेत्य = प्राप्य, विविधनिधिसूचकानां—विविधानां = अनेकप्रकाराणाम् निधीनां = शेवधीनाम् सूचकानाम् = अनेकरत्नकुम्भस्थितिनिर्देशकानाम्, महीरुहाणां = वृक्षाणाम्, अधः = तले, निक्षिप्तान् = रक्षितान् सम्पूर्णान् = धनपूर्णान् कलशान् = कुम्भान् सिद्धाञ्जनेन = नयनदत्तेन कज्जलविशेषेण ज्ञात्वा = अवगम्य, रक्षिषु = प्रहरिषु रक्षायां नियुक्तेषु, परितः = समन्तात्, स्थितेषु = वर्तमानेषु, खननसाधनैः = खनित्रैः उत्पाट्य = भूमितो निःसार्य, असंख्यान् = संख्यातुमशक्यान्, दीनारान् = स्वर्णमुद्राविशेषान् राशीकृत्य = संहृत्य, तत्कालागत = तत्कालोपस्थितम् अनतिदूरे = समीपे निवेशितं = स्थापितम् वणिक्कटकम् = वणिग्वासम् वणिक्शिविरं कञ्चिदभ्येत्य = गत्वा, तत्र = कटके बलिनः = बलवतः पुष्टान् बलीवर्दान् = वृषभान् गोणीः = धान्यवाहनार्थं रज्जुनिर्मितपात्रविशेषान् च क्रीत्वा = विनिमयं विधाय अन्यद्द्रव्यमिषेण = द्रव्यान्तरव्याजेन, तद्गोणीसञ्चितं = तद्गोणीषु एकत्रीकृतम्, वसु = धनम्, तैः = बलीवर्दैः, उह्यमानं = नीयमानम्, शनैः = मन्दम्, कटकं = शिविरम्, अनयम् = आनीतवान्।

(१०) तदधिकारिणा = कटकस्वामिना, चन्द्रपालेन = चन्द्रपालनाम्ना केनचित् वणिक्पुत्रेण = वणिक्तनयेन विरचितसौहृदः—विरचितं = कृतं सौहृदं = मित्रत्वं येन सः तथाभूतः अहं = पुष्पोद्भवः, अमुना = चन्द्रपालेन एव साकं = सह

आँखों में सिद्धाञ्जन लगाकर मैंने अनेक प्रकार के खजाने की सूचना देनेवाले वृक्षों के नीचे गड़े धनपूर्ण कलशों को देखा। मैंने उनके चारों ओर रक्षकों को खड़ाकर दिया और खन्ती, कुदाल आदि खनने के साधनयन्त्रों द्वारा भूमि खोदवाकर असंख्य सुवर्ण द्रव्यराशि एकत्र की। उसी समय एक व्यापारी मण्डल वहाँ आकर ठहरा हुआ था, उन लोगों से मैंने अति बलिष्ठ कुछ बैल तथा बोरियाँ खरीदीं और अन्न आदि ढोने का बहाना करके उन बोरियों में सुवर्ण लादकर बैलों के द्वारा ढोकर धीरे से उन्हीं के पड़ाव पर लाया।

(१०) उस कटक का अधिकारी वैश्यकुल चन्द्रपाल था, जिसके साथ मैंने मित्रता कर ली और उसी के साथ मैं उज्जयिनी पहुँचा। कुछ समय के बाद मैं अपने माता-पिता को

बन्धुपालनाम्ना चन्द्रपालजनकेन नीयमानो मालवनाथदर्शनं विधाय तदनुमत्या गूढवसतिमकरवम्। ततः काननभूमिषु भवन्तमन्वेष्टुमुद्युक्तं मां परममित्रं बन्धुपालो निशम्यावदत्—'सकलं धरणितलमपारमन्वेष्टुमक्षमो भवान्मनोग्लानिं विहाय तूष्णीं तिष्ठतु। भवन्नायकालोकनकारणं शुभशकुनं निरीक्ष्य कथयिष्यामि, इति।

(११) तल्लपितामृताश्वासितहृदयोऽहमनुदिनं तदुपकण्ठवर्ती कदाचिदिन्दु-

---

उज्जयिनीं=अवन्तीम्, उपाविशम्=प्रविष्टः। मत्पितरौ=मम मातापितरौ च ताम्, उज्जयिनीपुरीम्, अभिगम्य=प्रापय्य नीत्वा, सकलगुणनिलयेन—सकलानां =समस्तानां गुणानां=दया-दाक्षिण्यादीनाम् निलयेन=स्थानभूतेन, बन्धुपालनाम्ना=बन्धुपालाभिधेन चन्द्रपालजनकेन=चन्द्रपालपित्रा, नीयमानः=प्राप्यमाणः, अहं=मालवनाथदर्शनार्थं=मालवाधिपतेः उज्जयिनीपतेः दर्शनं विधाय= कृत्वा, तदनुमत्या=मालवनाथस्य आज्ञया, गूढवसतिं=गुढावासम् अकरवं= कृतवान्। ततः=तदनन्तरं। काननभूमिषु=वनभूमिषु, भवन्तं=राजवाहनम् अन्वेष्टुं=मार्गितुम्, उद्युक्तं=सन्नद्धं मां, पुष्पोद्भवम् परममित्रं=उत्कृष्टसुहृदम्, बन्धुपालः=चन्द्रपालपिता, निशम्य=श्रुत्वा, अवदत्=कथयामास। अपारं= अनन्तम् सकलं=सम्पूर्णम्, धरणीतलम्=पृथ्वीतलम्, अन्वेष्टुं=गवेषितुम् अक्षमं =असमर्थो भवान्=पुष्पोद्भवः, मनोग्लानिं=निर्वेदम्, मनसः खेदम्, विहाय= त्यक्त्वा, तूष्णीम्=मौनम् तिष्ठतु, भवन्नायकालोकनकारणम्—भवतः=तव नायकस्य=प्रभोः आलोकनस्य=दर्शनस्य कारणम्=निमित्तम् शुभशकुनम्= शुभसूचकचिह्नम्, निरीक्ष्य=दृष्ट्वा, कथयिष्यामि=वक्ष्यामि।

(११) तस्य=बन्धुपालस्य, लपितं=भाषितमेव अमृतं=पीयूषं तेन आश्वासितं, निर्वृतं हृदयं=मानसं यस्य सः तथोक्तः, अहं=पुष्पोद्भवः अनुदिनं= प्रतिदिनम्, तदुपकण्ठवर्ती—तस्य=बन्धुपालस्य उपकण्ठे=समीपे वर्तितुं=स्थातुं शीलं यस्य स तथोक्तः—बन्धुपालसमीपवर्ती अभवम्। कदाचित्=एकदा, इन्दुमुखीं

भी वहीं ले गया। एक दिन सर्वकलाकुशल चन्द्रपाल के पिता बन्धुपाल के साथ आकर मैंने मालवाधिपति का दर्शन किया तथा उनकी आज्ञा से प्रच्छन्न वेश से निवास करने लगा। एक दिन वन प्रदेश में आपको ढूँढ़ने के निमित्त तैयार हुए मुझसे परम पिता बन्धुपाल ने कहा—यह भूमण्डल अति विशाल है, इसका पता लगाना सर्वथा असंभव है, अतः आप अपने मन की ग्लानि को छोड़कर शान्तिपूर्वक मौन हो बैठिए, आपके स्वामी का दर्शन हो ऐसा शुभशकुन देखकर मैं बता दूँगा।

(११) उस बन्धुपाल के सुधामय वचनों से मेरा चित्त कुछ शान्त हुआ, तथा प्रतिदिन

मुखीं नवयौवनालीढावयवां नयनचन्द्रिकां बालचन्द्रिकां नाम तरुणीरत्नं वणिङ्मन्दिरलक्ष्मीं मूर्तामिवावलोक्य तदीयलावण्यावधूतधीरभावो लतान्तबाणबाणलक्ष्यतामयासिषम् ।

(१२) चकितबालकुरङ्गलोचना सापि कुसुमसायकसायकायमानेन कटाक्षवीक्षणेन मामसकृन्निरीक्ष्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेवाकम्पत । मनसाभिमुखैः समाकुञ्चितरागलज्जान्तरालवर्तिभिः साङ्गवर्तिभिरीक्षणविशेषैर्निजमनोवृत्तिमकथयत् ।

=चन्द्रवदनाम्, नवयौवनलीढावयवाम्—नवयौवनेन = युवावस्थया आलीढाः = चुम्बिताः व्याप्ता अवयवाः अङ्गानि यस्याः सा ताम् तथोक्ताम्, नयनयोः = नेत्रयोः चन्द्रिका = कौमुदी नयनरूपिणी ताम् बालचन्द्रिकाम् = बालचन्द्रिकानाम्नीम्, तरुणीरत्नम् = युवतीश्रेष्ठम्, मूर्तिमतीम् वणिङ्मन्दिरलक्ष्मीम्—वाणिजां = वैश्यानां मन्दिरं = भवनं तस्य लक्ष्मीः शोभा तां तथोक्ताम्, इव अवलोक्य = दृष्ट्वा, तदीयलावण्यावधूतधीरभावः—तदीयेन = बालचन्द्रिकासम्बन्धिना = सौन्दर्येण, अवधूतः = तिरस्कृतः धीरभावः = धैर्यं यस्य सः तथोक्तः, लतान्ताः = कुसुमानि बाणाः = शराः यस्यः सः लतान्तबाणः = कामः, तस्य बाणलक्ष्यताम् = शरव्यत्वम्, अयासिषम् = अगमम् ।

(१२) चकितबालकुरङ्गलोचना—चकितस्य = भीतस्य बालकुरङ्गस्य = शिशुमृगस्य लोचने = नयने इव लोचने यस्याः सा चञ्चलनयना सापि = बालचन्द्रिकापि, कुसुमसायकसायकायमानेन—कुसुमसायकस्य = कामस्य, सायकः = शर इवाचरतीति तेन तथोक्तेन कामबाणसदृशेन कटाक्षवीक्षणेन—कटाक्षेण = अपाङ्गदर्शनेन यद् वीक्षणं = अवलोकनम् तेन मां = पुष्पोद्भवम्, असकृत्=अनेकवारम् निरीक्ष्य = दृष्ट्वा मन्दमारुतान्दोलिता—मन्देन = धीरेण मारुतेन = पवनेन आन्दोलिता = कम्पिता लता इव अकम्पत = कम्पितवती । मनसा = स्वान्तेन अभिमुखैः = मय्यर्पितैः समाकुञ्चितैः = सम्यक् संकोचितैः लज्जया सर्वोकृतैः,

---

मैं उसी के पास रहने लगा । एक दिन मैंने एक सुन्दरी को देखा, जो वैश्यों के घर की साक्षात् मूर्तिमती लक्ष्मी सी थी, उसके मुख की शोभा चन्द्रमा के समान थी, उसका सारा अङ्ग नवयौवन से भरा था, उसकी आँखों में तेज था, उसकी सुन्दरता देखकर मेरा मन लुभ गया, धैर्य छूट गया और मैं कामदेव के बाणों का लक्ष्य हो गया, उसका नाम बालचन्द्रिका था ।'

(१२) वह चञ्चल बालकुरङ्गलोचना बालचन्द्रिका भी काम के पुष्पबाणों के समान अपने अपांग=कटाक्षों से मुझे बार-बार देखती हुई मन्द-मन्द पवन से कम्पित लता के समान

(१३) चतुरगूढचेष्टाभिरस्या मनोऽनुरागं सम्यग्ज्ञात्वा सुखसंगमोपायमचिन्तयम्। अन्यदा बन्धुपालः शकुनैर्भवद्गतिं प्रेक्षिष्यमाणः पुरोपान्तविहारवनं मया सहोपेत्य कस्मिंश्चिन्महीरुहे शकुन्तवचनानि शृण्वन्नतिष्ठत्।

(१४) अहमुत्कलिकाविनोदपरायणो वनान्तरे परिभ्रमन्सरोवरतीरे चिन्ताक्रान्तचित्तां दीनवदनां मन्मनोरथैकभूमिं बालचन्द्रिकामवलोकयम्।

रागलज्जान्तरालवर्तिभिः—रागः = अनुरागः लज्जा = त्रपा तयोरन्तराले = मध्ये वर्तितुं = स्थातुं शीलं येषां ते तैः तथोक्तैः, साङ्गवर्तिभिः = अङ्गभङ्ग्या सह वर्तमानैः = साङ्गमङ्गिभिः ईक्षणविशेषैः = कटाक्षैः, निजमनोवृत्तिं = स्वमनोरथव्यापारम्, अभिलाषम्, अकथयत् = प्रकाशयत्।

(१३) चतुरगूढचेष्टाभिः—चतुराः = पेशलाः गूढाः गुप्ताश्च याः चेष्टाः हावभावकटाक्षविक्षेपादयः ताभिः, अस्या बालचन्द्रिकायाः मनोऽनुरागम्—मनसः = हृदयस्य अनुरागं = प्रेमाणम् सम्यक् ज्ञात्वा, सुखसङ्गमोपायं—सुखेन = अनायासेन यः सङ्गमः = मिलनं तस्योपायं = साधनम् सुखसङ्गमोपायम्, अचिन्तयम् = अहं चिन्तितवान्। अन्यदा = अन्यस्मिन् दिने बन्धुपालः, शकुनैः = शुभशकुनैः भवद्गतिं—भवतः = तव गतिं = व्यापारम् प्रेक्षिष्यमाणः = अवलोकयिष्यन् पुरोपान्तविहारवनम्—पुरस्य = नगरस्य उपान्ते = समीपे यद् विहारवनम् = क्रीडोद्यानम् तत् मया = पुष्पोद्भवेन सह उपेत्य = गत्वा, कस्मिंश्चित् = एकस्मिन् महीरुहे = वृक्षे शकुन्तवचनानि—शकुन्तस्य = पक्षिणः वचनानि = भाषितानि, शृण्वन् = आकर्णयन् अतिष्ठत् = स्थितः।

(१४) अहं = पुष्पोद्भवः उत्कलिकाविनोदपरायणः उत्कलिका = उत्कण्ठा, तस्या विनोदः-अपनयनं दूरीकरणं तस्मिन् परायणः-तत्परः, आसक्तः, वनान्तरे = अन्यवने परिभ्रमन् = पर्यटन् सरोवरतीरे = सरस्तटे चिन्ताक्रान्तचित्ताम्—चिन्तया

काँपने लगी। प्रेम एवं लज्जा के मध्य में वर्तमान हावभावों को दिखा-दिखाकर उसने अपने मनोभावों को व्यक्त कर दिया।

(१३) मैं उसकी चतुरता तथा गुप्त चेष्टाओं द्वारा उस तरुणी के हार्दिक अनुराग को भली-भाँति जानकर उसके साथ समागम का उपाय सोचने लगा। एक दिन मेरा मित्र बन्धुपाल आपके अन्वेषण के निमित्त शुभशकुन बताने के लिए गाँव के बाहर एक विहार वन में मेरे साथ आया। वहाँ किसी वृक्ष पर बोलते हुए पक्षियों की बोली सुनने के लिए खड़ा हो गया।

(१४) मैं अपनी बालचन्द्रिका विषयक उत्कण्ठा-शान्ति के निमित्त दूसरे उपवन के सन्निकट एक तालाब के किनारे आ पहुँचा। वहाँ चिन्ता से व्याप्त चित्त म्लानमुख तथा

(१४) तस्याः ससंभ्रमप्रेमलज्जाकौतुकमनोरमं लीलाविलोकनसुखमनुभवन् सुदत्या वदनारविन्दे विषण्णभावं मदनकदनखेदानुभूतं तन्निमित्तं ज्ञास्यंल्लीलया तदुपकण्ठमुपेत्यावोचम्-'सुमुखि, तव मुखारविन्दस्य दैन्यकारणं कथय' इति।

(१६) सा रहस्यसंजातविश्रम्भतया विहाय लज्जाभये शनैरभाषत-'सौम्य,

---

= स्मृत्या ध्यानेन आक्रान्तं = पर्याकुलं चित्तम् = मनो यस्याः सा ताम् पूर्वोक्ताम्। दीनवदनाम् = विषण्णवदनाम्, मन्मनोरथैकभूमिम्—मम = पुरोद्भवस्य मनोरथस्य = अभिलाषस्य एका भूमिः = प्रधानाश्रयीभूता ताँ तथोक्ताम् बालचन्द्रिकां व्यलोकयम् = अपश्यम्।

(१५) तस्या = बालचन्द्रिकायाः ससंभ्रमप्रेमलज्जाकौतुकमनोरमम् = ससंभ्रमेण = त्वरया सह वर्तमानानि ससंभ्रमाणि प्रेमा = अनुरागश्च लज्जा = त्रपा च कौतुकम् = औत्सुक्यं च प्रेम-लज्जा-कौतुकानि ससंभ्रमाणि च तानि प्रेमलज्जाकौतुकानि तानि ससंभ्रमप्रेमलज्जाकौतुकानि तैः मनोरमं = मनोहरम् तथोक्तम् लीलया = विलासेन यद् विलोकनम् = अवलोकनं तेन यत् सुखम् = आनन्दः तत् तथोक्तम्, अनुभवन् = अनुभवविषयं गमयन् सुदत्या = शोभना दन्ता यस्याः सा सुदती तस्याः सुदत्यासुदर्शनायाः, बालचन्द्रिकायाः वदनारविन्दे: = मुखकमले मदनकदनखेदानुभूतम्—मदनस्य = कामस्य यत् कदनं = पीडनं तस्य खेदेन = आयासेन अनुभूतं, विषण्णभावं = क्लान्तत्वम् ज्ञात्वा तन्निमित्तं = क्लान्तत्वकारणं ज्ञास्यन् = अवगमिष्यन् लीलया = विलासेन तदुपकण्ठम् = बालचन्द्रिकासमीपम् उपेत्य = गत्वा, अवोचम् = अवादिषम्। सुमुखि! = भद्रे! तव = भवत्याः, मुखारविन्दस्य = आननकमलस्य दैन्यकारणम् = दीनतानिमित्तम् कथय = भण।

(१६) सा = बालचन्द्रिका रहस्यसंजातविश्रम्भतया—रहस्ये = गोपनीयविषये संजातः = उत्पन्नः, विश्रम्भः यस्याः सा तस्या भावः तत्ता तया पूर्वोक्तया लज्जाभये = त्रपाभये विहाय = त्यक्त्वा शनैः = मन्दम् यथा स्यात्तथा अवादीत् =

एकमात्र मेरी प्राप्ति की इच्छा से बैठी हुई बालचन्द्रिका को देखा।

(१५) उस मनोहर दाँतोंवाली बालचन्द्रिका का शीघ्रतावश प्रेम, लज्जा और उत्सुकता आदि भावों से सुन्दर मुख के अवलोकनजन्य आनन्द का अनुभव करता हुआ उसके मुखकमल में कामजन्य खेद से व्यथा को प्राप्त कर उसकी उद्विग्नता का कारण जानने के विचार से उसके पास जाकर मैंने पूछा—हे सुमुखि! तुम्हारे मुखकमल के म्लान होने का क्या कारण है? मुझसे बताओ।

(१६) निर्जन प्रदेश होने से उसे अवसर प्राप्त हो गया और उसने लज्जा एवं

मानसारो मालवाधीश्वरो वार्धकस्य प्रबलतया निजनन्दनं दर्पसारमुज्जयिन्यामभ्यषिञ्चत्। स कुमारः सप्तसागरपर्यन्तं महीमण्डलं पालयिष्यन्निजपैतृष्वस्रेयौ चुद्दण्डकर्माणौ चण्डवर्मदारुवर्माणौ धरणीभरणे नियुज्य तपश्चरणाय राजराजगिरिमभ्यगात्।

(१७) राज्यं सर्वमसपत्नं शासति चण्डवर्मणि दारुवर्मा मातुलाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य पारदार्यपरद्रव्यापहरणादिदुष्कर्म कुर्वाणो मन्मथसमानस्य भवतो लावण्यात्तचित्तां मामेकदा विलोक्य कन्यादूषणदोषं दूरीकृत्य बलात्कारेण रन्तुमुद्युङ्क्ते। तच्चिन्तया दैन्यमगच्छम्' इति।

अभाषत, सौम्य ! = सुभग ! मालवाधीश्वरः-मालवाधिपतिः, मानसारः वार्धकस्य = वृद्धावस्थायाः प्रबलतया = अधिकतया निजनन्दनम् = स्वपुत्रम् दर्पसारम् उज्जयिन्यां = राजधान्याम् अभ्यषिञ्चत् = यौवराज्ये अस्थापयत्। स कुमारः = दर्पसारः सप्तसागरपर्यन्तम् = सप्तसमुद्रसीमान्तम् सप्त सागराः = समुद्राः पर्यन्तः = सीमान्तः यस्य तत्, महीमण्डलम् = भूमण्डलम्, पालयिष्यन्-रक्षिष्यन् निजपैतृष्वस्रीयौ=स्वपितुः भगिन्याःपुत्रौ उदण्डकर्माणौ, निन्दितकर्मरतौ चण्डवर्म-दारुवर्माणौ धरणीभरणे = राज्यपालने नियुज्य तपश्चरणाय = तपस्यां कर्तुम्, राजराजगिरिम् = राजराजस्य धनाधिपस्य कुबेरस्य गिरिं=पर्वतं कैलासम्, अभ्यगात्=अगच्छत्।

(१७) असपत्नं = शत्रुरहितं, अकण्टकम्, सर्वं = सम्पूर्णम्, राज्यम् = देशम् शासति = पालयति चण्डवर्मणि, दारुवर्मा = चण्डवर्मणः कनिष्ठभ्राता, मातुलाग्रजन्मनोः = दर्पसारचण्डवर्मणोः शासनम्, आज्ञाम्, उल्लङ्घ्य = अतिक्रम्य पारदार्यपरद्रव्यापहरणादि-पारदार्यं-परदाराभिमर्शः, परद्रव्यापहरणम् = चौर्यम् पारदार्यं च परद्रव्यापहरणं च पारदार्यपरद्रव्यापहरणे ते आदिनी यस्य तत्तथोक्तं = परस्त्रीगमनचौर्यादिकर्म दुष्कर्म = कुकृत्यम् कुर्वाणः = विदधानः, मन्मथसमानस्य = कामदेवतुल्यस्य भवतः = पुण्योद्भवस्य लावण्यात्तचित्ताम्—लावण्येन = सौन्दर्येण

भय छोड़कर धीरे-धीरे कहा—सौम्य ! मालवेश्वर मानसार ने वृद्ध होने के कारण राज्य कार्य में असमर्थ होकर अपने पुत्र दर्पसार का उज्जयिनी में अभिषेक कर दिया। वह कुमार सप्तसागर पृथ्वीमण्डल को पालन करने का भार अपने बुआ के धृष्ट दो पुत्रों (चण्डवर्मा और दारुवर्मा) को सौंपकर कैलास पर्वत पर तप करने के लिए चला गया।

(१७) चण्डवर्मा शत्रुहीन समस्त राज्य का शासन करने लगा और दारुवर्मा अपने मामा दर्पसार तथा बड़े भाई चण्डवर्मा की आज्ञा न मानकर परस्त्री गमन तथा परद्रव्यापहरण आदि दुष्कर्म किया करता है। कामदेव के समान सुन्दर आपके रूप पर मुग्ध मुझे दारुवर्मा ने एक दिन देख लिया तथा कन्यागमन दोष का विचार किये बिना

(१८) तस्या मनोगतम्, रागोद्रेकं मन्मनोरथसिद्ध्यन्तरायं च निशम्य बाष्पपूर्णलोचनां तामाश्वास्य दारुवर्मणो मरणोपायं च विचार्य वल्लभामवोचम् 'तरुणि, भवदभिलाषिणं दुष्टहृदयमेनं निहन्तुं सुदुरुपायः कश्चिन् मया चिन्त्यते। यक्षः कश्चिदधिष्ठाय बालचन्द्रिकां निवसति। तदाकारसंपदाशाशृङ्खलितहृदयो यः

आत्तं = गृहीतं चित्तं = हृदयम् यस्याः सा ताम्, मां = बालचन्द्रिकाम्, एकदा = एकस्मिन्नहनि, विलोक्य = दृष्ट्वा, कन्यादूषणदोषम्—कन्यायाः = अविवाहितायाः दूषणं = घर्षणमेव दोषः तम्, दूरीकृत्य = निराकृत्य, बलात्कारेण = बलप्रयोगेण, रन्तुम् = उपभोक्तुम्, उद्युङ्क्ते = चेष्टते। तिच्चन्तया = तन्निर्वेदेन, दैन्यं = दीनताम् विषण्णताम्, अगच्छम् = अहं गतवती अस्मि।

(१८) तस्याः—बालचन्द्रिकाया, मनोगतं=चेतोगतम् अभिलापम्, रोगोद्रेकं= अनुरागाधिक्यम् मन्मनोरसिद्धयन्तरायम्—मम = पुष्पोद्भवस्य, मनोरथस्य = अभिलापस्य, सिद्धे = निष्पत्तेः अन्तरायं = विघ्नम् च, निशम्य = श्रुत्वा, बाष्पपूर्ण-लोचनाम्—बाष्पेण = अश्रुणा, पूर्णे=व्याप्ते लोचने = नयने यस्याः सा तां तथोक्ताम् = साश्रुनयनाम्, आश्वास्य = सान्त्वयित्वा, दारुवर्मणः = दर्पसारपितृस्वसृपुत्रस्य मारणोपायं = हन्तुमुपायम् च विचार्य = चिन्तयित्वा, वल्लभाम् = प्रेयसीम् प्रियां बालचन्द्रिकाम्, अवोचम्=अहमुक्तवान्, तरुणि !=देवि !, भवदभिलापिणं = त्वदा-कांक्षिणम्, दुष्टहृदयमेनं=दुर्हृदयमेनं दुर्जनमेनं दारुवर्माणम्, निहन्तुं=नाशितुम्, मृदुः = लघुः उपायः = साधनम्, कश्चित्=एकः, मया=पुष्पोद्भवेन, चिन्त्यते=विचार्यते। बालचन्द्रिकाम् अधिष्ठाय = आक्रम्य, संसेव्य, कश्चित् = एकः, यक्षः = पिशाच-विशेषः, निवसति = वासं करोति, तदाकारसम्पदाशाशृङ्खलितहृदयः-तस्याः-बाल-चन्द्रिकायाः आकारसम्पदः = सुन्दराकृतेः आशया = अभिलाषया संभोगेच्छया

वह मेरे साथ बलपूर्वक रमण करने को उद्यत हो गया है। इसी चिन्ता से मैं व्याकुल हो रही हूँ।

(१८) उस बालचन्द्रिका के मनोगत भाव को जानकर तथा अपने ऊपर उसका प्रगाढ़ अनुराग को ज्ञात कर अपनी मनोरथसिद्धि में दारुवर्मा को विघ्नरूप सुनकर मैंने उस दारुवर्मा को मार डालने की युक्ति सोची तथा अपनी वल्लभा बालचन्द्रिका को आश्वासन देते हुए कहा—'हे देवि ! तुम्हें बलात् चाहनेवाले इस दुरात्मा दारुवर्मा को मार डालने के लिए मैं एक सरल उपाय सोच रहा हूँ। तुम अपने ग्रामीणिक लोगों में गाँव में यह अफवाह फैला दो कि एक सिद्ध तपस्वीने बताया है कि बालचन्द्रिका के ऊपर एक यक्ष रहता है, उसके सौन्दर्य से मुग्ध होकर जो कोई साहसी पुरुष उसके साथ रमण की इच्छा रखता हो,

संबन्धयोग्यः साहसिको रतिमन्दिरे तं यक्षं निर्जित्य तया एकसखीसमेतया मृगाक्ष्या संलापामृतसुखमनुभूय कुशली निर्गमिष्यति, तेन चक्रवाकसंशयाकारपयोधरा विवाहनीयेति सिद्धेनैकेनावादीति पुरजनस्य पुरतो भवदीयैः सत्यवाक्यैर्जनैरसकृत् कथनीयम्। तदनु दारुवर्मा वाक्यानीत्थंविधानि श्रावंश्रावं तूर्णीं यदि भिया स्थास्यति तर्हि वरम्, यदि वा दौर्जन्येन त्वया सङ्गमङ्गीकरिष्यति, तदा स भवदीयैरित्थं वाच्यः—

शृङ्खलितं = बद्धं हृदयं = मनो यस्य स तथोक्तः, यः = कश्चित्, सम्बन्धयोग्यः = अनुरूपः साहसिकः, साहसं कर्तुं समर्थः, रतिगृहे = सुरतमन्दिरे, तं यक्षं = बालचन्द्रिकाधिष्ठितं पिशाचविशेषं, निर्जित्य = पराजित्य, एकसखीसमेतया—एकया = एकमात्रया सख्या = सहचर्या समेतया = युक्तया, मृगाक्ष्या = बालकुरङ्गनयनया, संलापामृतसुखं = आलापजनितानन्दम् अनुभूय, कुशली = अक्षतविग्रहः, निर्गमिष्यति = निःसरिष्यति, तेन = पुरुषविशेषेण चक्रवाकसंशयाकारपयोधरा—चक्रवाकस्य = पक्षिविशेषस्य संशयः = सन्देहः यस्मिन् तादृशः आकारः = स्वरूपं ययो तादृशो पयोधरौ = कुचौ यस्याः सा तथोक्ता बालचन्द्रिका, विवाहनीया = परिणेया, इति सिद्धेन = तापसेन, एकेन = केनचित्, अवादि = अवोचि इति, पुरजनस्य = ग्रामवासिनः, पुरतः = अग्रे नागरान् प्रति, भवदीयैः = भवत्पक्षावलम्बिभिः, सत्यवाक्यैः = आप्तववतृभिः, प्रामाणिकैः जनैः = मनुष्यैः असकृत् = वारम्वारम्, कथनीयम् = प्रचारणीयम्। तदनु = तत्पश्चात्, दारुवर्मा, दर्पसारभागिनेयः इत्थं विधानि = ईदृक्प्रकाराणि, वाक्यानि = वचनानि, श्रावं-श्रावम् = श्रुत्वा श्रुत्वा यदि भिया = भयेन, तूर्णीं = मौनं, स्थास्यति = स्थिरो भविष्यति, तर्हि = तदा, वरं = श्रेष्ठम्, यदि वा = अथवा, दौर्जन्येन = दुर्जनतया, त्वया = भवत्या, सह संगमं = प्रीतिम् अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, तदा सः = दारुवर्मा, भवदीयैः = त्वदीयैः जनैः, इत्थ = वक्ष्यमाणप्रकारेण, वाच्यः = कथनीयः।

उसे चाहिए कि वह अपनी योग्यता का परिचय उसके रतिमन्दिर में जाकर दे। उस यक्ष को परास्त कर रतिमन्दिर में एक सहेली के साथ बैठी हुई उस मृगाक्षी से वार्तालाप का सुख प्राप्त करके सुखपूर्वक सकुशल निकल आयेगा उसी पुरुष के साथ चक्रवाकों के सन्देह को उत्पन्न करनेवाले स्तनोंवाली बालचन्द्रिका का विवाह होगा। यदि इस प्रकार की बातें सुनकर दारुवर्मा डरकर चुप हो गया तो फिर क्या कहना है। यदि इसपर भी दुर्जनतावश न मानकर उत्पात मचाये, तो तुम्हारे आत्मीय जन उससे पुनः इस प्रकार कह दें—

(१९) 'सौम्य, दर्पसारवसुधाधिपामात्यस्य भवतोऽस्मन्निवासे साहसकरणमनुचितम्। पौरजनसाक्षिकं भवन्मन्दिरमानीतया अनया तोयजाक्ष्या सह क्रीडन्नायुष्मान् यदि भविष्यति तदा परिणीय तरुणीं मनोरथान् निर्विश' इति। सोऽप्येतदङ्गीकरिष्यति। त्वं सखीवेषधारिणा मया सह तस्या मन्दिरं गच्छ। अहमेकान्तनिकेतने मुष्टिजानुपादाघातैस्तं रभसान्निहत्य पुनरपि वयस्यामिषेण भवतीमनु निःशङ्कं निर्गमिष्यामि। तदेनमुपायमङ्गीकृत्य विगतसाध्वसलज्जा भवज्जनकजननीमहो-

(१९) सौम्य !-सुभग ! दर्पसारवसुधाधिपामात्यस्य-दर्पसारश्चासौ वसुधाधिपश्चेति दर्पसारवसुधाधिपः तस्य दर्पसारनृपतेः आमात्यस्य = मन्त्रिणः भवतः तव दारुवर्मणः, अस्मन्निवासे=अस्मद् गृहे, साहसकरणं = साहसकार्यानुष्ठानम्, अयोग्यम् =अनुचितम्। पौरजनसाक्षिकम्=पौरजना नगरनिवासिनः, साक्षिणः=प्रत्यक्षद्रष्टारः यस्मिन् तत् तथोक्तं-नागरिकाणां समक्षम्, भवन्मन्दिरं = त्वद्भवनम् आनीतया = प्रापया, तोयजाक्ष्या-तोयजे = पुण्डरीके इव अक्षिणी = नयने यस्या सा: तोयजाक्षी तया तोयजाक्ष्या = पद्मनेत्रया, सह = साकम्, क्रीडन् = विरहन्, यदि आयुष्मान् = चिरञ्जीवी भवान्, कुशली = सकुशलः, भविष्यति = निर्गमिष्यति, तदा तरुणीं = युवतीम् परिणीय = विवाह्य, मनोरथान् = अभिलाषान्, निर्विश = उपभोगं कुरु, उपभुङ्क्ष्व, सः = दारुवर्मा अपि, एतत् = नागरोक्तम् यदि अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, तदा त्वम् = भवती बालचन्द्रिका, सखीवेषधारिणा = सहचरीरूपिणा मया = पुष्पोद्भवेन सह तस्य = दारुवर्मणः मन्दिरं = भवनं गच्छ = व्रज अहं = पुष्पोद्भवः, एकान्तनिकेतने = निर्जने भवने, मुष्टि-जानु-पादाघातैः—मुष्ट्या, जानुना उरुपर्वणा पादेन चरणेन ये आघाताः = प्रहाराः तैः रभसात् = वेगात्, निहत्य = मारयित्वा, पुनरपि = भूयोऽपि, वयस्यामिषेण = सखीव्याजेन, सहचरीछद्मेन भवतीं = त्वाम् बालचन्द्रिकाम् अनु = पश्चात्, निःशङ्कं-शङ्काया निर्गतं निःशङ्कम्

(१९) हे सौम्य ! पृथ्वीपति दर्पसार के आप मन्त्री हैं। हमारे घर में आपका इस प्रकार साहस करना अनुचित है। नागरिकों के समक्ष इस पद्मलोचना को आप अपने घर लिवा ले जायँ और अपने यहाँ ही इस कमलाक्षी के साथ विहार करते हुए यदि आप सुख से रह सकें तो, रहें और इसके साथ विवाह करके अपने मनोभिलाष को पूर्ण करें।' वह इस बात को अवश्य स्वीकार कर लेगा।

'तब उस समय मैं सखी के वेश में तुम्हारे साथ चलूँगा, तुम मेरे साथ उसके यहाँ चलने को राजी हो जाना। समय पाकर मैं एकान्त में मुक्कों, लातों तथा घुटनों के प्रहार से उसे मार डालूँगा, पुनः उसी वेश में तुम्हारी सखी के रूप में मैं निःशङ्क तुम्हारे साथ बाहर चला आऊँगा। मेरी इस युक्ति को तुम स्वीकार कर भय एवं लज्जा का त्याग कर अपने माता,

दराणां पुरत आवयोः प्रेमातिशयमाख्याय सर्वथाऽस्मत्परिणयकरणे ताननुनयेः। तेऽपि वंशसंपल्लावण्याढ्याय यूने मह्यं त्वां दास्यन्त्येव। दारुवर्मणो मारणोपायं तेभ्यः कथयित्वा तेषामुत्तरमाख्येयं मह्यम्' इति।

(२०) सापि किञ्चिदुत्फुल्लसरसिजानना मामब्रवीत्—'सुभग, क्रूरकर्माणं दारुवर्माणं भवानेव हन्तुमर्हति। तस्मिन् हते सर्वथा युष्मन्मनोरथः फलिष्यति।

= निर्भयम् निर्गमिष्यामि = निष्क्रमिष्यामि। तदेनम् = तदमुम्, उपायं = साधनम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, विगतसाध्वसलज्जा—विगते = अपगते साध्वसलज्जे = भयत्रपे यस्याः सा' विगतसाध्वसलज्जा, त्वम्, भवज्जनकजननीसहोदराणाम्—भवत्या = तव जनकः = पिता जननी = माता सहोदरः = भ्राता एषां द्वन्द्वे कृते भवत्या जनकः जननीसहोदराः तेषां भवज्जनकजननीसहोदराणाम् पुरतः = समक्षे, आवयोः=मम तव च, प्रेमातिशयम्–प्रेम्णः = अनुरागस्य अतिशयम् = आधिक्यम्, आख्याय = उक्त्वा, सर्वथा = सर्वप्रकारेण अस्मत्परिणयकरणे = आवयोर्विवाहकरणे तान् = पित्रादीन्, अनुनयेः = अनुसाधयेः।

तेऽपि = पित्रादयोऽपि, वंशसम्पल्लावण्याढ्याय—वंशसम्पदा = कुलगौरवेण लावण्येन = सौन्दर्येण, अढ्याय = सम्पन्नाय, यूने = तरुणाय, मह्यं = पुष्पोद्भवाय त्वां–भवतीम् बालचन्द्रिकाम्, दास्यन्ति=वितरिष्यति, एवं दारुवर्मणः=दर्पसारभागिनेयस्य, मारणोपायं = संहननसाधनम्, पौरेभ्यः पित्रादिभ्यो वा कथयित्वा = आख्याय तेषां = नागराणां पित्रादीनां च, उत्तरं = प्रतिवाक्यम्, मह्यं = पुष्पोद्भवाय, आख्येयं = कथनीयम्।

(२०) साऽपि=बालचन्द्रिकाऽपि, किञ्चित्=ईषत्, उत्फुल्लसरसिजानना—उत्फुल्लं = विकसितं सरसिजं = कमलम् इव आननं = मुखं यस्याः सा, मां = पुष्पोद्भवम्, अब्रवीत् = उक्तवती, सौम्य ! = सुभग !, क्रूरकर्माणं = घातुकम्, दारुवर्माणम्, भवान् = त्वमेव, हन्तुं = पातितुम्, अर्हति = समर्थोऽसि। तस्मिन् = दारुवर्मणि, हते = मृते, सर्वथा = सर्वप्रकारेण, युष्मन्मनोरथः युष्माकमभिलाषा

पिता और सोदरों से हम दोनों के प्रगाढ प्रेम की बात बताकर उन्हें राजी कर दो कि वे हम लोगों का विवाह कर दें। वे लोग तुम्हारी विनती पर मेरी कुलीनता और सौन्दर्य से प्रसन्न होकर तुम्हारा विवाह मेरे साथ अवश्य कर देंगे। दारुवर्मा के मारने की युक्ति भी अपने आत्मीयों से बताकर उनका उत्तर 'मुझे बता दो।'

(२०) मेरी बातें सुनकर उस बालचन्द्रिका का मुखकमल खिल उठा और उसने मुझसे कहा—हे सुभग ! दुष्ट दारुवर्मा को मारने में आप ही समर्थ हो सकते हैं। यदि आप उस दुराचारी को मार डालेंगे तो आपकी सभी मनोकामनायें पूर्ण हो जायेंगी; आप

एवं क्रियताम्। भवदुक्तं सर्वमहमपि तथा करिष्ये' इति मामसकृद्विवृत्तवदना-विलोकयन्ती मन्दं मन्दमगारमगात्। अहमपि बन्धुपालमुपेत्य शकुनज्ञात्तस्मात् 'त्रिंशद्दिवसानन्तरमेव भवत्सङ्गः संभविष्यति' इत्यश्रृणवम्। तदनु मदनुगम्यमानो बन्धुपालो निजावासं प्रविश्य मामपि निलयाय विससर्ज।

(२१) मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन दारुवर्मणा रतिमन्दिरे रन्तुं समाहूता

फलिष्यति = सिद्धिं यास्यति। एवं = यथोक्तम्, क्रियताम् = विधीयताम्, भवदुक्तं = तव कथितम्, सर्वं = साकल्येन, अहमपि=बालचन्द्रिकापि, तथा = तेन प्रकारेण यथोपदिष्टम्, करिष्ये = विधास्यामि, इति अभिधाय विवृत्तवदना-विवृत्तं = परावृत्तं वदनं=मुखं यस्याः सा विवृत्तवदना, पश्चात् स्थितं मामवलोकयितुं प्रवृत्ता सती असकृत् = पुनः पुनरपि, मां = पुष्पोद्भवं, विलोकयन्ती = पश्यन्ती, मन्दं मन्दं = शनैः शनैः, अगारम् = स्वभवनम्, अगात् = गतवती। अहमपि = पुष्पोद्भवोऽपि, बन्धुपालं = चन्द्रपालजनकम्, उपेत्य-प्राप्य, शकुनज्ञात्-शकुनं जानातीति शकुनज्ञस्तस्मात्=निमित्तज्ञानकुशलात्, तस्मात् = बन्धुपालात्, त्रिंशद्दिवसानन्तरमेव त्रिंशच्च ते दिवसाः त्रिंशद्दिवसाः तेषामनन्तरं, पश्चात् = मासादूर्ध्वमेव, भवत्सङ्गः= भवता राजवाहनेन सह, मिलनं = समागमः, संभविष्यति = सम्यक् भविष्यति। इति अश्रृणवम् = अश्रौषम्। तदनु = तत्पश्चात्, मदनुगम्यमानः-मया = पुष्पोद्भवेन अनुगम्यमानः = अनुष्ठीयमाणः, बन्धुपालः - शकुनज्ञः चन्द्रपालपिता निजावासं = स्वगृहम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, मामपि = पुष्पोद्भवमपि, निलयाय = आवासाय गन्तुम्, विससर्ज = विसृष्टवान्, प्रेषयामास।

(२१) मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन-मम = पुष्पोद्भवस्य मायया = छलेन य उपायः = साधनम्, स एव वागुरा = मृगबन्धिनी ('वागुरा मृगबन्धिनी' इत्यमरः) तद्रूपः यः पाशः, रज्जुः तस्मिन् लग्नः = संसक्तः तेन तथोक्तेन = मया दारुवर्माणं हन्तुं यत् छलं प्रचारितं तल्लङ्घितुमशक्तेन दारुवर्मणा = दर्पसार-भागिनेयेन, रतिमन्दिरे-सुरतभवने, रन्तुं-क्रीडितुम्, समाहूता = आकारिता बाल-

---

ऐसा ही करें। मैं भी आपके आदेशानुसार सब कार्य कर दूँगी। ऐसा कहकर वह विकसित नेत्रों से घूमकर मुझे बार-बार देखती हुई धीरे-धीरे अपने घर चली गयी। मैं भी वहाँ से लौटकर शकुनज्ञ बन्धुपाल के पास आ गया, उसने शुभ शकुन देखकर मुझसे कहा—तीस दिनों के पश्चात् आपका सङ्ग होगा। बाद बन्धुपालने वहाँ से मेरे पीछे-पीछे अपने घर पहुँच कर मुझे भी अपने घर जाने की अनुमति दे दी।

(२१) मेरे युक्तिरूप मायाजाल में फँसकर वह दारुवर्मा बालचन्द्रिका के साथ

बालचन्द्रिका तं गमिष्यन्ती दूतिकां मत्सविकटमभिप्रेषितवती। अहमपि मणिनूपुरमेखलाकङ्कणकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं वनितायोग्यं मण्डनजातं निपुणतया तत्तत्स्थानेषु निक्षिप्य सम्यगङ्गीकृतमनोज्ञवेशो वल्लभया तया सह तदागारद्वारोपान्तमगच्छम्।

(२२) द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन सादरं विहितभ्युद्गतिना तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण मदन्विता बालचन्द्रिका संकेतागारमनीयत। नगरव्याकुलं

चन्द्रिका, तं = दारुवर्माणं, गमिष्यन्ती = प्रस्थास्यमाना, मत्सविकटम् = मम समीपम् दूतिकाम् = चेटीम् अभिप्रेषितवती = प्राहिणोत्। अहमपि = पुष्पोद्भवोऽपि, मणिनूपुरमेखलाकङ्कणकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं—मणिनूपुरः = मञ्जीरः, मेखला = रशनाः, कङ्कणकटके: = वलयभेदौ, ताटङ्कं = कर्णभूषणं, हारः = मुक्ताहारः क्षौमं = दुकूलम्, कज्जलम् = अञ्जनम् चेति सर्वं पदादिभूषणम्, वनितायोग्यं = स्त्रीजनोचितं निपुणतया = कौशलेन, तत्तत्स्थानेषु = तत्तदङ्गेषु, निक्षिप्य = परिधाय, सम्यक् निपुणं यथा स्यात्तथा, अङ्गीकृतः = स्वीकृतः धृतः, मनोज्ञः—मञ्जुलः वेषः = प्रसाधनम् येन सः तथोक्तः अहम्, वल्लभया = प्रेयस्या, तया = बालचन्द्रिकया, तदागारद्वारोपान्तम्—तस्य = दारुवर्मणः आगारद्वारस्य = गृहद्वारस्य उपान्तं = समीपम्, अगच्छम् = प्राप्नुवम्।

(२२) द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन—द्वाःस्थैः = दौवारिकैः कथितं = निवेदितम् अस्मदागमनं = उपस्थितिः यस्मै स तेन तथोक्तेन, सादरं = सत्कारम् विहिता = कृता अभ्युद्गतिः = अभ्युत्थानं येन स तेन तथोक्तेन, तेन = दारुवर्मणा, द्वारोपान्ते = द्वारसमीपे निवारिताः = अवरुद्धाः अशेषाः = अखिलाः परिवाराः = परिजना येन स तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण, मदन्विता—मया = पुष्पोद्भवेन अन्विता = युक्ता, मदन्विता = मया सहिता, बालचन्द्रिका, सङ्केतागारं = पूर्व-

---

रतिमन्दिर में रमण के निमित्त उद्यत हो गया और उसने उसे वहाँ बुलाया। अब वह जाने को तैयार हो गयी तब अपनी एक दासी द्वारा मुझे बुलवाया। मैं भी स्त्रियों के अनुरूप आभूषणों से अलंकृत हो गया अर्थात् मणिजटित नूपुर, करधनी, कङ्कण, बिजायठ, कर्णफूल, हार, कण्ठा, रेशमी साड़ी, कज्जल आदि उन-उन अङ्गों में अच्छी तरह धारण कर और अपनी प्रियतमा बालचन्द्रिका के साथ सुन्दर वेश में दारुवर्मा के विहारमन्दिर के द्वार तक पहुँच गया।

(२२) दारुवर्मा को द्वारपालोंने हम लोगों के आने की खबर दे दी। द्वारपालों से खबर पाकर दारुवर्मा सादर अगवानी करने के निमित्त आगे आया तथा द्वार के आसपास उपस्थित पारिवारिक जनों को भीतर जाने से रोक दिया। बाद केवल मेरे आगे चलती हुई

यक्षकथां परीक्षमाणो नागरिकजनोऽपि कुतूहलेन दारुवर्मणः प्रतीहारभूमिमगमत् ।

(२३) विवेकशून्यमतिरसौ रागातिरेकेण रत्नखचितहेमपर्यङ्के हंसतूलगर्भं शयनमानीय तरुणीं तस्य मह्यं तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय मनोरमस्त्रीवेशाय च चामीकरमणिमयमण्डनानि सूक्ष्माणि चित्रवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं हरिचन्दनं कर्पूरसहितं ताम्बूलं सुरभीणि कुसुमानीत्यादिवस्तुजातं समर्प्य मुहूर्तद्वयमात्रं हासवचनैः संलपन्नतिष्ठत् ।

निर्दिष्टस्थानम् = रतिमन्दिरम्, अनीयत = नीता । नगरव्याकुलाम्—नगरे = पुरे व्याकुलाम् = व्याप्ताम् प्रचरिताम्, यक्षकथाम् = पिशाचवार्ताम् परीक्षमाणः = पश्यन्, नागरिकजनः, अपि कुतूहलेन = कौतुकेन, उत्कण्ठया दारुवर्मणः प्रतिहारभूमिम् = द्वारदेशम्, अगमत् = अगच्छत्, एकत्रीभूतः ।

(२३) विवेकेन = सदसद्विचारेण शून्या = रहिता मतिः = बुद्धिः यस्यासौ विवेकशून्यमतिः, असौ = दारुवर्मा, रागातिरेकेण = अनुरागातिशयेन, रत्नखचितहेमपर्यङ्के—रत्नैः = मणिभिः खचिते = स्यूते हेम्नः = सुवर्णस्य पर्यङ्के = खट्वायाम्, हंसतूलगर्भंशयनं = हंसेन तुल्यः धवलः हंसवत् स्वच्छः तूलः हंसतूलः स गर्भे = अभ्यन्तरे यस्य तादृशं शयनं = शय्याम्, तरुणीं = बालचन्द्रिकाम्, आनीय = आरोप्य तरुण्यै बालचन्द्रिकायै तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय—तमिस्रायां = तमस्याम् रात्रौ सम्यक् = स्पष्टम् अनवलोकितः = अदृष्टः पुम्भावः = पुरुषभावो यस्य स तस्मै तथोक्ताय, मनोरमस्त्रीवेषाय—मनोरमः = अतिसुन्दरः स्त्रीवेषः = स्त्रीगणोचितं प्रसाधनम् यस्य स तस्मै मह्यं = स्त्रीवेषधारिणे पुष्पोद्भवाय च चामीकरमणिमयानि—चामीकरं = सुवर्णं, मणिः = रत्नं च ताभ्यां प्रचुराणि मण्डनानि = सुवर्णरत्नविकाराणि मण्डनानि = भूषणानि, सूक्ष्माणि = श्लक्ष्णानि वस्त्राणि चित्रवस्त्राणि = मनोरमवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं = मृगमदवासितम् हरिचन्दनम् = सुगन्धिद्रव्यविशेषम्, कर्पूरसहितं = घनसारसमन्वितम्, ताम्बूलं, सुरभीणि = सुगन्धीनि, कुसुमानि = पुष्पाणि, इत्यादि = प्रभृति, वस्तुजातम् = द्रव्यसमूहम्,

---

बालचन्द्रिका को मेरे साथ पूर्वनिर्दिष्ट रतिमन्दिर के अन्दर ले गया। बालचन्द्रिका के ऊपर यक्ष का निवास है ऐसी कथा नगर में फैल चुकी थी। इसलिए उसकी प्रतीक्षा में नगरनिवासी कौतूहलवश दारुवर्मा के फाटक पर इकट्ठे हो गये थे।

(२३) अविवेकबुद्धि दारुवर्मा ने कामवासना की प्रबल इच्छा से उस बालचन्द्रिका को हंस के समान स्वच्छ रुई से भरे गद्दोंवाले रत्नजटित सुवर्ण के पलङ्ग पर बिठाकर उसको तथा मनोरम स्त्रीवेश धारण करनेवाले मुझको उसने सुवर्ण एवं मणियों से निर्मित आभूषण, सूक्ष्म चित्र-विचित्र छापे की साड़ी, कस्तूरी मिले चन्दन, कर्पूरयुक्त पान और

बालचन्द्रिका तं गमिष्यन्ती दूतिकां मन्निकटमभिप्रेषितवती। अहमपि मणिनूपुरमेखलाकङ्कणकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं वनितायोग्यं मण्डनजातं निपुणतया तत्तत्स्थानेषु निक्षिप्य सम्यगङ्गीकृतमनोज्ञवेशो वल्लभया तया सह तदागारद्वारोपान्तमगच्छम्।

(२२) द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन सादरं विहितभ्युद्गतिना तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण मदन्विता बालचन्द्रिका संकेतागारमनीयत। नगरव्याकुलां

चन्द्रिका, तं = दारुवर्माणं, गमिष्यन्ती = प्रस्थास्यमाना, मन्निकटम् = मम समीपम् दूतिकाम् = चेटीम् अभिप्रेषितवती = प्राहिणोत्। अहमपि = पुष्पोद्भवोऽपि, मणिनूपुरमेखलाकङ्कणकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं—मणिनूपुरा = मञ्जीरः, मेखला = रशनाः, कङ्कणकटके: = वलयभेदौ, ताटङ्कं = कर्णभूषणं, हारः = मुक्ताहारः क्षौमं = दुकूलम्, कज्जलम् = अञ्जनम् चेति सर्वं पदादिभूषणम्, वनितायोग्यं = स्त्रीजनोचितं निपुणतया = कौशलेन, तत्तत्स्थानेषु = तत्तदङ्गेषु, निक्षिप्य = परिधाय, सम्यक् निपुणं यथा स्यात्तथा, अङ्गीकृतः = स्वीकृतः धृतः, मनोज्ञः—मञ्जुलः वेषः = प्रसाधनम् येन सः तथोक्तः अहम्, वल्लभया = प्रेयस्या, तया = बालचन्द्रिकया, तदागारद्वारोपान्तम्—तस्य = दारुवर्मणः आगारद्वारस्य = गृहद्वारस्य उपान्तं = समीपम्, अगच्छम् = प्राप्नुवम्।

(२२) द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन—द्वाःस्थैः = दौवारिकैः कथितं = निवेदितम् अस्मदागमनं = उपस्थितिः यस्मै स तेन तथोक्तेन, सादरं = सत्कारम् विहिता = कृता अभ्युद्गतिः = अभ्युत्थानं येन स तेन तथोक्तेन, तेन = दारुवर्मणा, द्वारोपान्ते = द्वारसमीपे निवारिताः = अवरुद्धाः अशेषाः = अखिलाः परिवाराः = परिजना येन स तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण, मदन्विता—मया = पुष्पोद्भवेन अन्विता = युक्ता, मदन्विता = मया सहिता, बालचन्द्रिका, सङ्केतागारं = पूर्व-

रतिमन्दिर में रमण के निमित्त उद्यत हो गया और उसने उसे वहां बुलाया। जब वह जाने को तैयार हो गयी तब अपनी एक दासी द्वारा मुझे बुलवाया। मैं भी स्त्रियों के अनुरूप आभूषणों से अलंकृत हो गया अर्थात् मणिजटित नूपुर, करधनी, कङ्कण, बिजायठ, कर्णफूल, हार, कण्ठा, रेशमी साड़ी, कज्जल आदि उन-उन अङ्गों में अच्छी तरह धारण कर और अपनी प्रियतमा बालचन्द्रिका के साथ सुन्दर वेश में दारुवर्मा के विहारमन्दिर के द्वार तक पहुँच गया।

(२२) दारुवर्मा को द्वारपालोंने हम लोगों के आने की खबर दे दी। द्वारपालों से खबर पाकर दारुवर्मा सादर अगवानी करने के निमित्त आगे आया तथा द्वार के आसपास उपस्थित पारिवारिक जनों को भीतर जाने से रोक दिया। बाद केवल मेरे आगे चलती हुई

यक्षकथां परीक्षमाणो नागरिकजनोऽपि कुतूहलेन दारुवर्मणः प्रतीहारभूमिमगमत् ।

(२३) विवेकशून्यमतिरसौ रागातिरेकेण रत्नखचितहेमपर्यङ्के हंसतूलगर्भं शयनमानीय तरुणीं तस्य मह्यं तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय मनोरमस्त्रीवेषाय च चामीकरमणिमयमण्डनानि सूक्ष्माणि चित्रवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं हरिचन्दनं कर्पूरसहितं ताम्बूलं सुरभीणि कुसुमानीत्यादिवस्तुजातं समर्प्य मुहूर्तद्वयमात्रं हासवचनैः संलपन्नतिष्ठत् ।

निर्दिष्टस्थानम् = रतिमन्दिरम्, अनीयत = नीता । नगरव्याकुलाम्—नगरे = पुरे व्याकुलाम् = व्याप्ताम् प्रचरिताम्, यक्षकथाम् = पिशाचवार्ताम् परीक्षमाणः = पश्यन्, नागरिकजनः, अपि कुतूहलेन = कौतुकेन, उत्कण्ठया दारुवर्मणः प्रतिहारभूमिम् = द्वारदेशम्, अगमत् = अगच्छत्, एकत्रीभूतः ।

(२३) विवेकेन = सदसद्विचारेण शून्या = रहिता मतिः = बुद्धिः यस्यासौ विवेकशून्यमतिः, असौ = दारुवर्मा, रागातिरेकेण = अनुरागातिशयेन, रत्नखचितहेमपर्यङ्के—रत्नैः = मणिभिः खचिते = स्यूते हेम्नः = सुवर्णस्य पर्यङ्के = खट्वायाम्, हंसतूलगर्भशयनं = हंसेन तुल्यः धवलः हंसवत् स्वच्छः तूलः हंसतूलः स गर्भे = अभ्यन्तरे यस्य तादृशं शयनं = शय्याम्, तरुणीं=बालचन्द्रिकाम्, आनीय=आरोप्य तरुण्यै बालचन्द्रिकायै तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय—तमिस्रायां = तमस्याम् रात्रौ सम्यक् = स्पष्टम् अनवलोकितः = अदृष्टः पुम्भावः = पुरुषभावो यस्य स तस्मै तथोक्ताय, मनोरमस्त्रीवेषाय—मनोरमः = अतिसुन्दरः स्त्रीवेषः = स्त्रीगणोचितं प्रसाधनम् यस्य स तस्मै मह्यं = स्त्रीवेषधारिणे पुष्पोद्भवाय च चामीकरमणिमयानि—चामीकरं = सुवर्णं, मणिः = रत्नं च ताभ्यां प्रचुराणि मण्डनानि = सुवर्णरत्नविकाराणि मण्डनानि = भूषणानि, सूक्ष्माणि = श्लक्ष्णानि वस्त्राणि चित्रवस्त्राणि = मनोरमवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं = मृगमदवासितम् हरिचन्दनम् = सुगन्धिद्रव्यविशेषम्, कर्पूरसहितं = घनसारसमन्वितम्, ताम्बूलं, सुरभीणि = सुगन्धीनि, कुसुमानि = पुष्पाणि, इत्यादि = प्रभृति, वस्तुजातम् = द्रव्यसमूहम्,

---

बालचन्द्रिका को मेरे साथ पूर्वनिदिष्ट रतिमन्दिर के अन्दर ले गया। बालचन्द्रिका के ऊपर यक्ष का निवास है ऐसी कथा नगर में फैल चुकी थी। इसलिए उसकी प्रतीक्षा में नगरनिवासी कौतूहलवश दारुवर्मा के फाटक पर इकट्ठे हो गये थे।

(२३) अविवेकबुद्धि दारुवर्मा ने कामवासना की प्रबल इच्छा से उस बालचन्द्रिका को हंस के समान स्वच्छ रुई से भरे गद्दोंवाले रत्नजटित सुवर्ण के पलङ्ग पर बिठाकर उसको तथा मनोरम स्त्रीवेश धारण करनेवाले मुझको उसने सुवर्ण एवं मणियों से निर्मित आभूषण, सूक्ष्म चित्र-विचित्र छापे की साड़ी, कस्तूरी मिले चन्दन, कर्पूरयुक्त पान और

(२४) ततो रागान्धतया सुमुखीकुचग्रहणे मतिं व्यधत्त। रोषारुणितोऽहमेनं पर्यङ्कतलान्निःशङ्को निपात्य मुष्टिजानुपादघातैः प्राहरम्। नियुद्धरभसविकलालंकारं पूर्ववन्मेलयित्वा भयकम्पितां नताङ्गीमुपलालयन्मन्दिराङ्गणमुपेतः साध्वसकम्पित इवोच्चैरकूजमहम्—'हा, बालचन्द्रिकाधिष्ठितेन घोराकारेण यक्षेण दारुवर्मा निहन्यते। सहसा समागच्छत। पश्यतेमम्' इति।

समर्प्य = दत्वा, मुहूर्तद्वयमात्रम् = चतुर्विंशतिक्षणमात्रम् ('क्षणाते तु मुहूर्तो द्वादशास्त्रियम्' इत्यमरः), हास्यवचनैः = परिहासवाक्यैः हास्ययुक्तोक्तिभिः, संलपन् = मिथः आलापं कुर्वन्, अतिष्ठन् = स्थितवान्।

(२४) ततः = तदनन्तरम्, रागान्धतया—रागेण = कामविषयकाभिलाषया अन्धता, तया = कामोन्मत्ततया सुमुखीकुचग्रहणे—सुमुख्याः = सुवदनायाः बालचन्द्रिकायाः कुचयोः = स्तनयोः ग्रहणे = पीडने, चन्द्रवदनास्तनमर्दने मतिं = बुद्धिम्, व्यधत्त = अकार्षीत्। बालचन्द्रिकाकुचमर्दनं कर्तुमुद्यतः।

रोषारुणितः—रोषेण = क्रोधेन अरुणितः = रक्तवर्णः अहं = पुष्पोद्भवः एनं दुर्जनं दारुवर्माणम्, पर्यङ्कतलात् = खट्वातः, निःशङ्कः = शङ्कारहितः, निपात्य = प्रच्याव्य, मुष्टि-जानु-पादाघातैः—मुष्टेः, जानुनोः = ऊरुपर्वणोः, पादयोः = चरणयोश्च आघातैः = प्रहारैः, प्राहरम् = ताडितवान्, अहं तं व्यनाशयमिति भावः।

नियुद्धरभसविकलं—नियुद्धे = बाहुयुद्धे यः रभसः = वेगः तेन विकलं = विपर्यस्तं, स्थानभ्रष्टम्—बाहुयुद्धस्य वेगेन स्थानभ्रष्टम्, अलङ्कारम्, आभूषणादिकम्, पूर्ववत् = यथास्थानम्, यथावत् मेलयित्वा = संयोज्य, निवेश्य भयकम्पिताम्—भयेन = भीत्या कम्पितां = कम्पवतीम्, वेपमानाम्, नताङ्गी = नम्रीभूतावयवाम् बालचन्द्रिकाम्, उपलालयन् = आश्वासयन्, मन्दिराङ्गणम्—मन्दिरस्य = भवनस्य अङ्गणं = चत्वरम्, दारुवर्मगृहाङ्गणम्, उपेतः = प्राप्तः साध्वसकम्पितः इव—साध्वसेन = भयेन कम्पितः = वेपमानः इव न तु सत्यमेव कम्पितः। उच्चैः = उच्चस्वरेण अहं =

सुगन्धित पुष्प आदि पदार्थों को दिया। रात होने के कारण मेरे पुरुषभाव को उसने नहीं पहचाना। फिर दो घड़ी तक हास-परिहास करते वहाँ पर बैठा रहा।

(२४) उसके बाद काम की पीड़ा से विह्वल होकर वह मदान्ध दारुवर्मा उस सुमुखी बालचन्द्रिका के स्तनों को पकड़ने के लिए उद्यत हुआ। उसकी इस कुचेष्टा को देखकर मुझे क्रोध आ गया। निःशङ्क होकर मैंने लाल-लाल आँख करके उसे पलङ्ग से नीचे पटक दिया और लात, मुक्का एवं घुटनों के प्रहारों से उसे मार डाला। बाहुयुद्ध के वेग से मेरे आभूषण बिखर गये थे, उन्हें मैंने पूर्ववत् यथास्थान ठीक कर दिया और भय से काँपती हुई प्रिया बालचन्द्रिका को धैर्य बँधाकर मन्दिर से आँगन में आ गया। बाद में भय से घबड़ायी

(२४) तदाकर्ण्य मिलिता जना समुद्यद्वाष्पा हाहानिनादेन दिशो बधिरयन्तः बालचन्द्रिकामधिष्ठितं यक्षं बलवन्तं शृण्वन्नपि दारुवर्मा मदान्धस्तामेवायाचत। तदसौ स्वकीयेन कर्मणा निहतः। 'किं तस्य विलापेन' इति मिथो लपन्तः प्राविशन्। कोलाहले तस्मिंश्चटुललोचनया सह नैपुण्येन सहसा निर्गतो निजावासमगाम्।

पुष्पोद्भवः, अकूजम् = अव्यक्तध्वनिमकार्षम्, आक्रन्दनमकरवम्। हा, बालचन्द्रिकामधिष्ठितः = आक्रम्य स्थितः तेन पूर्वोक्तेन, घोरः = भयङ्करः आकारः = स्वरूपं यस्य स तेन घोराकारेण भयावहमूर्तिना, यक्षेण = पिशाचेन, दारुवर्मा = दर्पसारभागिनेयः हन्यते = विनाश्यते। सहसा = सत्वरं शीघ्रम् झटिति, समागच्छत = आयात, इमं हन्यमानं दारुवर्माणम् यूयं पश्यत = अवलोकयत।

(२२) तत् = क्रन्दनं आकर्ण्य = श्रुत्वा, मिलिताः = तत्र समवेताः, उपस्थिता जनाः = लोकाः समुद्यद्वाष्पाः—समुद्यत् = उच्छलत् वाष्पं = अश्रु येषां ते मुद्यद्वाष्पाः हा-हा निनादेन = हा, हा, इति शब्देन दिशः = काष्ठाः बधिरयन्तः पूरयन्तः उच्चैः आक्रोशन्तः, बालचन्द्रिकाम् अधिष्ठितं = बालचन्द्रिकामाक्रम्यस्थितम् बलवन्तं = बलिनम्, यक्षं=पिशाचं शृण्वन्नपि = आकर्णयन्नपि, मदान्धः = मदेन = विषयाभिलाषेण अन्धः = कर्तव्याकर्तव्यज्ञानशून्यः मदगर्वितः, दारुवर्मा, तामेव = बालचन्द्रिकामेव, अयाचत = अभ्यलपत।

तदसौ = दारुवर्मा स्वकीयेन = स्वेनैव कर्मणा = व्यापारेण स्वदोषेणैव निहतः = मारितः, तस्य, विलापेन किम् इति मिथः परस्परम् लपन्तः = कथयन्तः प्राविशन् = तत्प्राङ्गणे अगच्छन्, तस्मिन् कोलाहले = कलकले चटुललोचनया = चञ्चलनेत्रया बालचन्द्रिकया सह = साकम्, नैपुण्येन = दक्षतया, सहसा = सत्वरम्, निर्गतः = निःसृतः, अहम् निजावासम् = स्वगृहम् अगाम् = अगच्छम्।

हुई आवाज में जोर से शोर करने लगा—हा, हा, गजब हो गया, बालचन्द्रिका के ऊपर रहनेवाला भयंकर प्रेत दारुवर्मा को मारे डालता है। दौड़ो, दौड़ो, जल्दी आओ इस प्रेत को मारो और इसे देखो।

(२५) मेरी चिल्लाहट को सुनकर वहाँ उपस्थित लोग आँखों में आँसू भरे हुए हाहाकार ध्वनि से दिशाओं को बहरा करते हुए दौड़े और आपस में कहने लगे; बालचन्द्रिका के ऊपर यक्ष का निवास है, इस बात को जानते हुए भी इस मदान्ध दारुवर्मा ने नहीं माना और उसी से प्रेम करना चाहा। इसलिए यह अपने कुकृत्य से ही मारा गया है, इसके लिए शोक करना व्यर्थ है। ऐसा कहते हुए वे लोग भीतर प्रविष्ट हुए। उसी कोलाहलवाले समुदाय में उस चपलनयना बालचन्द्रिका के साथ मैं चालाकी से शीघ्र बाहर आकर अपने निवासस्थान पर चला गया।

(२६) ततो गतेषु कतिपयदिनेषु पौरजनसमक्षं सिद्धादेशप्रकारेण विवाह्य तामिन्दुमुखीं पूर्वसंकल्पितान् सुरतविशेषान् यथेष्टमन्वभूवम्। बन्धुपालशकुन निर्दिष्टे दिवसेऽस्मान्निर्गत्य पुराद्बहिर्वर्तमानो नेत्रोत्सवकारि भवदवलोकनसुखमप्यनुभवामि' इति।

(२७) एवं मित्रवृत्तान्तं निशम्याम्लानमानसो राजवाहनः स्वस्य च सोमदत्तस्य च वृत्तान्तमस्मै निवेद्य सोमदत्तम् 'महाकालेश्वराराधनानन्तरं भवद्वल्लभां

(२६) ततः = तदनन्तरम् गतेषु = व्यतीतेषु, कतिपयदिनेषु—कतिचिद्दिनेषु पौरजनसमक्षम्—पौरजनानां = नगरनिवासिनाम्, समक्षं = सम्मुखे सिद्धादेशप्रकारेण = सिद्धस्य सिद्धपुरुषस्य तपस्विनः, आदेशप्रकारेण—आज्ञानुसारेण, यथा तेन सिद्धेनादिष्टं तथैवेत्यर्थः तामिन्दुमुखीं = तां चन्द्राननाम्, विवाह्य—परिणीय, पूर्वसंकल्पितान्—पूर्वं = प्राक् संकल्पिताः मनसि निश्चिताः तान्, सुरतविशेषान्—सम्भोगान् यथेष्टं = यथाभिलाषम् यथेच्छम्, अन्वभूवम् = अहम् अनुभूतवान्। बन्धुपालशकुन निर्दिष्टे—बन्धुपालस्य=तदाख्यस्य चन्द्रपालपितुः शकुनेन = शुभसूचकेन निर्दिष्टे = कथिते, पुरात्=नगरात् निर्गत्य—निःसृत्य, बहिः = बहिःप्रदेशे, वर्तमानः = तिष्ठन्, नेत्रोत्सवकारि—नेत्रयोः = लोचनयोः उत्सवकारि इति नेत्रोत्सवकारि = नयनानन्दजनकम्, भवदालोकनसुखम्—भवतः = तव राजवाहनस्य आलोकनेन = दर्शनेन सुखम् = आनन्दम् भवदालोकनसुखम्, अनुभवामि = साक्षात्करोमि।

(२७) एवं = इत्थम्, उक्तप्रकारम्, मित्रवृत्तान्तम्—मित्रस्य = सख्युः पुष्पोद्भवस्य वृत्तान्तं—वृत्तम्, निशम्य = श्रुत्वा, अम्लानमानसः—न म्लानमम्लानं—अम्लानं = स्वच्छं मानसं = मनो यस्यासौ अम्लानमानसः = प्रफुल्लहृदयः, राजवाहनः = राजहंसकुमारः, स्वस्य = निजस्य सोमदत्तस्य च वृत्तान्तं = उदन्तम्, तस्मै = पुष्पोद्भवाय, निवेद्य = कथयित्वा, महाकोशलेश्वराराधनानन्तरम् = महाकोशलेश्वरस्य = उज्जयिन्यां वर्तमानस्य महादेवस्य आराधनं = पूजनं तस्य

(२६) पश्चात् कुछ दिनों के व्यतीत होने पर उस सिद्ध तपस्वी के बताये हुए आदेश के अनुसार नागरिकों के समक्ष मैंने उस चन्द्रमुखी बालचन्द्रिका के साथ विवाह कर लिया और पूर्वसंकल्पित मनोऽभिलाषाओं का यथेच्छ भोग किया। अर्थात् उस शशिवदना के साथ विविध प्रकार के सुखों का अनुभव किया। पुनः बन्धुपाल के द्वारा बताये गये शकुनों के अनुसार आज नगर से बाहर आ गया और नेत्रों को आनन्द देनेवाले आपके दर्शन कर सुख का अनुभव कर रहा हूँ।

(२७) इस प्रकार अपने मित्र पुष्पोद्भव का वृत्तान्त सुनकर राजवाहन अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा अपना और सोमदत्त का समाचार पुष्पोद्भव से यथावत् कह सुनाया। तब सोमदत्त से कहा, अपनी पत्नी तथा कुटुम्बी परिजनों को उज्जयिनी में वर्तमान महाकाल का

सपरिवारां निजकटकं प्रापय्यागच्छ' इति नियुज्य पुष्पोद्भवेन सेव्यमानो भूस्वर्गाय-मानमवन्तिकापुरं विवेश। तत्र "अयं मम स्वामिकुमारः" इति बन्धुपालादये बन्धुजनाय कथयित्वा तेन राजवाहनाय बहुविधां सपर्यां कारयन् सकलकलाकुशलो महीसुरवर इति पुरि प्रकटयन् पुष्पोद्भवोऽमुष्य राज्ञो मज्जनभोजनादिकमनुदिनं स्वमन्दिरे कारयामास।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते पुष्पोद्भवचरितं नाम चतुर्थ उच्छ्वासः।

अनन्तर=पश्चात्, भवद्वल्लभां—भवदीयां वल्लभां=स्वपत्नीम् सपरिवाराम्=परिजन-सहिताम् निजकटकम्=स्ववासस्थानम्, निजवसतिम्, प्रापय्य=संगमय्य आगच्छ, इति=एवं सोमदत्तं नियुज्य—आदिश्य, पुष्पोद्भवेन सेव्यमानः—आराध्यमानः, भूस्वर्गायमानं=भूमिस्वर्गसदृशम् अवन्तिकापुरम्—उज्जयिनीनगरम् विवेश=प्रविष्टः। तत्र=अवन्तिकापुर्याम्, अयं=असौ, मम=पुष्पोद्भवस्य, स्वामिकुमारः=प्रभोः पुत्रः इति बन्धुपालादये—बन्धुपालः आदिर्यस्य स तस्मै, बन्धुजनाय=स्वजनाय कथयित्वा=निवेद्य, तेन=बन्धुजनेन राजवाहनाय, बहुविधाम्—बहवः=अनेके विधाः=प्रकारा यस्याः सा तां बहुविधाम्, सपर्याम्=पूजाम् सत्कारम् कारयन्, सकलकलाकुशलः—सकलासु=सम्पूर्णासु कलासु=विद्यासु, कुशलः=प्रवीणः, पटुः, अयं महीसुरवरः—द्विजश्रेष्ठः इति, पुरि—नगरे प्रकटयन्—ख्यापयन्, राजवाहनस्य-नृपुत्रत्वं गोपयन्, पुष्पोद्भवः अमुष्य=अस्य राज्ञः=राजवाहनस्य मज्जनभोजना-दिकम्=मज्जनं च भोजनं च मज्जन-भोजने ते आदिनी यस्य तत् मज्जनभोजना-दिकम्, स्नानाहारशयनादिकम्, अनुदिनं=प्रतिदिनम्, स्वमन्दिरे—निजभवने कारयामास=अकारयत्।

इति चन्द्रिकाव्याख्यायां चतुर्थ उच्छ्वासः समाप्तः।

पूजन करने के बाद अपने निवासस्थान पर पहुँचाकर शीघ्र मेरे पास आओ। इस प्रकार सोमदत्त को आदेश देकर राजवाहन पुष्पोद्भव के साथ-साथ सुन्दर उज्जयिनीपुरी में प्रवेश किया। वहाँ पहुँचकर पुष्पोद्भव ने अपने बन्धुपाल आदि मित्रों से कहा—"ये मेरे स्वामी के सुपुत्र हैं।" इस बात को सुनकर उन लोगों ने अनेक प्रकार के पदार्थों द्वारा राजवाहन का यथावत् स्वागत-सत्कार किया। उस नगर में राजवाहन का परिचय करते हुए उन लोगों से कहा कि ये समस्त कलाओं में प्रवीण हैं। ऐसा कहकर पुष्पोद्भव ने राजवाहन के राजपुत्रत्व को नागरिकों से गुप्त रखा। फिर अपने वृहद् राजमन्दिर में प्रतिदिन स्नान, भोजन आदि कराने लगा तथा सुखपूर्वक निवास कराया।

इस प्रकार पं० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी द्वारा की गयी दशकुमारचरित पूर्वपीठिका चतुर्थ उच्छ्वास की 'विमला' हिन्दी व्याख्या समाप्त।

—:०:—

पञ्चमोच्छ्वासः

(१) अथ मीनकेतनसेनानायकेन मलयगिरिमहीरुहनिरन्तरावासिभुजङ्गमभुक्तावशिष्टेनेव सूक्ष्मतरेण धृतहरिचन्दनपरिमलभरेणेव मन्दगतिना दक्षिणानिलेन वियोगिहृदयस्थं मन्मथानलमुज्ज्वलयन्, सहकारकिसलयमकरन्दास्वादनरक्तकण्ठानां मधुकरकलकण्ठानां काकलीकलकलेन दिक्चक्रं वाचालयन्, मानिनीमानसोत्कलिकामुपनयन्, माकन्दसिन्दुवाररक्ताशोककिंशुकतिलकेषु कलिकामुपपादयन्, मदनमहोत्सवाय रसिकमनांसि समुल्लासयन्, वसन्तसमयः समाजगाम।

---

(१) अथ = अवन्तिकापुर्यां वासानन्तरम्, मीनकेतनसेनानायकेन—मीनः = मकरः केतनं = ध्वजो यस्य सः मीनकेतनः = कामदेवः तस्य सेनायाः = सैन्यस्य नायकः = प्रधानवीरः, सेनापतिः तेन तथोक्तेन = कन्दर्पसेनापतिना, मलयगिरीति—मलयगिरेः = मलयपर्वतस्य महीरुहेषु = वृक्षेषु निरन्तरं = निरवच्छिन्नम् अवासिनां = निवासिनां भुजङ्गमानां = सर्पाणाम् भुक्तस्य = खादितस्य अवशिष्टेन = अतिरिक्तेन अत एव सूक्ष्मतरेण = मन्दतरेण, धृतहरिचन्दनपरिमलभरेण—धृतः = स्वीकृतः हरिचन्दनस्य = वृक्षविशेषस्य परिमलभरः = आमोदातिशयो येन स तेन तथोक्तेन, मन्दगतिना = धीरगमनेन, दक्षिणानिलेन = मलयपवनेन, वियोगिहृदयस्थं—वियोगिनां = विरहिणां हृदये = चित्ते तिष्ठति = निवसीतीतिवियोगि हृदयस्थं विरहिहृद्गतम्, मन्मथानलं—मन्मथस्य = कामस्य अनलं = वह्निम् उज्ज्वलयन् = उद्दीपयन् सहकारेति—सहकाराणां = आम्राणां किसलयस्य = नवपल्लवस्य मकरन्दस्य = पुष्परसस्य च किसलयमकरन्दयोः आस्वादेन = भक्षणेन रक्तः = मधुरस्वरयुक्तः कण्ठस्वरः, गलो येषां ते तेषां तथोक्तानाम्, मधुकरकलकण्ठानां = मधुकराः = भ्रमराः कलकण्ठाः = कोकिलाश्चते तेषां मधुकरकलकण्ठानाम्, काकलीकलकलेन—काकल्याः = सूक्ष्मध्वनेः कलकलेन = कोलाहलेन दिक्चक्रम्—दिशाम् आशानां चक्रं = मण्डलम् दिङ्मण्डलम्, वाचालयन् = ध्वनयन्, मुखरयन्।

---

(१) अनन्तर कुछ समय बाद वसन्त ऋतु आ गया, जिसका सेनापति स्वयं मीनकेतन कामदेव था। मलयपर्वत पर चन्दन के वृक्षों पर निरन्तर निवास करनेवाले सर्पों के पीने से अवशिष्ट तथा चन्दन की सुगन्ध से मिश्रित पवन धीरे-धीरे चलता हुआ दक्षिणपवन के साथ विरहियों के अन्तःकरणों में कामोद्दीपन कर रहा था। आममञ्जरी के परागों के आस्वादन से, मधुर स्वरवाली कोकिलों की मधुर ध्वनि से एवं भ्रमरों के गुञ्जारों से कामदेव ने दिशाओं को मुखरित कर दिया था और मानिनी युवतियों के हृदय को उत्कण्ठित कर दिया था। आम्र, निर्गुण्डी, रक्ताशोक, पलाश और तिलक आदि वृक्षों को आङ्कुरित करके मदनमहोत्सव

(२) तस्मिन्नतिरमणीये कालेऽवन्तिसुन्दरी नाम मानसारनन्दिनी प्रियवय-स्यया बालचन्द्रिकया सह नगरोपान्तरम्योद्याने विहारोत्कण्ठया पौरसुन्दरीसम-वायसमन्विता कस्यचिच्चूतपोतकस्य छायाशीतले सैकततले गन्धकुसुमहरिद्राक्षत-चीनाम्बरादिनानाविधेन परिमलद्रव्यनिकरेण मनोभवमर्चयन्ती रेमे।

मानिनीमानसोत्कलिकाम्—मानिनीनां = मानवतीनां कामिनीनां मानसस्य= मनसः उत्कलिकाम् = उत्कण्ठाम्, उपनयन् = जनयन्, माकन्देति—माकन्दः = सह-कारः सिन्दुवारश्च = निर्गुण्डी, रक्ताशोकः किंशुकः = पलाशः तिलकः = तिलवृक्षः ते तेषु तथोक्तेषु कलिकाम् = कोरकम् उपपादयन् = प्रापयन् जनयन् मदनमहोत्स-वाय = काममहोत्सवार्थम् रसिकमनांसि—रसिकानां = कामिजनानां मनांसि=मान-सानि, उल्लासयन्=उत्साहयन्, वसन्तसमयः = वसन्तर्तुः, समाजगाम = समागतः।

(२) अतिरमणीये = अतिमनोहरे, तस्मिन् काले = वसन्तसमये, अवन्ति-सुन्दरी नाम = अवन्तिसुन्दरी नाम्ना प्रसिद्धा, मानसारनन्दिनी = मालवेश्वरस्य कन्यका, प्रियवयस्यया = प्रियसख्या, बालचन्द्रिकया = पुष्पोद्भवस्य पत्न्या सह = साकम् नगरोपान्तरम्योद्याने—नगरस्य = पुरस्य उपान्ते = समीपे रम्यं = मनोहरं यद् उद्यानम् उपवनम् तस्मिन् तथोक्ते, विहारोत्कण्ठया—विहारार्थं = क्रीडार्थम् उत्कण्ठया=व्याकुलया, पौरसुन्दरीसमवायसमन्विता—पुरे भवाः पौराः पौराश्च ताः सुन्दर्यः पौरसुन्दर्यः तासां पौरसुन्दरीणां = नगराङ्गनानां समवायेन = मण्डलेन समन्विता = युक्ता, कस्यचित् = एकस्य चूतपोतकस्य = शिशुसहकारवृक्षस्य छाया-शीतले = छायया शीतले, सैकततले = बालुकामयप्रदेशे, गन्धकुसुमेति—गन्धः = चन्दनम्, कुसुमं = पुष्पं हरिद्रा अक्षताः = तण्डुलाः चीनाम्बरं = सूक्ष्मवस्त्रम् इत्या-दिनानाविधेन = अनेकप्रकारेण परिमलद्रव्यनिकरेण = गन्धद्रव्यसमूहेन, मनोभवं = कामम् अर्चयन्ती = पूजयन्ती, रेमे = चिक्रीडे।

मनाने के निमित्त कामदेव ने रसिकों के हृदयों में एक विशेष अनुराग का, उल्लास उत्पन्न कर दिया।

(२) ऐसे अतिरमणीय वसन्तकाल में मालवेश्वर राजा मानसार की पुत्री अवन्ति-सुन्दरी अपनी प्रिय सहेली बालचन्द्रिका के साथ विहार करने की अभिलाषा से नगर के पास एक मनोहर उपवन में गयी। उसके साथ नगर की अनेक महिलाएँ भी थीं। उस उपवन में आकर वह एक छोटे आम्रवृक्ष की शीतल छायायुक्त बालुकामय प्रदेश में गन्ध, पुष्प, हल्दी, अक्षत तथा सूक्ष्म वस्त्र आदि अनेक प्रकार की सुगन्धित वस्तुओं से कामदेव की पूजा करती हुई क्रीडा करने लगी।

(३) तत्र रतिप्रतिकृतिमवन्तिसुन्दरीं द्रष्टुकामः काम इव वसन्तसहायः पुष्पोद्भवसमन्वितो राजवाहनस्तदुपवनं प्रविश्य तत्र तत्र मलयमारुतान्दोलितशाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुमफलसमुल्लसितेषु रसालतरुषु कोकिलकीरालिकुलमधुकराणामालापाञ्छ्रावं श्रावं किञ्चिद्विकसदिन्दीवरकह्लारकैरवराजीवराजीकेलिलोलकलहंससारसकारण्डचक्रवाकचक्रवालकलरवव्याकुलविमलशीतलसलिलललितानि सरांसि दर्शं-दर्शममन्दलीलया ललनासमीपमवाप।

(३) तत्र=तस्मिन् काले रतिप्रतिकृतिम्—रतेः=कामपत्न्याः प्रतिकृतिः=प्रतिमा तां तथोक्ताम्, अवन्तिसुन्दरीं=मानसारनन्दिनीम्, द्रष्टुकामः—द्रष्टुं=अवलोकयितुं कामः=अभिलाषः यस्य सः द्रष्टुकामः काम इव=कन्दर्पसदृशः वसन्तसहायः—वसन्तः सहायः=द्वितीयो यस्य स तथोक्तः, पुष्पोद्भवसमन्वितः पुष्पोद्भवेन समन्वितः=युक्तः, तदुपवनम्—अवन्तिसुन्दर्याधिष्ठितोद्यानम्, प्रविश्य=गत्वा तत्र-तत्र=तेषु-तेषु स्थानेषु, मलयमारुतेति—मलयमारुतेन=दक्षिणानिलेन आन्दोलितासु=कम्पितासु शाखासु निरन्तरं=निरवच्छिन्नम्, समुद्भिन्नै=सुष्ठु विकसितैः, किसलयकुसुमफलैः समुल्लसितेषु=शोभितेषु, रसालतरुषु=आम्रवृक्षेषु, कोकिलकीरालिमधुकराणाम्—कोकिलानां=पिकानां, कीरालीनां=शुकपङ्क्तीनाम्, मधुकराणां=भ्रमराणाम्, आलापान्=अस्फुटमधुरशब्दान् श्रावं श्रावं=श्रुत्वा श्रुत्वा वारंवार निशम्य, किञ्चिदिति—किञ्चित्=ईषत् विकसन्तीषु=प्रस्फुटन्तीषु, इन्दीवराणां कह्लाराणाम्, नीलाम्बुजानां सौगन्धिकानां, कैरवाणां=कुमुदानाम्, राजीवानां=कमलानाम् च राजिषु श्रेणिषु केलिलोलाः=क्रीडासक्ता ये कलहंसाः=कादम्बाः सारसाः=पुष्कराह्वाः, कारण्डाः=मद्गवः, चक्रवाकाः=चक्राह्वाः तेषां यच्चक्रवालं=मण्डलं तस्य कलरवेण=अव्यक्तमधुरध्वनिना व्याकुलानि=व्याप्तानि, विमलानि=स्वच्छानि शीतलानि=शिशिराणि यानि सलिलानि=जलानि तैः ललितानि=मनोरमाणि, सरांसि=सरोवराणि, दर्शं—दर्शं=वारं वारं दृष्ट्वा अमन्दलीलया

(३) कामदेव के समान सुन्दर राजवाहन भी पुष्पोद्भव के साथ उसी समय कामदेव की पत्नी रति के सदृश मनोहर अवन्तिसुन्दरी को देखने के निमित्त उस उपवन में जा पहुँचा, (उस समय ही मालूम पड़ता था कि वसन्त के साथ कामदेव अपनी पत्नी रति को देखने के निमित्त आ गया है) वहाँ मलयानिल के झकोरों से शाखाओं से निरन्तर विकसित नूतन पल्लव, पुष्प एवं फलों से सुशोभित आम्रवृक्षों पर चहकनेवाली कोयल एवं भौंरों के मधुर आलापों को बार-बार सुनकर अर्द्धविकसित नीलश्वेत कमलों और सौगन्धिक कुमुदिनियों की पंक्तियों पर क्रीड़ा में आसक्त चंचल राजहंस सारस-मद्गु, और चक्रवाक-समुदाय की अस्फुट-मधुरध्वनियों से व्याकुल तथा विमल शीतल जल से सुशोभित

(४) बालचन्द्रिकया 'निःशङ्कमित आगम्यताम्' इति हस्तसंज्ञया समाहूतो निजतेजोनिर्जितपुरुहूतो राजवाहनः कृशोदर्या अवन्तिसुन्दर्या अन्तिकं समाजगाम।

(५) या वसन्तसहायेन समुत्सुकतया रते केलीशालभञ्जिकाविधित्सया कञ्चन नारीविशेषं विरच्यात्मनः क्रीडाकासारशारदारविन्दसौन्दर्येण पादद्वयम्, उद्यानवनदीर्घिकामत्तमरालिकागमनरीत्या लीलालसगतिविलासम्, तूणीरलाव-

---

न मन्द अमन्द अमन्दा चासौ लीला च अमन्दलीला तया अमन्दलीलया, ललना-समीपम्—ललनायाः = अवन्तिसुन्दर्याः समीपम् = अन्तिकम्, अवाप = प्राप्तः।

(४) निःशङ्कम् = निर्भयम्, इतः = अस्मिन् स्थाने, आगम्यताम् = उपस्थीयताम्, इति, हस्तसंज्ञया = करचेष्टया, पाणिसंकेतेन, बालचन्द्रिकया = पुष्पोद्भवपत्न्या, समाहूतः = आकारितः, निजतेजोनिर्जितपुरुहूतः—निजतेजसा = स्वप्रतापेन निर्जितः = पराजितः, पुरुहूतः = इन्द्रो येन स तथोक्तः राजवाहनः = राजहंसकुमारः, कृशोदर्याः—कृशं = सूक्ष्मम् उदरं-मध्यमाङ्गं यस्याः सा तस्याः तथोक्तायाः = क्षीण मध्यायाः अवन्तिसुन्दर्याः = मानसारनन्दिन्याः, अन्तिकम् = उपकण्ठम् समीपम्, समाजगाम = गतवान्।

(५) या रराजेति सम्बन्धः। या = अवन्तिसुन्दरी, वसन्तसहायेन—वसन्तः सहायः—द्वितीयो यस्य स तेन कामेन, समुत्सुकतया = रत्यर्थमुत्कण्ठितया रतेः = स्वपत्न्याः केलीशालभञ्जिकाविधित्सया—केली = क्रीडा तदर्थं या शालभञ्जिका—कृत्रिमपुत्तलिका तस्याः विधित्सा = निर्मातुमिच्छा तया तथोक्तया, कञ्चन = अनिर्वचनीयम् एकं नारीविशेषम् स्त्रीप्रकृतिम् विरच्य = निर्माय, आत्मनः = स्वस्य, क्रीडाकासारेति—क्रीडायाः = विहारस्य कासारः = सरः तत्र क्रीडाकासारे—विहारसरसि यत् शारदं = शरत्सम्बन्धि, अरविन्दं = कमलं तस्य सौन्दर्येण = कान्त्या शोभया, पादद्वयम् = चरणयुगलम् (नारीविशेषं विधायेत्यग्रिमेण सम्बन्धः)

तालाबों को बार बार देखते हुए धीरे-धीरे अवन्तिसुन्दरी के समीप पहुँच गया।

(४) दूर से ही बालचन्द्रिका ने हाथों के इशारे से राजवाहन को लक्ष्य कर कहा—आप लोग निर्भय होकर यहाँ आ जाइए। इस प्रकार उसके इशारे पर अपने तेज से इन्द्र को भी पराजित करनेवाला राजवाहन उस कृशोदरी अवन्तिसुन्दरी के पास पहुँच गया।

(५) उस समय अवन्तिसुन्दरी ऐसी लगती थी, मानो कामदेवने अपनी प्रिया रति के क्रीडनार्थ एक पुत्तलिका बनाने की इच्छा से एक स्त्रीविशेष का निर्माण किया हो, कामदेव ने ऐसी दक्षता की कि उसके दोनों चरण उसने अपने क्रीडासरोवर के शरत्कालीन कमलों की शोभा से निर्मित किये। अर्थात् उसके दोनों पैर लाल कमल के समान शोभायमान थे।

ण्येन जङ्घे, लीलामन्दिरद्वारकदलीलालित्येन मनोज्ञमूरुयुगम्, जैत्ररथचातुर्येण घनं जघनम्, किञ्चिद्विकसल्लीलावतंसकह्लारकोरककोटरानुवृत्त्या गङ्गावर्तसनाभि नाभिम्, सौधारोहणपरिपाट्या वलित्रयम्, मौर्वीमधुकरपङ्क्तिनीलिमलीलया रोमावलिम् पूर्णसुवर्णकलशशोभया कुचद्वन्द्वम्, (लतामण्डपसौकुमार्येण बाहू),

उद्यानवनेति—उद्यानवने = उपवने या दीर्घिका = वापी तस्यां या मत्तमरालिका = हंसी तस्याः गमनरीतिः = गतिपरिपाटी तया तयोक्तया। लीलालसगतिविलासम्—लीलया = विलासेन अलसं = मन्थरं गतिविलासम् = गमनप्रकारम्, तूणीरलावण्येन—तूणीरयोः = निषङ्गयोः लावण्येन = सौन्दर्येण, जङ्घे = द्वे जानू (विधाय) लीलामन्दिरेति लीलामन्दिरस्य = सुरतगृहस्य द्वारे ये कदल्यौ = रम्भावृक्षौ तयोः ललित्येन = सौन्दर्येण, मनोज्ञं = मनोहरम्, उरुद्वयं = सक्थिद्वयम् जैत्ररथचातुर्येण—जैत्रो = जयनशीलः रथः = स्यन्दनम् तस्य चातुर्येण = निर्माणरीत्या घनं = निविडं, जघनं = नितम्बपुरोभागम् (विधाय), किञ्चिदिति—किञ्चित् = ईषत्, विकसन् = प्रस्फुटन् लीलावतंसः = विलासकर्णभूषणम्, यः कह्लारकोरकः = सौगन्धिककलिका, रक्तोत्पलकलिका, तस्य कोटरं = मध्यदेशः, विलम्, तस्य अनुवृत्त्या = अनुक्रमेण, सादृश्येन, गङ्गावर्तसनाभि—गङ्गाया आवर्तः = भ्रमिः तस्य सनाभिः = समानाभः सदृशः, तं तथोक्तम्। नाभिम् (विधाय) सौधारोहणपरिपाट्या—सौधस्य = प्रसादस्य यत् आरोहणं—आरुह्यते अनेनेति आरोहणं = सोपानम्, तस्य परिपाट्या = अनुक्रमेण, रचनाक्रमेण वलित्रयं—वलीनां त्रयं वलित्रयम् सोपानपङ्क्तितुल्यं वलित्रयमित्यर्थः। मौर्वीमधुकरेति—मौर्वी = ज्या एव मधुकरपङ्क्तिः रोलम्बमाला, तस्याः यः नीलिमा नीलत्वम्, तस्य लीलया = विलासेन, रोमावलिम् = रोमपङ्क्तिम्, (विधाय) पूर्णेति—पूर्णः = जलपूर्णः यः सुवर्णकलशः = स्वर्णघटः तस्य शोभया = श्रिया कान्त्या वा, कुचद्वयम् = स्तनयुग्मम् (विधाय)

उपवन की बावली में मदोन्मत्त भ्रमणशील दो हंसिनी की गति लेकर दी इस नारीविशेष के विलास से अलसाई चाल बनायी अर्थात् वह अलसाकर हंस की चाल से चलनेवाली थी। उसकी दोनों जाँघें अपने तरकस की छवि से बनायीं। कामदेव ने अपने रतिमन्दिर के द्वार पर लगी कदली की शोभा से उसके दोनों घुटने बनाये तथा जैत्ररथ की निर्माणकला से उसके सघन जघन-स्थल का निर्माण किया। रति के कानों में 'अलंकृत कमलों की कलिका के समान शोभावाले अधखिले विलासभूषणस्वरूप सौगन्धिक कलियों के मध्य जैसी गङ्गाजी के आवर्त के समान गम्भीर उसकी नाभि थी, अट्टालिकाओं के ऊपर चढ़ने के निमित्त सीढ़ियों के समान उसकी त्रिवली बनायी। ज्यास्वरूप भ्रमर-पंक्तियों की नीलिमा की शोभा से उसकी काली रोमावली बनायी, जलपूर्ण स्वर्णकलश की छवि से

जयशङ्खाभिख्यया कण्ठम्, कमनीयकर्णपूरसहकारपल्लवरागेण प्रतिबिम्बीकृतबिम्बं रदनच्छदम्, बाणायमानपुष्पलावण्येन शुचि स्मितम्, अग्रदूतिकाकलकण्ठिकाकलालापमाधुर्येण वचनजातम्, सकलसैनिकनायकमलयमारुतसौरभ्येण निःश्वासपवनम्, जयध्वजमीनदर्पेण लोचनयुगलम्, चापयष्टिश्रिया भ्रूलते, प्रथमसुहृदः सुधाकरस्यापनीतकलङ्कया कान्त्या वदनम्, (लीलामयूरबर्हभङ्ग्या केशपाशं) च

. तस्याः कुचौ कामस्य द्वारदेशस्थशुभसूचककनककलशाकाराविंत्यर्थः। लतामण्डपेति—लतामण्डपस्य = व्रततीजनाश्रयस्य सौकुमार्येण = सुकुमारतया, कोमलतया बाहू = हस्तद्वयम्, (विधाय) जयशङ्खाभिख्यया—जयशङ्खस्य=विजयशङ्खस्य अभिख्यया = शोभया:, कण्ठं = ग्रीवाम् (विधाय) कामनीयेति—कमनीयः = सुन्दरो यः कर्णपूरः = कर्णभूषणीकृतः सहकारपल्लवः = रसालकिसलयं तस्य रागेण = अरुणिम्ना प्रतिबिम्बीकृतं—प्रतिबिम्बवत् कृतं बिम्बं=बिम्बफलं येन स तं तथोक्तम्, रदनच्छदम् = ओष्ठम्, प्रसिद्धबिम्बफलापेक्षयाऽप्यस्या अधरोष्ठे रागाधिक्यमित्यर्थः। बाणायमानेति—बाणवदाचरतीति बाणायमानं यत् पुष्पं = कुसुमं तस्य लावण्येन = सौन्दर्येण, शुचि = शुद्धम्, स्मितं = हास्यम्। अग्रदूतेति—अग्रदूतिका कामस्य प्रथमदूती या कलकण्ठिका = कोकिलवधूः कोकिला, तस्याः यः कलः = मधुरः आलापः=ध्वनिः, तस्य माधुर्येण = मधुरतया, वचनजातं=वाक्यसमूहम्, सकलेति= सकलसैनिकानां = कामस्य निखिलभटानाम्, नायकः=नेता, सेनापतिः यो मलयमारुतः = मलयानिलः, तस्य सौरभ्येण = सौगन्ध्येन, निःश्वासपवनं = श्वासवायुः श्वाससमीरः, प्राणवायुः, जयध्वजमीनदर्पेण—जयध्वजः = जयसूचको ध्वजः, विजयकेतु एव मीनः = मत्स्यः तस्य दर्पेण = विलासेन, अहंकारेण लोचनयुगलम् = नेत्रद्वयम्, मीनाकारं नयनयुगम्, चापयष्टिश्रिया—चापयष्टिः = धनुर्लता तस्या श्रिया=कान्त्या, भ्रूलते = वक्रे भ्रूलते। प्रथमसुहृदः = कामस्य प्रधानमित्रस्य सुधाकरस्य = सुधास्यन्दिनो निशानाथस्य चन्द्रमसः, अपनीतकलङ्कया—अपनीतः = दूरीकृतः, कलङ्कः = लाञ्छनम् यस्याः सा तया, कान्त्या = शोभया, वदनं =

उनके दोनों स्तनों को बनाया। लतामण्डप की शोभा के समान उसके दोनों हाथ रचे। जयशङ्ख की ग्रीवा की शोभा के समान उसका कण्ठ बनाया। सुन्दर कर्णफूल के ऊपर रखी हुई आम्रमञ्जरी की लालिमा के सदृश तथा पके बिम्बफल के समान लाल-लाल उसके ओष्ठ रचे, बाणों के समान आकारवाली पुष्पों की शोभा के समान मुसकान बनायी।

काम की अग्रदूतिका कोयल की मधुर वाणी के माधुर्य से उसके वचन, अपने समस्त सैनिकों में प्रधान सेनानायक मलयपवन की सुगन्धि से उसके श्वासोच्छ्वास तथा जयसूचिका पताका में लगी मीनाकार उसकी दोनों आँखें निर्मित कीं, उसकी भृकुटिय

विधाय समस्तमकरन्दकस्तूरिकासम्मितेन मलयजरसेन प्रक्षाल्य कर्पूरपरागेण सम्मृज्य निर्मितेव रराज।

(६) सा मूर्तिमतीव लक्ष्मीर्मालवेशकन्यका स्वेनैवाराध्यमानं सङ्कल्पितवरप्रदानायाविर्भूतं मूर्तिमन्तं मन्मथमिव तमालोक्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेव मदनावेशवती चकम्पे। तदनु क्रीडाविश्रम्भान्निवृत्ता लज्जया कानि कान्यपि भावान्तराणि व्यधत्त।

मुखारविन्दम्, निष्कलङ्कं सुधासदृशं वदनम्, लीलामयूरेति—लीलामयूरस्य = लीलार्थो मयूरः लीलामयूरः तस्य (क्रीडाबर्हिणः) बर्हं = पिच्छं तस्य भङ्ग्या = रचनया केशपाशं = केशकलापम्, विधाय = कृत्वा, समस्तेति—समस्ताभ्याम् = स्वीकृताभ्याम्, मकरन्दकस्तूरिकाभ्याम् = पुष्परसमृगमदाभ्याम्, सम्मितेन = युक्तेन, मिलितेन, मलयजरसेन चन्दनद्रवेण, प्रक्षाल्य = धर्षयित्वा, आर्द्रीकृत्य, कर्पूरपरागेण—कर्पूरस्य = घनसारस्य परागेण = चूर्णेन, सम्मृज्य = संशोध्य निर्मिता कामेन = रचिता इव रराज = शुशुभे।

(६) सा = मालवेशकन्यका मानसारतनया, मूर्तिमती—शरीरधारिणी लक्ष्मीः इव स्वेनैव = निजेनैव करेण आराध्यमानं = संसेव्यमानम् उपास्यमानम्, संकल्पितवरप्रदानाय—संकल्पितस्य = अवन्तिसुन्दर्या अभिलषितस्य वरस्य = मनोरथस्य प्रदानाय = प्रदानार्थम्, आविर्भूतम् = उपस्थितम् राजवाहनम्, मूर्तिमन्तं = शरीरिणम् मन्मथम् = मनसिजं काममिव, आलोक्य = दृष्ट्वा मन्दमारुतान्दोलिता—मन्देन = धीरेण मारुतेन = पवनेन आन्दोलिता = कम्पिता लता = प्रततिः इव = यथा मदनावेशवती—मदनस्य = कामस्य, आवेशः = आविर्भावः अस्ति अस्यामिति मदनावेशवती, चकम्पे = अकम्पत, यथा समीरसम्पर्केण लता कम्पिता भवति तथैव सापि कामावेशवशात् कम्पिताऽभवत्। एतेन राजवाहने तस्या रतिरुत्पन्ना, तदनु = तदवस्थाप्राप्त्यनन्तरम्, क्रीडाविश्रम्भात्—क्रीडायां विश्रम्भः = विश्वासः, अनुरागविशेषः तस्मात्, निवृत्ता = परावृत्ता, लज्जया = व्रीडया, कानि

अपने धनुष के समान तिरछी अपने प्रधानमित्र सुधास्यन्दी चन्द्रमा की निष्कलङ्क कान्ति से उसका सुन्दर मुख तथा अपने क्रीडामयूर के पंखों के सदृश उसके केशपाश बनाकर कामदेव ने हर तरह की सुगन्धियों—कस्तूरी, कर्पूर, चन्दन आदि से मिश्रित जल से उसे नहला-धुलाकर फिर कर्पूर के सुगन्धित चूर्ण से उसकी देह सजा दी।

(६) मूर्तिमती लक्ष्मी के समान वह मालवेश मानसार की कन्या अवन्तिसुन्दरी अपने द्वारा पूजित एवं अभीप्सित वर देने के निमित्त उपस्थित साक्षात् मूर्तिमान् कामदेव के समान सुन्दर राजवाहन को देखकर मन्द-मन्द पवन से काँपती हुई लता के समान

(७) 'ललनाजनं सृजता विधात्रा नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता। नो चेदब्जभूरेवंविधो निर्माणनिपुणो यदि स्यात्तर्हि तत्समानलावण्यामन्यां तरुणीं किं न करोति' इति सविस्मयानुरागं विलोकयतस्य समक्षं स्थातुं लज्जिता सती किञ्चित्सखीजनान्तरितगात्रा तन्नयनाभिमुखैः किञ्चिदाकुञ्चितभ्रूलतैरपाङ्ग-

---

कानि अपि = बहुविधानि अनिर्वचनीयानि, भावान्तराणि = अनुरागावशेषात् तदवस्थासमुचितान् नानाभावान्, व्यधत्त = आविष्कृतवती धृतवती।

(७) ललनाजनं = स्त्रीजनम्, सृजता = सृष्टिं कुर्वता, विधात्रा = ब्रह्मणा, नूनं = निश्चयेन, एषा = अवन्तिसुन्दरी, घुणाक्षरन्यायेन = संयोगतः, निर्मिता = आविष्कृता, (यथा प्रसिद्धः काष्ठकीटो स्वेच्छया काष्ठं भिन्दन् संचरति, तथा तस्य सञ्चरणेन काष्ठे कदाचित् संयोगवशाद् अक्षरं जायते। अयमेवास्ति घुणाक्षर-न्यायः) यथा घुणः अविदित्वैव अनिर्वचनीयमक्षरमाविष्करोति तथैव स्त्राकुलं विदधता विधात्रापि एषा ललना काकतालीयन्यायेनैव निर्मिता अर्थादियमविदि-त्वैव विधातृहस्तान्निर्गतेतिभावः।

नो चेत् – अन्यथा अब्जभूः–अब्जात् = कमलाद् भवतीति ब्रह्मा, एवंविधः = इत्थंप्रकारः, निर्माणनिपुणः–निर्माणे निपुणः = अवन्तिसुन्दरीसदृशललनानिर्माणे कुशलः, यदि–चेद् स्यात्तर्हि=तदा, तत्समानलावण्यां = तत्तुल्यसौन्दर्याम्, एतदनु-रूपाम् अन्यां = अपराम्, तरुणीं=युवतीम् किं=कथं, न करोति=निर्माति। इति= एवम्, सविस्मयानुरागम्—विस्मयेन सहितः सविस्मयः अनुरागः यस्मिन् तद् यथा स्यात्तथा विस्मयेन अनुरागेन च सहितमित्यर्थः, विलोकयतः = अवलोकयतः तस्य = राजवाहनस्य, समक्षं = पुरतः, अवस्थातु – स्थातुम्, लज्जिता = ह्रीमती व्रीडिता सती, किञ्चित् = ईषत्, सखीजनान्तरितगात्रा: —सखीजनैः = सहचरीभिः अन्तरितं = व्यवहितम् गात्रं = शरीरं यस्याः सा तथाभूता, तन्नयनाभिमुखैः –

कामावेश से काँपने लगी, फिर लज्जा से उसने खेल बन्द कर दिया और समयोचित अनेक भावों को व्यक्त करने लगी।

(७) अवन्तिसुन्दरी का अपूर्व सौन्दर्य देखकर राजवाहन सोचने लगा—मालूम पड़ता है कि जब ब्रह्माजी स्त्रियों की सृष्टि करने लगे तब यह सुन्दरी घुणाक्षर न्याय से बन गयी (जैसे घुन नामक कीड़े चलते-चलते अनजाने ही अक्षर की आकृति बना डालते हैं उसी प्रकार अनजाने में ही ब्रह्मा के हाथों से यह बन गयी है)। यदि वे ऐसी सुन्दरी स्त्रियों की रचना करने में कुशल होते तो अन्य स्त्रियों को भी ऐसा ही बनाते। अतः यह धोखे में बन गयी है। आश्चर्य एवं अनुराग के साथ राजवाहन को बार-बार अवलोकन करनेवाली वह राजकुमारी लज्जा से राजवाहन के सामने न खड़ी होकर कुछ सखियों की आड़ में

वीक्षितैरात्मनः कुरङ्गस्यानायमानलावण्यं राजवाहनं विलोकयन्त्यतिष्ठत् ।

(८) सोऽपि तस्यास्तदोत्पादितभावरसानां सामग्र्या लब्धबलस्येव विषम-शरस्य शरव्यायमाणमानसो बभूव ।

(९) सा मनसीत्थमचिन्तयत्—'अनन्यसाधारणसौन्दर्येणानेन कस्यां पुरि

तस्य = राजवाहनस्य नयनयोः = लोचनयोः अभिमुखैः = सम्मुखवृत्तिभिः किञ्चिदा-कुञ्चितैः = ईषत्संक्षिप्तैः, अञ्चितभ्रूलतैः—अञ्चिते = शोभिते, भ्रूलते यैः ते तैः तथा-भूतैः, अपाङ्गवीक्षितैः = कटाक्षविक्षेपैः, आत्मनः = स्वस्य कुरङ्गस्य = कुरङ्गभूतस्य आनायमानलावण्यं—आनायः = जालं तदिवाचरतीति आनायमानं आनायमानं लावण्यं = सौन्दर्यं यस्य स तम् राजावाहनं = राजहंसतनयम्, कुमारं राजवाहनम्, विलोकयन्ती = पश्यन्ती, अतिष्ठत् = स्थिता । यथा व्याधः जाले कुरङ्गं बध्नाति तथैव राजवाहनः निजसौन्दर्येणावन्तिसुन्दरीं समाचकर्षेतिभावः ।

(८) सोऽपि = राजवाहनोऽपि, तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः तदा = तस्मिन् काले उत्पादितभावरसानाम्—उत्पादिताः = जनिताः, ये भावाः = विकाराः त एव रसा तेषाम् = शृंगाराभिलाषाणाम्, सामग्र्या = पूर्णतया, लब्धबलस्य = लब्धं = प्राप्तं, बलं = सामर्थ्यं येन स तस्य लब्धबलस्य, विषमशरस्य—विषमाः = अयुग्मसंख्याकाः पञ्च शराः—पुष्पबाणा यस्य स तस्य पञ्चेषोः कामदेवस्य, शरव्या-यमाणमानसः—शरव्यं = लक्ष्यं तदिवाचरन् शरव्यायमाणं मानसं यस्य सः तथोक्तः मदनबाणवेध्यो, बभूव = अजायत ।

(९) सा = अवन्तिसुन्दरी, मनसि = हृदये, इत्थम् = अनेन प्रकारेण, वक्ष्यमाणप्रकारेण, अचिन्तयत् = अस्मरत् । अनेन = पुरस्ताद्विद्यमानेन, अनन्य-साधारणसौन्दर्येण—अनन्यं च तत्साधारणम् अनन्यसाधारणं = अद्वितीयं सौन्दर्यं = लावण्यं यस्य स तेन अनन्यसाधारणसौन्दर्येण, कस्यां पुर्यां = नगर्यां,

---

अपने शरीर को छिपाकर बैठ गयी और उनके नेत्रों के सम्मुख कुछ टेढ़ी एवं सुन्दर भौंवाली तिरछी निगाह से राजवाहन के सौन्दर्य को देखने लगी । उस समय ऐसा मालूम पड़ता था कि राजवाहन का कटाक्षविक्षेप हरिणीरूप उस अवन्तिसुन्दरी को फँसाने के लिए जाल के समान हो । उस मोहजाल में वह फँसकर राजवाहन की शोभा खूब देखने लगी ।

(८) उस समय राजकुमार राजवाहन भी अवन्तिसुन्दरी द्वारा उत्पादित विकाररूप रस की पूर्णता से प्राप्त बलवाले कामदेव के बाणों के लक्ष्यभूत—वशीभूत मनवाला हो गया । अर्थात् राजवाहन का चित्त भी अवन्तिसुन्दरी के भावमय रसों—कटाक्ष विक्षेपों से वर्धित होकर कामके बाणों से विद्ध हो गया ।

(९) वह अवन्तिसुन्दरी मन ही मन सोचने लगी—ये अनन्यसाधारण शोभा

भाग्यवतीनां तरुणीनां लोचनोत्सवः क्रियते। पुत्ररत्नेनामुना पुरन्ध्रीणां पुत्रवतीनां सीमन्तिनीनां का नाम सीमन्तमौक्तिकीक्रियते। कास्य देवी। किमत्रागमनकारणमस्य। मन्मथो मामपहसितनिजलावण्यमेनं विलोकयन्तीमसूययेवातिमात्रं मथ्नन्निजनाम सान्वयं करोति। किं करोमि। कथमयं ज्ञातव्य' इति।

(१०) ततो बालचन्द्रिका तयोरन्तरङ्गवृत्तिं भावविवेकैर्ज्ञात्वा कान्तासमाज-

---

भाग्यवतीनां = सौभाग्यशालिनीनाम्, तरुणीनां = ललनानां, लोचनोत्सवः = नयनयोरानन्दः, क्रियते = विधीयते, अमुना = पुरो दृश्यमानेन पुत्ररत्नेन—पुत्रेषु रत्नमिव पुत्ररत्नं तेन पुत्ररत्नेन = सुतश्रेष्ठेन पुरन्ध्रीणां = सुचरित्राणाम्, ('पुरन्ध्री सुचरित्रा तु सती साध्वी पतिव्रता' इत्यमरः) पुत्रवतीनाम् = तनयान्वितानां सीमन्तिनीनां = वधूनाम् नारीणाम् ('स्त्री योषिदबला योषा नारी सीमन्तिनी वधूः' इत्यमरः) का नाम = प्रसिद्धा सीमन्तमौक्तिकीक्रियते = शिरोभूषणी क्रियते केशवेशान्ता मुक्तेव श्रेष्ठा विधीयते। या खल्वस्य जननी सा तु सकलसीमन्तिनीनां शिरोमणिरितिभावः। अस्य पुरोविद्यमानस्य का देवी = महिषी, प्रिया, अत्र = उद्याने, आगमनकारणं = आगमनस्य कारणं प्रयोजनम् किम् अस्यामागमने को हेतुः। अयं कुत्रत्यः, कास्य माता, कास्य महिषी किञ्चात्रागमनकारणम्। मन्मथः = कामः, अपहसितनिजलावण्यम्—अपहसितं = उपहासविषयीकृतं निजं = स्वकीयं लावण्यं = सौन्दर्यं येन स तं तथोक्तं एनं = राजवाहनं विलोकयन्तीम् = पश्यन्तीम्, माम्—अवन्तिसुन्दरीम्, असूयया = ईर्ष्यया, अतिमात्रं = भृशम् मथ्नन् = पीडयन्, निजनाम = मन्मथेति स्वकीयमभिधानं, सान्वयं = सार्थकं, करोति = विदधाति, किं करोमि, कथमयम् = एष पुरो दृश्यमानः व्यक्तिविशेषः, ज्ञातव्यः = ज्ञातुं योग्यः, इत्यचिन्तयत्।

(१०) ततः = तदनन्तरम् बालचन्द्रिकां = पद्मोद्भवपत्नी, तयोः = अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोः, अन्तरङ्गवृत्तिम् = मनोव्यापारम्, इतरेतरानुरागवृत्तिम्, भावविवेकैः—भावानां = मनोविकाराणां विवेकैः = अभिनिवेशैः ज्ञात्वा = अधिगम्य

सम्पन्न पुरुष किस नगर के होंगे? यहाँ की सौभाग्यवती रमणियाँ इनके दर्शन से अपने नेत्रों को सफल बनाती होंगी, वह पुत्रवती धन्य है, जिसने इन्हें पुत्र के रूप में प्राप्त किया है, अवश्य ही वह अङ्गना सर्वश्रेष्ठ होगी, जो इन्हें पुत्र कहकर आनन्दित होती होगी, न जाने इनकी पत्नी कौन होगी? यहाँ इस उपवन में इनके आने का क्या कारण है? जब मैं इनको देखती हूँ तो ईर्ष्या से तिरस्कृत सौन्दर्यवाला कामदेव मेरे मन को मथकर अपना मन्मथ नाम सार्थक कर रहा है। क्या करूँ? कैसे पता लगाऊँ कि ये कौन हैं?

(१०) बाद बालचन्द्रिका ने उन दोनों—अवन्तिसुन्दरी तथा राजवाहन—की

सन्निधौ राजनन्दनोदन्तस्य सम्यगाख्यानमनुचितमिति लोकसाधारणैर्वाक्यैर-भाषत—'भर्तृदारिके, अयं सकलकलाप्रवीणो देवतासान्निध्यकरण आहवनिपुणो भूसुरकुमारो मणिमन्त्रौषधिज्ञः परिचर्यार्हो भवत्या पूज्यताम्' इति।

(११) तदाकर्ण्य निजमनोरथमनुवदन्त्या बालचन्द्रिकया सन्तुष्टान्तरङ्गा तरङ्गावली मन्दानिलेनेव सङ्कल्पजेनाकुलीकृता राजकन्या जितमारं कुमारं समुचितासनासीनं विधाय सखीहस्तेन हस्तेन गन्धकुसुमाक्षतघनसारताम्बूला-

---

कान्तासमाजसन्निधौ—कान्तानां = स्त्रीणां समाजस्य = समूहस्य सन्निधौ = समीपे स्त्रीसमुदाये, राजनन्दनोदन्तस्य राजवाहनवृत्तान्तस्य, सम्यगाख्यानम् = विशेषेण कथनम्, अनुचितम् = अशोभनम्, इति विचार्य लोकसाधारणैः = सांसारिकैः लौकिकैः, वाक्यैः = वचनैः अभाषत = उवाच। भर्तृदारिके = राजपुत्रि! अयं = एष पुरोवर्तमानः सकलकलाप्रवीणः—सकलासु = समग्रासु नृत्यगीतादिकलासु प्रवीणः = कुशल, देवतासान्निध्यकरणः—देवतानां=देवानां सान्निध्यं=साक्षात्कारं करोतीति देवता सान्निध्यकरणः – मन्त्रादिना देवसाक्षात्कारकर्ता, आहवनिपुणः= युद्धकुशलः भूसुरकुमारः = ब्राह्मणकुमारः, मणिमन्त्रौषधिज्ञः = मणिश्च मन्त्रश्च ओषधिश्च मणिमन्त्रौषधयः तान् जानातीति मणिमन्त्रौषधिज्ञः = मन्त्रादिसाधनवेत्ता परिचर्यार्हः = सत्कारयोग्यः भवत्या = श्रीमत्या, पूज्यताम् = सत्क्रियताम्।

(११) तदाकर्ण्य =तद्बालचन्द्रिकोक्तं आकर्ण्य = निशम्य निजमनोरथम्, स्वकीयाभिलाषानुरूपम् अनुवदन्त्या = कथयन्त्या, बालचन्द्रिकया=पुष्पोद्भवपत्न्या, सन्तुष्टान्तरङ्गा—सन्तुष्टं = प्रसन्नम् अन्तरङ्गं = स्वान्तं यस्या सा सन्तुष्टान्तरङ्गा= सन्तुष्टचित्ता, मन्दानिलेन=मन्दमारुतेन, तरङ्गावली—कल्लोलमाला इव संकल्पजेन= मनोमयेन, कामेन, आकुलीकृता–व्याकुलीकृता, राजकन्या–राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी जितमारं—जितः–पराजितः मारः = कामो येन स तं जितमारम्, कुमारं = राज-

---

अङ्गवृत्तियों से यह जान लिया कि उनके मन में अनुराग उत्पन्न हो गया है, किन्तु स्त्री समुदाय में राजवाहन की बात प्रगट करना उसे उचित नहीं जँचा। अर्थात् राजवाहन को राजकुमार के रूप में कहना उसे ठीक न समझा। वार्तालाप के प्रसंग में उसने बताया कि राजकुमारी! ये युद्धविद्या में प्रवीण, मणि, मन्त्र एवं औषधियों के परिज्ञाता, समस्त कलाओं में कुशल और देवताओं के साक्षात्करने में दक्ष हैं। साथ ही ब्राह्मणकुमार हैं। अतः आप इनकी पूजा करें, क्योंकि ये आपसे पूजार्ह हैं।

(११) बालचन्द्रिका की बातों को सुनकर अपने मनोऽनुकूल कहनेवाली बालचन्द्रिका से प्रसन्न होकर कामपीड़िता राजकन्या अवन्तिसुन्दरी ने मन्द वायु से स्पृष्टतरङ्गमाला के समान काम को जीतनेवाले राजकुमार को एक समुचित आसन पर बैठाकर सखियों के हाथ

दिनानाजातिवस्तुनिचयेन पूजां तस्मै कारयामास। राजवाहनोऽप्येवमचिन्तयत्—'नूनमेषा पूर्वजन्मनि मे जाया यज्ञवती। नो चेदेतस्यामेवंविधोऽनुरागो मन्मनसि न जायेत। शापावसानसमये तपोनिधिदत्तं जातिस्मरत्वमावयोः समानमेव। तथापि कालजनितविशेषसूचकवाक्यैरस्या ज्ञानमुत्पादयिष्यामि' इति।

(१२) तस्मिन्नेव समये कोऽपि मनोरमो राजहंसः केलीविधित्सया तदुप-

---

वाहनं समुचितासनासीनं—समुचिते = योग्ये आसने = पीठे आसीनम् = उपविष्टम् विधाय = कृत्वा शस्तेन = प्रशस्तेन, मनोहारिणा, गन्धकुसुमेनेति—गन्धश्च कुसुमश्च अक्षतं च घनसारश्च ताम्बूलं च तानि आदीनि यस्य स, स चासौ नानाजातिवस्तुनिचयः तेन, सखीहस्तेन = सहचरीकरेण सहचरीसमर्पितेन तस्मै = राजवाहनाय, पूजाम् = अर्चनाम्, कारयामास = अकारयत्। राजवाहनोऽपि = राजकुमारोऽपि एवं = वक्ष्यमाणप्रकारेण अचिन्तयत् = अशोचत्, नूनं = निश्चयेन ('नूनं तर्केऽर्थनिश्चये' इत्यमरः) एषा = अवन्तिसुन्दरी, पूर्वजन्मनि = जन्मान्तरे, मे = मम राजवाहनस्य, जाया = पत्नी, यज्ञवती = यज्ञवतीनाम्नी, नो चेत् = अन्यथा, एतस्याम् = अस्याम् अवन्तिसुन्दर्याम्, एवंविधः = एवंप्रकारः, अनुरागः = प्रेमातिशयः, मम = राजवाहनस्य, मनसि = हृदये, न जायेत = नोत्पद्येत, शापावसानसमये = शापसमाप्तिकाले, तपोनिधिदत्तं—तपोनिधिना = तापसेन, येन शापो दत्तः तेन दत्तं = अर्पितम् विहितम्, जातिस्मरत्वम् = जन्मान्तरस्मरणम्, आवयोः = उभयोः, राजवाहनावन्तिसुन्दर्योः, समानं = तुल्यम्, एवं तथाऽपि = अथापि कालजनितविशेषसूचकवाक्यैः—कालेन = दीर्घकालेन जनितः = उत्पादितः यो विशेषः = विस्मरणादिकम् तस्य सूचकानि = प्रकाशकानि यानि वाक्यानि = वचनानि। तैः तथोक्तैः अस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः ज्ञानम् उत्पादयिष्यामि = जनयिष्यामि।

(१२) तस्मिन्नेव समये = चिन्तनवेलायाम्, एव कोऽपि = कश्चिदपि, मनोरमः = सुन्दरः राजहंसः = मरालः केलिविधित्सया = क्रीडाचिकीर्षया, तदुप-

---

चन्दन, पुष्प, अक्षत, कपूर, पान सुपारी आदि विविध प्रकार की वस्तुओं से पूजा करायी। राजवाहन भी इस प्रकार अपने मन में सोचने लगा कि यह राजकुमारी पूर्वजन्म में अवश्य ही मेरी भार्या यज्ञवती नाम की थी, यदि वह न होती तो इसके प्रति मेरे मन में ऐसा अनुराग उत्पन्न नहीं होता। यद्यपि पूर्वजन्म में मुनिप्रदत्त शाप समाप्त होने के समय मुनि का वरदान था कि हम लोगों को पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण रहेगा। यह इसमें और मुझमें समान भाव से वर्तमान है तथापि बातचीत के सिलसिले में इसे पूर्वजन्म की स्मृति दिलानेवाले वाक्यों से स्मरण दिलाऊँगा।

(१२) उसी समय एक सुन्दर राजहंस क्रीडा करते-करते अवन्तिसुन्दरी के समीप

कण्ठमगमत्। समुत्सुकया राजकन्यया मरालग्रहणे नियुक्तां बालचन्द्रिकामवलोक्य समुचितो वाक्यावसर इति सम्भाषणनिपुणो राजवाहनः सलीलमलपत्—'सखि, पुरा शाम्बो नाम कश्चिन्महीवल्लभो मनोवल्लभया सह विहारवाञ्छया कमलाकरमवाप्य तत्र कोकनदकदम्बसमीपे निद्राधीनमानसं राजहंसं शनैर्गृहीत्वा बिसगुणेन तस्य चरणयुगलं निगडयित्वा कान्तामुखं सानुरागं विलोकयन्मन्दस्मितविकसितैककपोलमण्डलस्तामभाषत—'इन्दुमुखि, मया बद्धो मरालः शान्तो मुनिवदास्ते। स्वेच्छयानेन गम्यताम्' इति।

कण्ठम्—तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः उपकण्ठं = समीपम्, अगमत् = अगच्छत्। समुत्सुकया = उत्कण्ठितया, राजकन्यया = अवन्तिसुन्दर्या, मरालग्रहणे = हंसग्रहणे नियुक्तां = नियोजिताम्, बालचन्द्रिकाम् आलोक्य = दृष्ट्वा, समुचितः = योग्यः वाक्यावसारः = वार्ताकालः अस्मिन्नेव काले किञ्चिद् वक्तव्यम् इति मनसि विचार्य भाषणनिपुणः=वार्तालापे कुशलः राजवाहनः, सलीलं = लीलया सहितं, अलपत्= अब्रवीत्, सखि != देवि! पुरा=पूर्वस्मिन् काले: शाम्बः=शाम्बनामा कश्चित्=एकः महीवल्लभः = पृथ्वीपतिः राजा, मनोवल्लभया = स्वप्रियया कमलाकरम्–सरोजवनं सरोवरम् अवाप्य = गत्वा, तत्र = सरोवरे, कोकनदकदम्बसमीपे = कोकनदानां = रक्तकमलानां कदम्बस्य = समूहस्य समीपे – अन्तिके, निद्राधीनमानसं— निद्रया अधीनं = वशीभूतं मानसं = मनो यस्य स तं तयोक्तं = निद्राक्रान्तचित्तम्, राजहंसं = मरालम्, शनैः = मन्दम्, गृहीत्वा = आदाय, बिसगुणेन = कमलतन्तुना, तस्य = मरालस्य, चरणयुगलम् = पादद्वयम्, निगडयित्वा = बद्ध्वा, कान्ताननं = प्रियामुखम्, सानुरागम्=सप्रेम, विलोकयन्=पश्यन्, मन्दस्मितेति—मन्दस्मितेन = ईषद्धसितेन विकसितं = प्रफुल्लम् एकं कपोलमण्डलं=गण्डस्थलम् यस्य स तथोक्तः, तां = स्ववल्लभाम्, अभाषत = उक्तवान्। इन्दुमुखि = चन्द्रानने, मया – शाम्बेन महीवल्लभेन मरालः–राजहंसः बद्धः=निगडितः मुनिवत् – मुनिना तुल्यः शान्तः–

आ गया, जिसे देखकर राजकुमारी उत्सुक हो उठी और अपनी सखी बालचन्द्रिका को उसे पकड़ने के लिए भेज दिया। इस प्रकार एकान्त पाकर वार्तालाप करने में प्रवीण राजहंस ने प्रेमपूर्वक बातें आरम्भ कर दीं। उसने लीलापूर्वक कहा—प्रिये! प्राचीन काल में शाम्बनामक एक राजा अपनी प्रियतमा के साथ विहार करने की इच्छा से एक सरोवर के तट पर गया। वहाँ रक्तकमलसमूह में सोता हुआ एक राजहंस दीख पड़ा, उसे धीरे से पकड़कर शाम्ब ने उसके दोनों पैरों को मृणालतन्तु से बाँध दिया, पुनः प्रेम से प्रफुल्लित कपोलमण्डल करके अपनी प्रियतमा के मुख को मन्दस्मित के साथ देखकर बोला—चन्द्रवदने! मैंने इस राजहंस को बाँध दिया है, यह मुनि के समान स्थिरचित्त हो गया है। अच्छा,

(१३) सोऽपि राजहंसः शाम्बमशपत्—'महीपाल यदस्मिन्नम्बुजखण्डेऽनुष्ठानपरायणतया परमानन्देन तिष्ठन्तं नैष्ठिकं मामकारणं राज्यगर्वेणावमानितवानसि तदेतत्पाप्मना रमणीविरहसन्तापमनुभव' इति। विषण्णवदनः शाम्बो जीवितेश्वरीविरहमसहिष्णुर्भूमौ दण्डवत्प्रणम्य सविनयमभाषत—महाभाग, यदज्ञानेनाकरवं तत्क्षमस्व' इति। स तापसः करुणाकृष्टचेतास्समवदत्-'राजन्, इह जन्मनि भवतः

स्थिरः, आस्ते = तिष्ठति, अधुना अनेन = मरालेन स्वेच्छया गम्यताम् = व्रज्यताम् इत्यभाषत।

(१३) सोऽपि = मरालोऽपि शाम्बं = नृपतिम्, अशपत् = शशाप, महीपाल! राजन्! यत् अस्मिन् अम्बुजखण्डे = सरोजसमुदाये कमलवने अनुष्ठानपरायणतया अनुष्ठाने = ध्यानादिकरणे परायणतया = संलग्नतया, प्रवृत्ततया, परमानन्देन = अतिसुखेन तिष्ठन्तं = वर्तमानम्, नैष्ठिकं—निष्ठाऽन्तःकरणम् तत्कालपर्यन्तमेकरूपेण कालं यापयति = आचरतीति नैष्ठिकः तं नैष्ठिकं = नियमवन्तम्, ब्रह्मचारिणम् मां = मुनिम्, राज्यगर्वेण = राज्यमदेन, अकारणं यथा स्यात्तथा अवमानितवान् तिरस्कृतवान् असि, तत् = तस्मात् एतत्पाप्मना = एतेन पापेन, अपराधेन रमणीविरहसन्तापम्—रमण्या = दयितायाः, विरहस्य = विच्छेदस्य सन्तापं = क्लेशम्, अनुभव = भुङ्क्ष्व इति अशपत्। विषण्णवदनः—विषण्णं = दुःखोपहतं, वदनं = मुखं यस्यासौ विषण्णवदनः = म्लानमुखः, शाम्बः = नृपतिः जीवितेश्वरीविरहं = प्राणप्रियावियोगम्, असहिष्णुः = सोढुमशक्नुवन् भूमौ = पृथिव्यां दण्डवत्—दण्डेन तुल्यं दण्डवत् = लगुडवत् प्रणम्य = नमस्कृत्य, सविनयं—विनयेन सहितं यथा स्यात्तथा, अभाषत = अब्रवीत्। महाभाग! = महाराज! यत् = यत् किञ्चित् अज्ञानेन = अबोधेन अकरवम् = अकार्षम्, तत् क्षमस्व = क्षमां कुरु, सः = मरालरूपधारी तापसः = तपस्वी मुनिः, करुणाकृष्टचेताः—करुणया = दयया आकृष्टं = आवर्जितं चेतः—

अब इसे छोड़ देता हूँ। यह जहाँ चाहे विचरे, यह कहकर उसे छोड़ दिया।

(१३) उस हंसस्वरूप मुनि ने राजा शाम्ब को शाप दिया कि राजन्! मैं इस कमलवन में राजहंस के रूप में परब्रह्म के ध्यान में निमग्न होकर परमानन्द का अनुभव कर रहा था, मुझ नैष्ठिक ब्रह्मनिष्ठ निरपराधी का तुमने अपनी प्रिया के अनुरञ्जनार्थ राज्यमद से अपमान किया है। अतः इस अपराध का दण्ड तुम्हें अपनी प्रिया का वियोग भोगना पड़ेगा, यह सुनकर राजा का मुख म्लान हो गया और अपनी प्रिया भार्या के वियोग को सहन करने में अशक्त होकर भूमि पर दण्डवत् प्रणाम कर नम्रतापूर्वक मुनि से प्रार्थना की कि महाभाग! मैंने अज्ञान से जो अपराध किया है, उसे कृपया क्षमा करें। राजा की प्रार्थना सुनकर तपस्वी का हृदय दया से खिंच गया। करुणार्द्रहृदय उस तपस्वी ने राजा

शापफलाभावो भवतु। मद्वचनस्यामोघतया भाविनि जनने शरीरान्तरं गतायाः अस्याः सरसिजाक्ष्या रसेन रमणो भूत्वा मुहूर्तद्वयं मच्चरणयुगलबन्धकारितया मासद्वयं शृङ्खलानिगडितचरणो रमणीवियोगविषादमनुभूय पश्चादनेककालं वल्लभया सह राज्यसुखं लभस्व' इति।

(१४) तदनु जातिस्मरत्वमपि तयोरन्वगृह्णात्। 'तस्मान्मरालबन्धनं न करणीयं त्वया' इति। सापि भर्तृदारिका तद्वचनाकर्णनाभिज्ञातस्वपुरातनजनन-

---

हृदयं यस्यासौ करुणाकृष्णचेताः। तं = राजानं शाम्बम् अवदत् = उवाच, राजन्! भूपते! इह जन्मनि = अस्मिन् जन्मनि भवतः = तव, शापफलाभावः—शापफलस्य अभावः भवतु, शापस्य फलं न भविष्यति, मद्वचनस्य = मयोक्तस्य शापस्य अमोघतया = अव्यर्थतया भाविनि = भविष्यति जनने = जन्मनि शरीरान्तरं गतायाः = अन्यद्देहं प्राप्तायाः अस्याः सरसिजाक्ष्याः = कमललोचनायाः रसेन = अनुरागेण—रमणः = वल्लभः, भूत्वा मुहूर्तद्वयं = चतुर्विंशतिक्षणाः, मच्चरणयुगलबन्धकारितया—मच्चरणयुगलस्य बन्धनं कर्तुं शीलं यस्य तस्य भावस्तत्ता तया तयोक्तया (त्वया तु मुहूर्तद्वयमेव मच्चरणयुगलस्य बन्धनं कृतं, परं तेनापराधेन पुनर्मासद्वयं तत्फलं त्वया नूनं भोक्तव्यमितिभावः) मासद्वयं = द्वौ मासौ, शृङ्खलानिगडितचरणः—शृङ्खलया निगडितौ = बद्धौ चरणौ = पादौ यस्य सः तयोक्तः रमणीवियोगविषादम्—रमण्या = वनितया वियोगः = विरहः तेन यः विषादः = दुःखं तं तथोक्तम्, अनुभूय पश्चात् = अनन्तरम्, बहुकालं = चिरम्, वल्लभया = प्रियया सह राज्यसुखं = राज्यानन्दं, लभस्व = प्राप्नुहि।

(१४) तदनु = तत्पश्चात्, तयोः = समार्ययोः शाम्बयशस्वत्योः जातिस्मरत्वम् = पूर्वजन्मवृत्तान्तस्मरताम् अपि अन्वगृह्णात् = अनुज्ञातवान्, तस्माद्धेतोः मरालबन्धनं = हंसबन्धनं त्वया = भवत्या न करणीयं = नो कार्यम्। भर्तृदारिका = राजकन्यका सा = अवन्तिसुन्दरी अपि तद्वचनेति—तद्वचनस्य = राजवाहनवाक्यस्य आकर्णनेन = श्रवणेन अभिज्ञातः = स्मृतः, स्वपुरातनजननस्य

शाम्ब से कहा—राजन्! मेरी वाणी सत्य है, फिर भी इस जन्म में हमारा यह शाप अपना फल नहीं दिखलायेगा, किन्तु अगले जन्म में तुम दोनों को इस जन्म की स्मृति बनी रहेगी। इस कमलाक्षी के प्रति अनुराग से तुमने दो मुहूर्त कमलसूत्र से मुझे बाँधा है। अतः दो महीने तक तुम्हारे पैरों में बेड़ियाँ पड़ी रहेंगी और तुम स्त्रीवियोगजनित क्लेश का अनुभव कर पश्चात् अपनी प्रिया के साथ राज्यसुख भोगोगे।

(१४) पुनः तत्काल ही उस तपस्वी ने एक और वरदान देकर कहा—तुम दोनों का जातिस्मरत्व=पूर्वजन्म की बात का स्मरण भी रहेगा। अतः कहता हूँ कि हे राजपुत्रि!

वृत्तान्ता 'नूनमयं मत्प्राणवल्लभः' इति मनसि जानती रागपल्लवितमानसा समन्दहासमवोचत्—'सौम्य, पुरा शाम्बो यज्ञवतीसन्देशपरिपालनाय तथाविधं हंसबन्धनमकार्षीत्। यथा हि लोके पण्डिता अपि दाक्षिण्येनाकार्यं कुर्वन्ति' इति। कन्याकुमारावेवमन्योन्यपुरातनजननामधेये परिचिते परस्परज्ञानाय साभिज्ञमुक्त्वा मनोजरागपूर्णमानसौ बभूवतुः।

(१५) तस्मिन्नवसरे मालवेन्द्रमहिषी परिजनपरिवृता दुहितृकेलीविलोकनाय

निजपूर्वजन्मनः वृत्तान्तः = वृत्तं यया सा तथोक्ता, नूनं = निश्चयम्, अयम् = एषः, मत्प्राणवल्लभः—मम = अवन्तिसुन्दर्याः प्राणवल्लभः = स्वामी, इति मनसि = स्वचित्ते, जानती = अवबुध्यती, रागपल्लवितमानसा—रागेण = अनुरागेण पल्लवितं = प्रफुल्लं विकसितम् मानसं = हृदयं यस्याः सा = तथोक्ता—अनुरागपूर्णमानसा, समन्दहासं – मन्दहासेन सहितम् यथास्यात्तथा अवोचत् = उक्तवती। सौम्य! पुरा = पूर्वस्मिन् काले, शाम्बः = नृपतिः यज्ञवतीसन्देशपरिपालनाय—यज्ञवत्याः = स्वकीयाग्रमहिष्याः सन्देशस्य परिपालनाय = परिरक्षणाय तथाविधं = मरालबन्धनम् अकार्षीत् = कृतवान्, हि = यतः, लोके = संसारे, पण्डिताः = विद्वांसः अपि दाक्षिण्येन = स्त्रीणामाग्रहेण प्रीणनहेतुना, अन्यानुरोधेन परच्छन्दानुरोधेन, अकार्यम् = अनुचितं कर्म कुर्वन्ति। एवं – इत्थम्, कन्याकुमारौ = अवन्तिसुन्दरी-राजवाहनौ अन्योन्यपुरातनजननामधेये—अन्योन्यस्य = परस्परस्य पुरातनं = प्राचीनतमं, जननं = जन्म, नामधेयं = नाम चेति तयोक्ते परस्परपूर्वजन्मनामनी, परिचिते परस्परज्ञानाय = अन्योन्यंप्रतिबोधनाय, साभिज्ञम्—अभिज्ञानेन = प्रमाणेन सहितम्, उक्त्वा = कथयित्वा, मनोजरागपूर्णमानसौ—मनोजेन = मनसिजेन कामेन, रागेण – अनुरागेण च पूर्णं = व्याप्तं मानसं = मनो ययोः तौ तथोक्तौ, बभूवतुः = अभूताम्।

(१५) तस्मिन् अवसरे = तस्मिन् समये मालवेन्द्रमहिषी = मालवनृपतेः

आप राजहंस को न बाँधें। राजकुमार की बातें सुनकर राजकुमारी को भी पूर्वजन्म की स्मृति हो आयी और उसने अपने मनही मन जान लिया कि निश्चय ही ये मेरे प्राणवल्लभ हैं। निश्चयानन्तर उसका मुखकमल खिल उठा और वह प्रेम से मन्दमुस्कान के साथ बोली—हे सौम्य! उस समय राजा शाम्ब ने अपनी पत्नी यज्ञवती के आदेशानुसार राजहंस को बाँधा था। इससे विदित होता है कि विद्वान् लोग भी कभी-कभी दूसरों के आग्रह से से अनुचित कार्य भी कर बैठते हैं। इस तरह अवन्तिसुन्दरी तथा राजवाहन परस्पर पुरातन जन्म एवं नाम से परिचित होने पर परस्पर ज्ञान के लिए सप्रमाण बातों को कहते-कहते अनुराग से परिपूर्ण होकर काम के वशीभूत हो गये।

(१५) उसी समय मालवेश मानसार की महारानी बहुत से परिजनों के साथ अपनी

तं देशमवाप। बालचन्द्रिका तु तां दूरतो विलोक्य ससम्भ्रमं रहस्यनिर्भेदभिया हस्तसंज्ञया पुष्पोद्भवसेव्यमानं राजवाहनं वृक्षवाटिकान्तरितगात्रमकरोत्। सा मानसारमहिषी सखीसमेताया दुहितुर्नानाविधां विहारलीलामनुभवन्ती क्षणं स्थित्वा दुहित्रा समेता निजागारगमनायोद्युक्ता बभूव। मातरमनुगच्छती अवन्तिसुन्दरी 'राजहंसकुलतिलक, विहारवाञ्छया केलिवने मदन्तिकमागतं भवन्तमकाण्डे

पट्टराज्ञी परिजनपरिवृता = परिजनैः सेवकैः परिवृता = युक्ता दुहितृकेलिविलोकनाय—दुहितुः = कन्यायाः अवन्तिसुन्दर्याः केळी = क्रीडा तस्या विलोकनाय = दर्शनाय तं देशं = तमेव प्रदेशम्, अवाप = प्राप्ता, बालचन्द्रिका = पुष्पोद्भवपत्नी तां = महाराज्ञीम् दूरतः = विप्रकृष्टतः विलोक्य = दृष्ट्वा, ससंभ्रमं—संभ्रमेण सहितं ससंभ्रमम् = सत्वरम् रहस्यनिर्भेदभिया—रहस्यस्य = गोप्यस्य निर्भेदः = ख्यातिः, तस्या भिया = आशङ्कया (राजमहिषी यदि तथाविधं राजवाहनं पश्येत्तदा रहस्यनिर्भिद्यतेतिशंकया), हस्तसंज्ञया = हस्तसङ्केतेन करव्यापारेण पुष्पोद्भवसेव्यमानं—पुष्पोद्भवेन सेव्यमानं = संसेवितम्, राजवाहनम्, वृक्षवाटिकान्तरितगात्रम्—वृक्षवाटिकायां = गृहोद्याने अन्तरितं = गोपितम्, गात्रं = शरीरं यस्य स तं तथाविधम्, अकरोत् = कृतवती, सा मानसारमहिषी = मालवेन्द्रपत्नी, अवन्तिसुन्दरीमाता, सखीसमेतायाः = सहचरीयुक्तायाः, दुहितुः = पुत्र्याः अवन्तिसुन्दर्याः, नानाविधां = बहुप्रकाराम्, विहारलीलाम् = विहरणक्रियाम्, अनुभवन्ती = पश्यन्ती, क्षणं = किञ्चित् कालम्, स्थित्वा = विश्रम्य, दुहित्रा = कन्यया, अवन्तिसुन्दर्या समेता = युक्ता निजागारगमनाय = स्वगृहगमनाय, उद्युक्ता = उद्यता बभूव = अभवत्, मातरं = जननीम् अनुगच्छन्ती = अनुसरन्ती, राजपुत्री = राजकुमारी, अवन्तिसुन्दरी राजहंसकुलतिलक !—राजहंसस्य = मरालस्य कुले = मण्डले तिलकः = मूर्धन्य इव = यथा, अथवा राजहंसस्यस्य = तन्नाम्नो नृपतेः कुले = वंशे तिलकः = भूषणम् इव = यथा, अर्थद्वययोगात्, पदमेतत् श्लिष्टम्। विहारवाञ्छया = विहर्तुमिच्छया केलिवने = क्रीडोद्याने, मदन्तिकम् = मम समीपम्

पुत्री अवन्तिसुन्दरी के खेलों को देखने के लिए उस उपवन में आ पहुँची। बालचन्द्रिका ने उन्हें दूर से ही आते देख रहस्यभेदन के भय से शीघ्र ही हाथ के इशारे से पुष्पोद्भवसहित राजवाहन को घने वृक्षों की ओट में छिप जाने को कह दिया। मानसार की पटरानी सखियों के साथ अपनी कन्या की अनेकविध लीलाओं को देखती हुई वहाँ कुछ देर ठहर कर राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी को साथ लेकर अपने महल में जाने लगी। माता के पीछे पीछे जाती हुई राजकुमारी ने हंस के बहाने राजकुमार से कहा—हे राजहंसकुलतिलक ! विहार

एव विसृज्य मया समुचितमिति जनन्यनुगमनं क्रियते, तदनेन भवन्मनोरागोऽन्यथा मा भूत्' इति मरालमिव कुमारमुद्दिश्य समुचितालापकलापं वदन्ती पुनः पुनः परिवृत्तदीननयना वदनं विलोकयन्ती निजमन्दिरमगात्।

(१६) तत्र हृदयवल्लभकथाप्रसङ्गे बालचन्द्रिकाकथिततदन्वयनामधेया मन्मथबाणपतनव्याकुलमानसा विरहवेदनया दिने-दिने बहुलपक्षशशिकलेव-

आगतं = उपस्थितं भवन्तम्, अकाण्डे = असमये, सहसा एव विसृज्य = विहाय जनन्यनुगमनं = मात्रनुगमनम् समुचिम् अवश्यकर्तव्यमितिहेतोः मया = अवन्तिसुन्दर्या मातुरनुगमनं क्रियते। तद् अनेन व्यापारेण भवन्मनोरागः = त्वन्मनोवृत्तिः, अन्यथा = विपरीतः, माभूत् = मयि विषये भवन्मनोवृत्तिरन्यथा माभूत्, इति = इत्यम्, मरालमिव = हंसमिव कुमारं = राजवाहनम् उद्दिश्य समुचितालापकलापं—आलापस्य = भाषणस्य कलापः = समूहः आलापकलापः समुचितश्चासौ आलापकलापः समुचितालापकलापः तं तथोक्तं वदन्ती = कथयन्ती, उच्चारयन्ती, पुनः-पुनः = मुहुर्मुहुः परिवृत्तदीननयनः—परिवृत्ते = विवृत्ते दीने = विपण्णे नयने = लोचने यस्याः सा तथोक्ता, वदनं = राजकुमारस्य मुखं, विलोकयन्ती, निजमन्दिरं = स्वगृहम्, अगात् = अगच्छत्।

(१६) तत्र = निजमन्दिरे हृदयवल्लभकथाप्रसङ्गे—हृदयवल्लभस्य = प्राणेश्वरस्य राजवाहनस्य कथाप्रसङ्गे = विषये, बालचन्द्रिकेति—बालचन्द्रिकया कथिते = प्रकाशिते तस्य = राजवाहनस्य अन्वयनामधेये = वंशनामनी यस्यै सा तथोक्ता, मन्मथेति—मन्मथबाणपतनेन = कामशरनिपातेन व्याकुलं = व्यग्रं मानसं = हृदयं यस्याः सा तथोक्ता, विरहवेदनया—विरहस्य = वियोगस्य वेदनया = पीडया, दिने-दिने = प्रतिदिनम्, बहुलपक्षशशिकलेव—बहुलपक्षे = कृष्णपक्षे

की इच्छा से इस उपवन में आप मेरे समीप आये थे, किन्तु मैं असमय में ही आपको छोड़कर जा रही हूँ, क्योंकि माता अनुगमन आवश्यक कर्तव्य है और उनकी आज्ञा अनुल्लंघनीय एवं अनिवार्य है। परन्तु मेरे इस व्यवहार पर कुपित नहीं होना, और मेरा अनुराग आप पर नहीं है यह न समझना, अतः इससे आपके हृदय का प्रेम मेरे ऊपर कम न हो, इस प्रकार हंस के बहाने राजकुमार से उचित क्षमायाचना करती हुई वह राजकुमारी दीनतापूर्ण नेत्रों से राजवाहन को बार-बार मुड़कर देखती हुई माता के साथ अपने घर चली गयी।

(१६) घर पर आने के बाद हृदयेश्वर राजवाहन के कथा-प्रसंग में बालचन्द्रिका के मुख से जब अवन्तिसुन्दरी को राजकुमार के वंश एवं नाम का पता चला तो वह काम के बाणों से पूर्ण विद्ध हो गयी और उसकी बहुत बुरी दशा हो गयी। विरह वेदना से

क्षामक्षामाहारादिसकलं व्यापारं परिहृत्य रहस्यमन्दिरे मलयजरसक्षालितपल्लवकुसुमकल्पिततल्पतलावर्तितनुलता बभूव ।

(१७) तत्र तथाविधावस्थामनुभवन्तीं मन्मथानलसन्तप्तां सुकुमारीं कुमारीं निरीक्ष्य खिन्नो वयस्यागणः काञ्चनकलशसञ्चितानि हरिचन्दनोशीरघनसारमिलितानि तदभिषेककल्पितानि सलिलानि बिसतन्तुमयानि वासांसि च नलिनीदलमयानि तालवृन्तानि च सन्तापहरणानि बहूनि संपाद्य तस्याः शरीरमशिशिरयत् ।

या शशिकला = चन्द्रकला, सा इव = यथा, क्षामक्षामा = अतिक्षीणा, अतिकृशा, आहारादि सकलव्यापारम् आहारः—भोजनम् आदिः यस्य सकलव्यापारस्य समस्तव्यवहारस्य तम् परित्यज्य—विहाय, रहस्यमन्दिरे = जनशून्यभवने मलयजीरसेन = चन्दनद्रवेण क्षालितैः = सिक्तैः पल्लवैः—किसलयैः, कुसुमैः = पुष्पैश्च कल्पितं = रचितंयत्तल्पतलं = शय्या तत्र आवर्तिनी = लुठन्ती तनुलता = गात्रयष्टिः यस्याः सा तथोक्ता, बभूव = अभवत् ।

(१७) तत्र = रहस्यमन्दिरे, तथाविधावस्थाम् = कामाग्निविकलदशाम्—अनुभवन्तीम्, मन्मथानलसन्तप्तां—मन्मथानलेन = कामाग्निना सन्तप्ताम् — ज्वलन्तीम्, सुकुमारीं = कोमलाङ्गीम् कुमारीम् = अवन्तिसुन्दरीम्, निरीक्ष्य = विलोक्य खिन्नः — विषण्णः वयस्यागणः = सखीसमूहः, काञ्चनकलशसञ्चितानि काञ्चनस्य—सुवर्णस्य कलशे = कुम्भे सञ्चितानि एकत्रीकृतानि, हरिचन्दनेति हरिचन्दनं च उशीरं च घनसारश्चेति हरिचन्दनोशीरघनसाराः तैः मिलितानि=युक्तानि मिश्रितानि, तदभिषेककल्पितानि—तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः अभिषेकाय = स्नानाय कल्पितानि = रचितानि स्थापितानि, सलिलानि = जलानि, बिसतन्तुमयानि=बिसतन्तुप्रचुराणि, मृणालसूत्रनिर्मितानि, वासांसि = वस्त्राणि च नलिनीदलमयानि = नलिन्या = कमलिन्याः, दलानि = पत्राणि तत्प्रचुराणि तालवृन्तानि च, सन्तापहराणि — कामज्वरविनाशकानि बहूनि वस्तूनि सम्पाद्य=निर्माय तस्याः = अवन्ति-

---

कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा के समान प्रतिदिन क्षीण होने लगी । भोजन, शयन आदि समस्त व्यापार अव्यवस्थित हो गये, वह एकान्त में चन्दनवासित जल से सींचे फूलों और पत्तों की शय्या पर लेटती हुई पड़ी रहती थी।

(१७) सुकुमारी कुमारी को कामाग्नि से सन्तप्त दशा में देखकर उसकी सखियाँ खिन्न होकर व्याकुल हो उठीं, उन्होंने उसके स्नान के निमित्त सुवर्ण के कलशों में मलयगिरि, चन्दन, खश, कपूर आदि मिलाकर जल तैयार किया तथा ताप मिटानेवाली अनेक वस्तुएँ एकत्र कीं । कमल तन्तुओं के बने वस्त्र और कमलपत्रनिर्मित पंखे तथा सन्तापहरण करनेवाले पदार्थों को लाकर उसके शरीर पर शीतल-

तदपि शीतलोपचरणं सलिलमिव तप्ततैले तदङ्गदहनमेव समन्तादाविश्चकार। किंकर्तव्यतामूढां विषण्णां बालचन्द्रिकामीषदुन्मीलितेन कटाक्षवीक्षितेन बाष्पकणाकुलेन विरहानलोष्णनिःश्वासम्लपिताधरया नताङ्ग्या शनैः शनैः सगद्गदं व्यालापि 'प्रियसखि' कामः कुसुमायुधः पञ्चबाण इति नूनमसत्यमुच्यते। इयमहमयोमयैरसंख्यैरिषुभिरनेन हन्ये। सखि, चन्द्रमसं वडवानलादतितापकरं मन्ये। यदस्मि नतः

सुन्दर्याः शरीरं = देहं, अशिशिरयत् = शीतलीचकार, तदपि = सखीभिः कृतमपि शीतलोपचारम्, तप्ततैले सलिलं = जलमिव (यथा तप्ततैले जलनिक्षेपेण सन्तापाधिक्यमेव जायते तद्वद् अवन्तिसुन्दरीशरीरे कृतेन शीतलोपचारेण तस्या दाहाधिक्यमेवाजायतेतिभावः) समन्तात्=चतुर्दिक्षु, तदङ्गदहनमेव —तस्या अङ्गे = शरीरे दहनमेव = अग्निमेव आविश्चकार = प्रज्वालयामास। किंकर्तव्यविमूढां समयेऽस्मिन् किंकर्तव्यमिति निश्चेतुमसमर्थाम्, विषण्णां=खिन्नाम्, बालचन्द्रिकाम्—स्वामन्तरङ्गां सहचरीं पद्मोद्भवपत्नीम्, ईषदुन्मीलितेन—किञ्चिद्विकसितेन बाष्पकणाकुलेन = बाष्पाणाम् = उष्माश्रूणाम् कणाः — बिन्दवः, तैः = आकुलेन व्याप्तेन, कटाक्षवीक्षितेन — अपाङ्गदर्शनेन, विरहानलेनेति—विरहानलस्य—वियोगाग्नेः उष्णनिःश्वासेन = उष्णमुखमारुतेन म्लपितः = म्लानः, क्षामः अधरः यस्याः सा तया तथोक्तया, नताङ्ग्या = नम्रगात्र्या अवन्तिसुन्दर्या, शनैः-शनैः = मन्दं मन्दम्, व्यलापि—अभाषि। प्रियसखि!—प्रियवयस्ये!, कामः=कन्दर्पः, कुसुमायुधः—पुष्पबाणः तस्य पञ्चसंख्याका एव बाणाः सन्ति, इति = एतत्, नूनम् = निश्चयम्, असत्यम् = अलीकम् मिथ्या, जनैः उच्यते = कथ्यते, अहं, अयोमयैः=लोहनिर्मितैः असंख्यैः = संख्यातुमशक्यैः, इषुभिः = बाणैः, अनेन = कामेन हन्ये = लक्ष्यीक्रिये, कामस्य आयुधानि कुसुमानि तस्य बाणा अपि पञ्चसंख्याका एव सन्तीति यदुच्यते तन्मिथ्या तयोऽयमयोमयैरसंख्यैः इषुभिरनेनाहं हतास्मीतिभावः। सखि! वडवानलात् = समुद्राग्नेः, अतितापकरम्—अतितापस्यकरः संतापस्य करः तम् चन्द्रमसं=हिमांशुम्,

---

उपचार करने लगीं। किन्तु वे सभी शीतलोपचार खौलते हुए तेल में पानी के छींटों के समान उसे और दाहक प्रतीत होने लगे। किंकर्तव्यविमूढ=क्या करना चाहिए, यह निश्चय करने में असमर्थ तथा अतिदुःखी बालचन्द्रिका को उसने आँखों में आँसू भरे नेत्रों से देखा, उस समय विरहव्यथा से उसका मुख उदास हो गया था तथा उष्ण निःश्वास से अधरोष्ठ मुरझा गया था, वह नताङ्गी अवन्तिसुन्दरी गद्गदकण्ठ से धीरे-धीरे बोली—प्रिय सखि! लोगों का कहना है कि कामदेव के बाण फूल के बने हैं और उसके बाण पाँच ही हैं, पर यह सर्वथा असत्य है, क्योंकि वह लोहे के असंख्य बाणों से मुझे मार रहा है। सखि! जिस चन्द्रमा को लोग हिमराशि कहते हैं, वह तो मुझे वाडवाग्नि से भी अधिक सन्तापप्रद प्रतीत

प्रविशति शुष्यति पारावारः, सति निर्गते तदैव वर्धते। दोषाकरस्य दुष्कर्म किं वर्ण्यते मया। यदनेन निजसोदर्याः पद्मालयाया गेहभूतमपि कमलं विहन्यते।

(१८) विरहानलसंतप्तहृदयस्पर्शेन नूनमुष्णीकृतः स्वल्पीभवति मलयानिलः। नवपल्लवकल्पितं तल्पमिदमनङ्गाग्निशिखापटलमिव सन्तापं तनोस्तनोति। हरिचन्दनमपि पुरा निजयष्टिसंश्लेषवद्भुरगवदनलिहोल्बणगरलसंकलितमिव तापयति

मन्ये यत् = यस्मात् कारणात् अन्तःप्रविशति = प्रातरस्तंगते, जलमध्ये प्रविशति, अस्मिन् = चन्द्रमसि, पारावारः = समुद्रः शुष्यति शुष्कतां गच्छति, निर्गते = सायमुदिते सति, पारावारो वर्धते=एधते। (एषा खलु किम्वदन्ती श्रूयते यदस्तमनवेलायां चन्द्रमा सागराम्भसि प्रविशति = निमज्जति तेन तस्य वृद्धिर्न भवति, उदयसमये च समुद्रो वर्धते। अतः चन्द्रस्यान्तःस्थित्या सागरः शुष्यति निर्गमेन च प्रवर्धते। अत एव च वडवाग्नितोऽधिकतापकरो हिमकरः) दोषाकरस्य-दोषा=रजनी तस्याः करः यद्वा दोषाणां = दुष्कर्मणाम् आकरः = निधिः दोषाकरः, अथवा दोषां = रात्रिं करोतीति दोषाकरः तस्य दोषाकरस्य = चन्द्रमसः, दुष्कर्म = दुष्कार्यम्, मया = अवन्तिसुन्दर्या किं वर्ण्यते = यत् अनेन = चन्द्रमसा निजसोदर्याः = स्वकीयसोदरायाः भगिन्याः पद्मालयायाः = कमलालयाया लक्ष्म्याः, गेहभूतमपि, गृहरूपं निवासस्थानम्, कमलम् = पद्मम् विहन्यते = मुकुलीक्रियते। लक्ष्मी-चन्द्रमसो समुद्राज्जातत्वात्सोदरत्वप्रसिद्धिः।

(१८) विरहानलेति-विरहानलेन = वियोगाग्निना सन्तप्तस्य = संज्वरितस्य हृदयस्य स्पर्शेन=संसर्गेण नूनं=निश्चयेन, उष्णीकृतः=उत्तप्तीकृतः मलयानिलः = मलयपवनः, स्वल्पीभवति=नूनं स्वल्पो भवतीति मन्ये। (उष्णवस्तुसंसर्गादन्योऽपि शुष्यति। अतः स्वल्पीभावः-उष्णत्वं च तस्य भवतीति भावः)। नवपल्लवकल्पितं-नूतनकिसलयरचितम्, इदम् = एतत्, तल्पम् = शय्या, अनङ्गाग्निशिखापटलमिव= अनङ्गस्य = कामस्य अग्निः=अनलः, तस्य या शिखा = अर्चिः तस्याः पटलं = समूहः तदिव, निजयष्टि संश्लेषेति-निजयष्ट्याः = स्वाश्रयाशायाः, संश्लेषवतः=

हो रहा है, जब चंद्र समुद्र में प्रवेश करता है, तब समुद्र सूखने लगता है और जब निकल जाता है तब समुद्र बढ़ने लगता है। मैं इस चन्द्रमा के दुष्कर्म को कहाँ तक कहूँ, यह अपनी सगी बहन लक्ष्मी के आधारभूत कमल को भी नष्ट=मुकुलित कर देता है।

(१८) मेरे हृदय में ऐसी विरह की आग जल रही है जिसके द्वारा सन्तप्त हृदय के स्पर्शमात्र से ऊष्ण होकर मलयमारुत भी कम हो जाता है, नवीन पल्लवों के द्वारा रचित मेरी शय्या तथा बिछौना भी कामाग्नि की ज्वाला समूह के समान मेरे शरीर को झुलसा

शरीरम्। तस्मादलमलमायासेन शीतलोपचारे। लावण्यजितमारो राजकुमार एवागदंकारो मन्मथज्वरापहरणे। सोऽपि लब्धुमशक्यो मया। किं करोमि' इति।

(१९) बालचन्द्रिका मनोजज्वरावस्थापरमकाष्ठां गतां कोमलाङ्गीं तां राजवाहनलावण्याधीनमानसामनन्यशरणामवेक्ष्यात्मन्यचिन्तयत्—

सम्पर्किणः उरगस्य = सर्पस्य, रदनेन = दन्तेन, लिप्तं = युक्तम्, यदुल्बणं = तीव्रं गरलं = विषं तेन संकलितं = व्याप्तम् इव = यथा हरिचन्दनं = मलयजरसः अपि, शरीरं = देहम्, तापयति = सन्तापयति, (चन्दनतरौ सर्पाणां वास इति प्रसिद्धया हरिचन्दनमपि विषलिप्ततया शरीरस्य तापजनकत्वेनोत्प्रेक्ष्यते) तस्मात् = तस्मात् कारणात् आयासेन = उपचारेण शीतलोपचारे आयासेन अलम् अलम् (युष्माभिर्ये शीतलोपचाराः क्रियन्ते ते सर्वेऽपि सन्तापदायकत्वेन दुःखं कुर्वन्ति। अतो निरर्थका एव ते) युष्माभिर्निवर्त्यतामिति भावः। लावण्यजितमारः— लावण्येन = स्वशरीरसौन्दर्येण, जितः = पराजितः, मारः = कामो येन स लावण्यजितमारः, राजकुमारः = राजवाहनः एव मन्मथज्वरापहरणे—मन्मथज्वरस्य = कामज्वरस्य अपहरणे = अपनयने, अगदंकारः—न गदम् अगदं तत् करोतीति अगदंकारः = चिकित्सकः, सोऽपि अगदंकारो राजकुमारोऽपि मया = अवन्तिसुन्दर्या, लब्धु = प्राप्तुम्, अशक्यः = न शक्यः, किं करोमि = कथं प्राप्तुं शक्नुयाम्।

(१९) बालचन्द्रिका=पुष्पोद्भवपत्नी, अवन्तिसुन्दरी सहचरी, मनोजेति— परमा चासौ काष्ठा परमकाष्ठा मनोजज्वरावस्थायाः परा काष्ठा = अतिशयः ताम् गतां = प्राप्ताम्, कोमलाङ्गीं = सुकुमारशरीराम् ताम् = अवन्तिसुन्दरीम्, राजवाहनेति—राजवाहनस्य = राजकुमारस्य लावण्ये = सौन्दर्ये, अधीनं = वशीभूतम् मानसं = चित्तं यस्याः सा ताम् तथोक्ताम्, अनन्यशरणाम्—नास्ति अन्यः = इतरः शरणं = रक्षिता यस्याः सा ताम् अनन्यशरणाम् = अनन्यगतिकाम्, अवेक्ष्य = अवलोक्य, आत्मनि = स्वस्मिन्, अचिन्तयत् = चिन्तयामास।

रहे हैं। मलयगिरि चन्दन के वृक्षों पर लिपटे सर्पों के दांतों से निकले विष से व्याप्त चन्दन का लेप भी, शरीर को संतप्त कर रहा है। इसलिए इन शीतलोपचारों का प्रयोग भी मेरे लिए व्यर्थ है। अपने शरीरसौन्दर्य से कामदेव को भी जीतनेवाले राजवाहन ही इस कामज्वर को हटाने में समर्थ हैं, परन्तु खेद है कि वे अप्राप्य हैं, उनका मिलना अत्यन्त कठिन है। हाय! अब क्या करूँ।

(१९) कामज्वर की चरम सीमा पर पहुँची हुई एवं राजवाहन के सौन्दर्य पर मुग्ध उस कोमलाङ्गी अवन्तिसुन्दरी को देखकर बालचन्द्रिका समझ गयी कि अब इसका चित्त राजवाहन के आधीन हो गया है। अब इसकी रक्षा दूसरा कोई नहीं कर सकता है अतः वह

'कुमारः सत्वरमानेतव्यो मया। नो चेदेनां स्मरणीयां गतिं नेष्यति मीनकेतनः। तत्रोद्याने कुमारयोरन्योन्यावलोकनवेलायामसमसायकः समं मुक्तसायकोऽभूत्। तस्मात्कुमारानयनं सुकरम्' इति। ततोऽवन्तिसुन्दरीरक्षणाय समयोचितकरणीयचतुरं सखीगणं नियुज्य राजकुमारमन्दिरमवाप। पुष्पबाणबाणतूणीरायमानमानसोऽनङ्गतप्तावयवसंपर्कपरिम्लानपल्लवशयनमधिष्ठितो राजवाहनः प्राणेश्वरीमुद्दिश्य सह पुष्पोद्भवेन संलपन्नागतां प्रियवयस्यामालोक्य पादमूल-

---

कुमारः = राजवाहनः, सत्वरं = शीघ्रम्, मया = बालचन्द्रिकया, आनेतव्यः = प्रापयितव्यः, नो चेत् = अन्यथा, मीनकेतनः = मत्स्यध्वजः कन्दर्पः, एनां = अवन्तिसुन्दरीम्, स्मरणीयां गतिं = कथाशेषताम्, नेष्यति = प्रापयिष्यति, तत्र = उद्याने, कुमारयोः कुमारी च कुमारश्चेति तौ तयोः कुमारयोः = अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोः, अन्योन्येति—अन्योन्यस्य = परस्परस्य, अवलोकनवेला = दर्शनसमयः तस्याम्, असमसायकः—असमः = विषमः सायकः = बाणो यस्य सः पञ्चशरः कामः समं = सहैव, द्वयोरेवोपरि मुक्तसायकः = प्रक्षिप्तबाणः, अभूत् = अभवत्, तस्मात् = तस्मात् कारणात् कुमारानयनं—कुमारस्य = राजवाहनस्य आनयनं = उपस्थापनं सुकरं = सुसाध्यम्। ततः = तदनन्तरम्, अवन्तिसुन्दरीरक्षणाय = अवन्तिसुन्दर्याः रक्षणाय = पालनाय, समयोचितकरणीयचतुरं—समये = तस्मिन् काले यत् उचितकरणीयम् = कर्तव्यम् तत्र चतुरम् = दक्षम्, सखीगणं = वयस्यावर्गं नियुज्य = स्थापयित्वा राजकुमारमन्दिरम् = राजवाहनभवनम्, अवाप = गतवती।

पुष्पबाणेति—पुष्पबाणस्य = कुसुमायुधस्य कामस्य ये बाणाः = तेषां तूणीरस्याचरत् मानसं = मनो यस्य स पुष्पबाणतूणीरायमानमानसः, अनङ्गेति—अनङ्गेन = कामेन तप्तस्य = संज्वरितस्य, अवयवस्य = अङ्गस्य सम्पर्केण = संस्पर्शेन परिम्लानं = क्षामं यत् पल्लवशयनं = किसलयशय्या तत् तथोक्तम्, अधिष्ठितः = उपविष्टः, राजवाहनः = राजकुमारः, प्राणेश्वरीं = अवन्तिसुन्दरीम्, उद्दिश्य =

मन ही मन सोचने लगी। मुझे राजवाहन को शीघ्र यहाँ लाना चाहिए, नहीं तो कामदेव इसको दारुण आतुर कर देगा। जब उपवन में ये दोनों परस्पर अवलोकन कर रहे थे तभी कामदेव ने विषबाणों के द्वारा इन दोनों को एक साथ ही बेध दिया था, अतः राजकुमार को यहाँ लाना कठिन नहीं है क्योंकि वे कामाग्नि से सन्तप्त होंगे। बाद अवन्तिसुन्दरी की रक्षा में कुछ समयोचित सेवा करने में दक्ष सहेलियों को लगाकर स्वयं राजकुमार राजवाहन के भवन में चली गयी। वहाँ आकर उसने देखा कि कुसुमायुध के बाणों से बिंधा हुआ राजवाहन का हृदय बाणों के धरनेवाले तरकस के समान हो रहा है। कामज्वर से सन्तप्त

मन्वेषणीया लतेव बालचन्द्रिकागतेति संतुष्टमना निटिलतटमण्डनीभवदम्बुजकोरकाकृतिलसदञ्जलिपुटाम् 'इतो निषीद' इति निर्दिष्टसमुचितासनासीनामवन्तिसुन्दरीप्रेषितं सकर्पूरं ताम्बूलं विनयेन ददतीं तां कान्तावृत्तान्तमपृच्छत्। तया सविनयमभाणि—"देव, क्रीडावने भवदवलोकनकालमारभ्य मन्मथमद्यमाना

लक्ष्यीकृत्य, पुष्पोद्भवेन निजमन्त्रिणा सहचरेण संल्पन्=वार्तां कुर्वन्, आगतां=प्राप्ताम्, प्रियवयस्याम्=प्रियसहचरीम्, बालचन्द्रिकाम् आलोक्य=दृष्ट्वा, अन्वेषणीया=अन्वेष्टव्या, लता=ओषधिविशेषः इव। महौषधस्य लता यथा रोगार्तैः अन्वेषणीया भवति तथा सा बालचन्द्रिकापि तदानीं राजवाहनस्य मन्मथज्वरापहरणे महौषधिरेवासीदिति भावः) पादमूलं=निजचरणसमीपम्, आगता=प्राप्ता बालचन्द्रिका इति सन्तुष्टमनाः=सन्तुष्टं मनो यस्य सः राजवाहनः, निटिलतटेति-निटिलतटस्य=भालप्रदेशस्य मण्डनीभवत्=आभरणीभवत् यत् अम्बुजकोरकम्=कमलकलिका तस्या आकृतिरिव, लसत्=शोभमानं, अञ्जलिपुटम्-अञ्जलिमुकुलं यस्याः सा ताम् तथोक्तां=शिरसि अञ्जलिबद्धां प्रणमन्तीम्। इतः=अस्मिन् स्थाने निषीद=उपविश, इति=इत्थम्, निर्दिष्टसमुचितासनासीनाम्—निर्दिष्टे=प्रदर्शिते समुचिते=योग्ये आसने आसीनाम्=उपविष्टाम्, अवन्तिसुन्दरीप्रेषितं=अवन्तिसुन्दर्या प्रहितं, सकर्पूरं=कर्पूरेण सहितं ताम्बूलं=वीटिकाम्, विनयेन=प्रश्रयेण राजवाहनाय ददतीम्=उपहरन्तीम्, तां बालचन्द्रिकाम्=प्रियसहचरीम् कान्तावृत्तान्तं=अवन्तिसुन्दर्या वार्ताम्, अपृच्छत्=पृष्टवान्। तया=बालचन्द्रिकया सविनयं=विनयेन सहितं यथा स्यात्तथा अभाणि=कथितं, देव!=स्वामिन्! क्रीडावने=केलिवने, भवदवलोकनकालम्—भवतोऽवलोकनं भवदवलोकनं स कालो यस्य स तम् तथोक्तम् आरभ्य मन्मथमद्यमाना—मन्मथेन=कन्दर्पेण मद्यमाना-

अवन्ती [illegible] के [illegible] सुन्दरी [illegible] के बिछौने पर बैठा हुआ है और प्रेयसी अवन्तिसुन्दरी के विषय में ही पुष्पोद्भव से बातें कर रहा है। इतने में राजवाहन ने अवन्तिसुन्दरी की प्रिय सहचरी बालचन्द्रिका को वहाँ देखा। तो उसे आनन्द हुआ कि जिस [illegible] को वह बहुत देर से ढूँढ रहा था वह उसे पैरों के तले ही मिल गया था [illegible] मालूम हुआ कि [illegible] समान कोई मनोवाञ्छित औषधि [illegible] में आती है। [illegible] देखकर वह राजकुमार आनन्दित हो उठा। उसके सम्मुख पहुँचकर बालचन्द्रिका ने मस्तक पर शोभा के लिए [illegible] कमल दल के समान अपने हाथों को जोड़कर उसे प्रणाम किया और राजवाहन की आज्ञा पाकर उचित आसन पर जा बैठी।

'आओ-आओ यहाँ बैठो' इस प्रकार राजवाहन के बुलाने उचित आसन पर बैठकर बालचन्द्रिका ने राजवाहन को [illegible] अवन्तिसुन्दरी द्वारा प्रदत्त, कर्पूर मिश्रित पान के बीड़े

पुष्पतल्पादिषु तापशमनमलभमाना वामनेनेवोन्नततरुफलमलभ्यं त्वदुरःस्थलालिङ्गनसौख्यं स्मरान्धतया लिप्सुः सा स्वयमेव पत्रिकामालिख्य 'वल्लभायैनामर्पय' इति मां नियुक्तवती"। राजकुमारः पत्रिकां तामादाय पपाठ—

(२०) 'सुभग ! कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम्।
मम मानसमभिलषति त्वं चित्तं कुरु तथा मृदुलम्॥'

पीडयमाना, पुष्पतल्पादिषु—पुष्पस्य = कुसुमस्य तल्पं = शयनीयादि येषां तेषु = कुसुमशय्याम्, तापशमनं = संज्वरशान्तिम् अलभमाना = अप्राप्नुवती, अलभ्यं = लब्धुमशक्यम्, उन्नततरुफलम्—उन्नतस्य = विशालस्य तरोः = वृक्षस्य फलम्, वामनेन = खर्वेण इव यथा लब्धुमिष्यते तद्वत्, स्मरान्धतया = कामान्धतया, अलभ्यं त्वदुरःस्थलालिङ्गनसौख्यं—तव = भवतो राजवाहनस्य उरस्थलस्य = वक्षःस्थलस्य यदालिङ्गनं तस्य सौख्यं = आनन्दम्, स्मरान्धतया = कामान्धतया लिप्सुः = लब्धुमिच्छुः सा = अवन्तिसुन्दरी स्वयमेव = आत्मनैव पत्रिकां = पत्रं, आलिख्य = विलिख्य वल्लभाय = प्रियतमाय, एनां = पत्रिकाम्, अर्पय = देहि, इति मां = प्रियसखीं बालचन्द्रिकाम् नियुक्तवती = न्ययुङ्क्त, राजकुमारः = राजवाहनः तां = पत्रिकाम्, आदाय = गृहीत्वा पपाठ = पठितुमारब्धवान्।

(२०) हे सुभग ! = हे प्रियतम ! जगदनवद्यं—जगति = संसारे, अनवद्यं = निर्दोषम्, कुसुमसुकुमारं—कुसुमं = पुष्पम् तदिव सुकुमारं = कोमलम् ते = तव रूपं = स्वरूपं सौन्दर्यं विलोक्य = निरीक्ष्य, मम = अवन्तिसुन्दर्याः, मानसं =

वहाँ नम्रता के साथ राजवाहन को समर्पित कर दिये, पान को ग्रहण कर राजवाहन ने अपनी प्रिया का समाचार उससे पूछा। बालचन्द्रिका विनीत भाव से कहने लगी—देव ! केलिवन में जब राजपुत्री ने आपको देखा है तभी से कामदेव उसे बुरी तरह सता रहा है। यहाँ तक कि फूल तथा नये-नये पल्लवों की सेज भी उसे सता रही है। फिर भी जिस प्रकार वामन व्यक्ति ऊँचे वृक्ष के फल को हाथ से प्राप्त करता है उसी प्रकार कामान्ध होकर अवन्तिसुन्दरी ने दुर्लभ आपके वक्षःस्थल का आलिङ्गन सुख प्राप्त करने की इच्छा से स्वयं यह पत्र लिखकर आपके समीप मुझे भेजा है। यद्यपि वह आपके वक्षःस्थल का आलिंगन सुख अलभ्य समझती है फिर भी वह कामान्ध हो उसे सुगम सोच रही है। स्वयं पत्र लिखकर मुझे आप के समीप भेजा है और कहा है कि यह पत्र मेरे प्रियतम के पास ले जाकर पहुँचा आओ। राजकुमार ने उस पत्र को लेकर पढ़ना शुरू किया। उसमें लिखा था—

(२०) हे सुभग ! पुष्प के समान सुन्दर तथा कोमल और संसार में निर्दोष आपका स्वरूप देखकर मेरा चित्त आप पर मुग्ध हो गया है। अतः आप अपने चित्त को अपने

(२१) इति पठित्वा सादरमभाषत—'सखि, छायावन्मामनुवर्तमानस्य पुष्पोद्भवस्य वल्लभा त्वमेव तस्या मृगीदृशो बहिश्चराः प्राणा इव वर्तसे। त्वच्चातुर्यमस्यां क्रियालतायामालवालमभूत्। यत्तवाभीष्टं येन प्रियामनोरथः फलिष्यति तदखिलं करिष्यामि। नताङ्ग्या मन्मनःकाठिन्यमाख्यातम्। यदा केलिवने

चित्तम्, अभिलपति=वाञ्छति, प्रार्थयति त्वं=भवान् चित्तं=स्वहृदयम्, तथा=स्वरूपेवत्, यथा रूपं कोमलमस्ति तथा मृदुलं=कोमलम्, कुरु=विधेहि, मां प्रति सदयो भवेत्यर्थः।

(२१) इति=पूर्वोक्तं पत्रं, पठित्वा, सादरं=यथा स्यात्तथा स बहुमानम् अभाषत=उक्तवान्, सखि प्रियासहचरि। छायावत्=प्रतिबिम्बवत्, यथा छाया पुरुषमनुसरति तद्वत् मां=राजवाहनम्, अनुवर्तमानस्य=अनुसरतः सर्वदैवं मां सेवमानस्य, पुष्पोद्भवस्य=मत्सहचरस्य, वल्लभा=प्रिया, त्वमेव=भवती एव मृगदृशः=हरिणाक्ष्या चपललोचनायाः, तस्या=अवन्तिसुन्दर्याः, बहिश्चराः=शरीराद्बहिः भ्रमणशीलाः, प्राणाः=जीवितम्, इव, वर्तसे। त्वच्चातुर्यं=भवत्या कौशलम्—अस्यां क्रियालतायाम्—क्रिया=कार्यं मत्प्रयोजनम्, सैव लता=वल्ली तस्यां क्रियालतायाम् त्वच्चातुर्यं=युष्मदीया चतुरता, आलवालं=परिखाकाराजलसेकभूमिः, अभूत्=जातम्। आलवालं विना यथा लतायाः पुष्टिर्न भवति तथैव त्वच्चातुर्यं विना मत्प्रयोजनमपि न सेत्स्यतीति भावः। यत् तव=भवत्या येन च प्रियामनोरथः=प्रियाभिलापः फलिष्यति=सेत्स्यति क्रियामनोरथ इति पाठे तु क्रियया=आलिङ्गनादिशारीरिकचेष्टया युक्तः मनोरथः=अभिलापः, तदखिलं=सम्पूर्णम्, कर्म करिष्यामि=विधास्यामि, नताङ्ग्या कृशोदर्या, प्रियया, मन्मनःकाठिन्यम्, मम मनसः=चित्तस्य काठिन्यं=कर्कशत्वम् आख्यातं=कथितम्, यदा केलिवने=क्रीडोद्याने, कुरङ्ग-

शरीर के समान कोमल बनायें। तात्पर्य यह है कि आपका स्वरूप पुष्प के समान कोमल है, किन्तु हृदय अत्यन्त कठोर है।

(२१) पत्र पढ़कर कुमार ने आदर से कहा—सखि! पुष्पोद्भव छाया के समान मेरे पास सर्वदा रहता है। तुम उसकी प्रियतमा हो और उस मृगनयनी मेरी प्रियतमा की प्रिय सखी हो तथा उसके बाहरा प्राणों के समान इधर-उधर परिभ्रमण करती हो। इस कार्य रूपी लता में तुम्हारी चतुरता आलवाल का कार्य करती है। जिस प्रकार आलवाल के बिना वृक्ष की रक्षा, वृद्धि आदि नहीं होती उसी प्रकार तुम्हारी चतुराई के बिना मेरा मनोरथ सिद्ध नहीं हो सकता। अतः तुम्हारी जो, अभिष्ट अभिलाषा होगी और जिससे प्रिया का मनोरथ सिद्ध होगा वह सब मैं करूंगा। यद्यपि उस कोमलाङ्गी ने मेरे हृदय को कठोर

कुरङ्गलोचना लोचनपथमवर्तत तदैवापहृतमदीयमानसा सा स्वमन्दिरमगात्। सा चेतसो माधुर्यकाठिन्ये स्वयमेव जानाति। दुष्करः कन्यान्तःपुरप्रवेशः। तदनुरूपमुपायमुपपाद्य श्वः परश्वो वा नताङ्गीं संगमिष्यामि। मदुदन्तमेवमाख्याय शिरीषकुसुमसुकुमाराया यथा शरीरबाधा न जायेत तथाविधमुपायमाचर' इति।

(२२) बालचन्द्रिकापि तस्य प्रेमगर्भितं वचनमाकर्ण्य संतुष्टा कन्यापुरमगच्छत्। राजवाहनोऽपि यत्र हृदयवल्लभावलोकनसुखमलभत तदुद्यानं विरहवेदन-

लोचना=हरिणाक्षी मृगनयनी, लोचनपथम्=नेत्रपथम्, अवर्तत=जाता, तदा=तस्मिन् काले, एव अपहृतमदीयमानसा—अपहृतं=चोरितं स्वायत्तीकृतं मदीयं=मामकीनं, मानसं=हृदयं येन सा तथोक्ता सा=अवन्तिसुन्दरी, स्वमन्दिरम्=निजभवनम्, अगात्=ययौ। सा=अवन्तिसुन्दरी, स्वचेतसः=निजहृदयस्य, माधुर्यकाठिन्ये—माधुर्यं च काठिन्यं च माधुर्यकाठिन्ये=मधुरता मार्दवे मम मनसः कोमलतां कठिनतां, वा सा स्वयमेव जानाति। कन्यान्तःपुरप्रवेशः—कन्यायाः अन्तःपुरे=निवासस्थाने प्रवेशः=गमनम्, दुष्करः=दुःसाध्यः, तदनुरूपम्—तस्य=प्रवेशस्य अनुरूपं=योग्यम्, उपाय=साधनम्, उपपाद्य=कृत्वा, श्वः=आगामिनि दिने, परश्वः=ततः परदिने, नताङ्गीम्=नतमानाम्, अवन्तिसुन्दरीम्, संगमिष्यामि=संमिलिष्यामि, मदुदन्तं=अस्मदुदन्तम् एवं=यथा मया अभिहितम् तथा, आख्याय=कथयित्वा, शिरीषकुसुमसुकुमारायाः=शिरीषस्या=पुष्पविशेषवृक्षस्य यत् कुसुमं=पुष्पं तद्वत् सुकुमारायाः=कोमलायाः अवन्तिसुन्दर्याः, यथा=येन प्रकारेण, शरीरबाधा=देहपीडा, न जायेत=न भवेत्, तथाविधं=तादृशमेव, उपायम्=उद्योगम्, आचर=विधेहि।

(२२) बालचन्द्रिकापि=पुष्पोद्भवपत्नी अवन्तिसुन्दरीसहचरी अपि, तस्य=राजवाहनस्य प्रेमगर्भितं=प्रेमपूर्णम्, वचनं=भाषितम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, सन्तुष्टा=प्रसन्ना सती, कन्यान्तःपुरम्=कन्यानिवासस्थानम्, अगच्छत्=जगाम। राज-

कहा है किन्तु जिस समय मैंने उस नताङ्गी मृगनयनी को क्रीडावन में देखा था, उसी समय वह मेरे मन को चुराकर अपने घर चली गयी। वह नताङ्गी हृदय की कोमलता और कठोरता स्वयं जानती है। किसी कन्यान्तःपुर में प्रवेश पाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। अस्तु, वहाँ जाने का सरल उपाय सोचकर कल या परसों उससे अवश्य मिलूँगा। इस प्रकार मेरा वृत्तान्त सुनाकर तुम ऐसा उपाय करना जिससे शिरीष कुसुम के समान कोमल अंगवाली उस राजपुत्री को कोई शारीरिक कष्ट न हो।

(२२) बालचन्द्रिका राजवाहन के इस प्रेमपूर्ण सन्देश को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त होकर राजपुत्री के अन्तःपुर में वापस आ गयी और राजवाहन भी मन

विनोदाय पुष्पोद्भवसमन्वितो जगाम। तत्र चकोरलोचनावचितपल्लवकुसुमनिकुरम्बं महीरुहसमूहं शरदिन्दुमुख्या मन्मथसमाराधनस्थानं च नताङ्गीपदपङ्क्तिचिह्नितं शीतलसैकततलं च सुदतीभुक्तमुक्तं माधवीलतामण्डपान्तरपल्लवतल्पं च विलोकयन् ललनातिलकविलोकनवेलाजनितशेषाणि स्मारं स्मारं मन्दमारुतकम्पि-

वाहनः=राजकुमारोऽपि यत्र=उद्याने हृदयवल्लभावलोकनसुखम्-हृदयवल्लभायाः=प्राणप्रियायाः अवलोकनं=दर्शनम्, तेन यत् सुखं=आनन्दः तत् तथोक्तम्, अलभत=प्राप्तवान्, तदुद्यानं=तदाक्रीडम् विरहवेदनविनोदाय-विरहस्य=वियोगस्य वेदनायाः=पीडायाः, विनोदाय=अपनोदाय पुष्पोद्भवसमन्वितः पुष्पोद्भवेन समन्वितः=स्वसहचरसहितः, जगाम=ययौ। तत्र=उद्याने, चकोरलोचनेति-चकोरस्येव दीर्घे लोचने=नयने यस्याः स चकोरलोचना तया अवचितानि=छिन्नानि पल्लवानां=किसलयानां कुसुमानां=सुमनसां च निकुरम्बाणि=समूहाः यस्य स तम् तथाविधम्, महीरुहसमूहं=वृक्षसमुदायम्, शरदिन्दुमुख्याः-शरत्कालीनः इन्दुः=चन्द्रः स इव मुखं=आननं यस्याः सा शरदिन्दुमुखी तस्याः=चन्द्रवदनायाः मन्मथसमाराधनं स्थानं च मन्मथस्य=कन्दर्पस्य यत् समाराधनं=समुपासनं तस्य स्थानं=भूमिः इति पूर्वोक्तम् नताङ्गीपदपङ्क्तिचिह्नितं—नताङ्ग्याः=अवन्तिसुन्दर्याः पदपङ्क्त्या=चरणचिह्नेन चिह्नितम्=अङ्कितम्, तथोक्तम्, शीतलसैकततलं शीतलं च तत्, सैकततलं=बालुकातलमिति शीतलसैकततलम्, सुदतीभुक्तमुक्तं-सुदत्या=शोभनदन्तया आदौ भुक्तं=उपभुक्तं पश्चाच्च मुक्तं=त्यक्तमिति सुदतीभुक्तमुक्तम्, माधवीति—माधवीलतायाः=वासन्त्याः मण्डपस्य=जनाश्रयस्य अन्तरे=मध्ये यत् पल्लवतल्पं=किसलयशय्या तत् च विलोकयन्=अवलोकयन्, ललनेति—ललनातिलकस्य=कामिनीभूषणभूतायाः अवन्तिसुन्दर्याः विलोकनवेलायां=दर्शनसमये, जनितः=उत्पादितः शेषः=अवशिष्टः येषां तानि तथाभूतानि वाक्यानि, स्मारं-स्मारं=स्मृत्वा स्मृत्वा मन्दमारुतकम्पितानि-मन्दमारुतेन=मलयानिलेन कम्पितानि=वेल्लितानि धूतानि

वह उद्यान तथा विरह वेदना दूर करने के निमित्त पुष्पोद्भव के साथ उस स्थान पर चला गया, जहाँ पर प्राणेश्वरी राजकुमारी के प्रथम दर्शन हुए थे। वहाँ चकोर के समान लम्बी-लम्बी आँखोंवाली उस राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी ने जिन वृक्षों के फूल-पत्ते इकट्ठे किये थे, उन वृक्षों को देखकर उस चन्द्रवदना द्वारा किया हुआ कामपूजन का स्थान देखा। पुनः उस नताङ्गी राजकुमारी के पदचिह्नों से विभूषित बालुकामय प्रदेश तथा उस सुन्दर दाँतवाली राजकुमारी द्वारा उपयुक्त माधवीलता मण्डप के आभ्यन्तरिक स्थान में पड़ी पल्लव-शय्या को देखा। बाद उसने उस सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी के प्रथम दर्शन से उत्पन्न हुए हाव-भाव का

तानि नवचूतपल्लवानि मदनाग्निशिखा इव चकितो दर्शदर्शं मनोजकर्णजपानामिव कोकिलकीरमधुकराणां क्वणितानि श्रावंश्रावं मारविकारेण क्वचिदप्यवस्थातुमसहिष्णुः परिबभ्राम।

(२३) तस्मिन्नवसरे धरणीसुर एकः सूक्ष्मचित्रनिवसनं स्फुरन्मणिकुण्डलमण्डितो मुण्डितमस्तकमानवसमेतश्चतुरवेषमनोरमो यदृच्छया समागतः समन्ततोऽभ्युल्लसत्तेजोमण्डलं राजवाहनमाशीर्वादपूर्वकं ददर्श। राजवाहनः सादरम् 'को

नवचूतपल्लवानि = अभिनवाम्रकिसलयानि मदनाग्निशिखा इव—मदनस्य = कामस्य अग्निः = ताप: तस्य शिखाः = ज्वाला इव, चकितः = यथास्यात्तथा दर्शं-दर्शं = दृष्ट्वा दृष्ट्वा मनोजकर्णजपानाम्-मनोजस्य = कामस्य कर्णजपाः-कर्णेजपन्तीति कर्णेजपाः = सूचकाः दुर्मन्त्रिणः सहायकाः तेषां कामोद्दीपकानामिव, कोकिलकीरमधुकराणां = कोकिलश्च कीरश्च मधुकरश्च इति (द्वन्द्व) तेषाम्, क्वणितानि = वादितानि रुतानि, श्रावं-श्रावं = श्रुत्वा श्रुत्वा मारविकारेण—मारस्य = कामस्य विकारेण = उद्दीपनतया, क्वचिदपि = कुत्रापि अवस्थातुं = स्थितिं कर्तुम्, असहिष्णुः = असहनशीलः परिबभ्राम = इतस्ततो भ्रमणं चकार।

(२३) तस्मिन्नवसरे = परिभ्रमणकाले एकः = कोऽपि, धरणीसुरः = महीसुरः, ब्राह्मणः, यदृच्छया = स्वेच्छया अकस्मात्, सूक्ष्मचित्रवसनः-सूक्ष्मं = श्लक्ष्णं चित्रं = नानावर्णं निवसनं = वासो यस्य सः तादृशः, स्फुरन्मणिकुण्डलमण्डितः—मणेः कुण्डलं मणिकुण्डलं स्फुरत् = चमत् मणिकुण्डलं यस्य सः तेन मण्डितः = भूषितः, मुण्डितमस्तकमानवसमेतः—मुण्डितं = परिष्कारितम्, मस्तकं = शिरः यस्य तादृशेन अपरेण = अन्येन, मानवेन—मनुष्येण समेतः = युक्तः चतुरवेषमनोरमः = चतुरवेषेण मनोरमः = मनोज्ञः, यदृच्छया = स्वेच्छया, समागतः = प्राप्तः, समन्ततः = चतुर्दिक्षु, अभ्युल्लसत् तेजोमण्डलम्—अभि=समन्तात् उल्लसत् = स्फुरत् तेजसां = कान्तीनां मण्डलं = चक्रवालं यस्य स तं तादृशम्। राजवाहनं =

संरमण करके मन्द मन्द बहनेवाले पवन से झकोरे गये नये-नये आम के पल्लवों को देखा जो कामाग्नि की ज्वाला सरीखे लपलप काँप रहे थे। उन्हें आश्चर्यभरी दृष्टि से देखकर काम के गुप्तचर कोयल, सुग्गे एवं भौंरों के कूलरव को सुनता हुआ वह राजकुमार कामपीड़ा से व्यथित हो उठा। उस उपवन में कहीं भी विश्राम करने में असमर्थ होकर इधर-उधर घूमने लगा।

(२३) उसी अवसर पर महीन एवं रंगीन वस्त्र धारण किये हुए एक ब्राह्मण अकस्मात् वहाँ आ पहुँचा, जिसके कानों में मणिमय कुण्डल लटक रहे थे तथा एक और मनुष्य मुण्डन किये हुए उसके साथ में था। वह वेशभूषा से बड़ा चतुर तथा सुन्दर लगता था। उसके चेहरे से उसका तेजःपुञ्ज झलक रहा था, उसने चारों ओर बिखरे तेजोमण्डलवाले

भवान्, कस्यां विद्यायां निपुणः' इति तं पप्रच्छ। स च 'विद्येश्वरनामधेयोऽहमैन्द्रजालिकविद्याकोविदो विविधदेशेषु राजमनोरञ्जनाय भ्रमन्नुज्जयिनीमद्यागतोऽस्मि' इति शशंस। पुनरपि राजवाहनं सम्यगालोक्य 'अस्यां लीलावनौ पाण्डुरतानिमित्तं किम्' इति साभिप्रायं विहस्याप्राक्षीत्। पुष्पोद्भवश्च निजकार्यकरणं तर्कयन्नेनमादरेण बभाषे—'ननु सतां सख्यस्याभाषणपूर्वतया चिरं रुचिर-

---

राजकुमारं ददर्श=अपश्यत्। राजवाहनः तं=समागतम् पुरुषम्, सादरम्=आदरेण सहितं यथा स्यात्तथा पप्रच्छ=पृष्टवान् भवान् कः=कस्त्वम्, कस्यां विद्यायां निपुणः=कुशलः? इति स च=स पुरुषश्च अहम्, विद्येश्वरनामधेयः=विद्येश्वर इति नामकः, ऐन्द्रजालिकविद्याकोविदः–ऐन्द्रजालिकविद्यायां कोविदः=पण्डितः, विविधदेशेषु=विविधाः देशाः ते तेषु देशेषु, राजमनोरञ्जनाय राज्ञां नृपतीनां मनांसि=चित्तानि राजमनांसि तेषां रञ्जनाय=विनोदाय, भ्रमन्=अटन्, अद्य=अस्मिन् अहनि उज्जयिनीम्–अवन्तीम्, आगत=प्राप्तः अस्मि इति शशंस=कथयामास, पुनरपि=भूयोऽपि, राजवाहनम्=राजकुमारं सम्यक्=सुष्ठु आलोक्य=विलोक्य साभिप्रायं=अभिप्रायेण सहितं साभिप्रायं=साभिनिवेशम् विहस्य=विशेषेण हसित्वा, अपृच्छत्=पप्रच्छ, अस्यां लीलावनौ=लीलाया अवनौ =भूमौ उद्याने, पाण्डुरतानिमित्तम्–पाण्डुरतायाः=निःश्रीकतायाः निमित्तं=कारणं किम्? विहारभूमावस्यां तिष्ठन्नपि किमर्थं पाण्डुरं वदनं बिभर्षि?

पुष्पोद्भवश्च=राजयानसहचरश्च, निजकार्यकरणं—निजकार्यस्य करणं=स्वकार्यसम्पादनदक्षम् तर्कयन्=भावयन् एनं=पुरुषम् आदरेण=सम्मानेन बभाषे=उक्तवान्, ननु सतां=सज्जनानां सख्यस्य=मित्रतायाः आभाषणपूर्वतया—आभाषणम्=आलापः पूर्वं यस्मिन् तस्य भावः तत्ता तया आभाषणपूर्वतया=परस्परालापेनैव सज्जनानां मैत्री भवतीति भावः। चिरं=चिरकालम्,

---

राजवाहन के समीप आकर आशीर्वाद दिया। राजवाहन ने भी बड़े विनीत भाव से पूछा—आप कौन हैं? और किस विद्या में निपुण हैं? उत्तर में उसने कहा—मेरा नाम विद्येश्वर है, मैं इन्द्रजाल विद्या का पण्डित हूँ, अनेक देशों में राजे-महाराजाओं का मनोविनोद करता हुआ आज ही आपकी नगरी उज्जयनी में आ पहुँचा हूँ। पुनः उसने राजवाहन को अच्छी तरह गौर से देखकर साभिप्राय हँसते हुए पूछा—इस कीलवन में भी आपके चेहरे पर पीलेपन का क्या कारण है?

पुष्पोद्भव ने उसके द्वारा अपने कार्य में सहायता मिलने की कामना से प्रेरित होकर कहा—मित्र! सज्जनों की मित्रता बातचीत से ही प्रारम्भ होता है। अत एव

भाषणो भवानस्माकं प्रियवयस्यो जातः। सुहृदामकथ्यं च किमस्ति? केलिवनेऽस्मिन्वसन्तमहोत्सवायागताया मालवेन्द्रसुताया राजनन्दनस्यास्य चाकस्मिकदर्शनेऽन्योन्यानुरागातिरेकः समजायत सततसंभोगसिद्ध्युपायाभावेनासावीदृशीमवस्थामनुभवति' इति। विद्येश्वरो लज्जाभिरामं राजकुमारमुखमभिवीक्ष्य विरचितमन्दहासो व्याजहार—'देव, भवदनुचरे मयि तिष्ठति तव कार्यमसाध्यं

रुचिरभाषणं—रुचिरं=प्रियं भाषणं=वचनं यस्य स तथोक्तः भवान्=त्वम्, अस्माकं=आवयोः प्रियवयस्यः=सखा जातः=सम्पन्नः, सुहृदां=सखीनाम्, मित्राणाम्, अकथ्यम्=अप्रकाश्यम्, किमस्ति? न किमपीत्यर्थः। अस्मिन् केलिवने=क्रीडोद्याने वसन्तमहोत्सवाय=वसन्तोत्सवनिमित्तम्, आगतायाः=उपस्थितायाः मालवेन्द्रसुतायाः=मालवेश्वरनन्दिन्या अवन्तिसुन्दर्याः अस्य राजनन्दनाय=राजपुत्रस्य च आकस्मिकदर्शने=काकतालीवत् साक्षात्कारे अन्योन्यानुरागातिरेकः=परस्परप्रेमातिशयः, समजायत=उत्पन्नोऽभूत्, किन्तु नावलोक्यतेऽस्य कश्चनोपाय येनास्यामिलषितमूर्तिर्भवेत्। सततेति—सततं=निरन्तरम् यः सम्भोगः तस्य सिद्धेः उपायः तस्य अभावेन, असौ राजनन्दनो राजवाहनः, ईदृशीम्=एतादृशीम्, अवस्थाम्=स्थितिम् अनुभवति=प्राप्नोति।

विद्येश्वरः=ऐन्द्रजालिकः, लज्जाभिरामं—लज्जया=व्रीडया, अभिरामं=मनोरमं मञ्जुदर्शनम्, राजकुमारमुखं=राजवाहनाननम् अभिवीक्ष्य=समन्तादालोक्य, विरचितमन्दहासः—विरचितः=कृतः मन्दः=स्वल्पः, ईषद्, हासः=स्मितं येन सः तादृशः व्याजहार=उक्तवान्। देव!=स्वामिन्! भवदनुचरे=तव भृत्ये मयि=विद्येश्वरे, तिष्ठति=विद्यमाने सति, असाध्यं=दुःसाध्यम्, तव कार्यं=भवत्कर्तव्यम् किमस्ति=न किमपीत्यर्थः।

आप हम दोनों के मित्र हो गये क्योंकि आपने पहले से ही मीठी-मीठी बातें आरम्भ की हैं। अब आप हमारे मित्र हैं तो फिर आपसे गोपनीय कोई बात नहीं रहनी चाहिए। अतः कृपया आप सुनें—एक दिन इस केलिवन में मालवेश की कन्या राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी वसन्तोत्सव मनाने के निमित्त आयी हुई थी, तथा मेरे यह सखा राजवाहन भी दैवात् उसी समय इस उपवन में आ गये थे। अचानक उस राजकुमारी से इस राजकुमार का दर्शन हो जाने से दोनों में परस्पर अत्यन्त प्रेम उत्पन्न हो गया, किन्तु अब आगे कोई उपाय नहीं दीख पड़ता, जिससे ये दोनों दीर्घकालिक सुख भोग कर सकें। इसीलिए इनकी ऐसी क्षीण दशा हो रही है।

लज्जा से मनोहर राजकुमार के मुख को देखकर मन्द-मन्द मुसकुराते हुए विद्येश्वर ने कहा—देव! आपका अनुचर मैं उपस्थित हूँ, फिर आपको किस बात की चिन्ता, मुझ

किमस्ति। अहमिन्द्रजालविद्यया मालवेन्द्रं मोहयन् पौरजनसमक्षमेव तत्तनया-परिणयं रचयित्वा कन्यान्तःपुरप्रवेशं कारयिष्यामीति वृत्तान्त एष राजकन्यकायै सखीमुखेन पूर्वमेव कथयितव्यः' इति। संतुष्टमना महीपतिरनिमित्तं मित्रं प्रकटीकृतकृत्रिमक्रियापाटवं विप्रलम्भकृत्रिमप्रेमसहजसौहार्दवेदिनं तं विद्येश्वरं सबहुमानं विससर्ज।

(२४) अथ राजवाहनो विद्येश्वरस्य क्रियापाटवेन फलितमिव मनोरथं मन्यमानः पुष्पोद्भवेन सह स्वमन्दिरमुपेत्य सादरं बालचन्द्रिकामुखेन निजवल्ल-

---

अहं = विद्येश्वरः इन्द्रजालविद्यया = मायिकविद्यया, मालवेन्द्र = मालवेशं, मानसारं मोहयन् = वशमानयन्, पौरजनसमक्षमेव—पौरजनीनां = पुरवासिनां मानवानां, समक्षम् = सम्मुखे एव तत्तनयापरिणयं = तस्य मानसारस्य तनयायाः = सुतायाः, अवन्तिसुन्दर्याः विवाहं = परिणयं, रचयित्वा = कारयित्वा, कन्यान्तःपुरप्रवेशं = कन्यानिवासस्थानम्, प्रवेशं = उपस्थितिम् कारयिष्यामि = संजनिष्यामि। एषः = अयम्, वृत्तान्तः = उदन्तः, राजकन्यायै = राजकुमार्यै अवन्तिसुन्दर्यै, सखीमुखेन = सहचरीद्वारा पूर्वमेव = प्रागेव, कथयितव्यः = सूचयितव्यः सन्तुष्टमनाः—सन्तुष्टं = प्रसन्नं मन = हृदयं यस्य सः सन्तुष्टमनाः, महीपतिः = राजवाहनः अनिमित्तम् = अकारणम्, निष्कारणम् मित्रं = सुहृदम्, प्रकटीकृतेति = प्रकटीकृतं प्रकाशीकृतम् कृत्रिमक्रियायां = इन्द्रजालिकविद्यायां इन्द्रजालकर्मणि वा, पाटवं = चातुर्यम् येन स तम् तथोक्तम्, विप्रलम्भेति—विप्रलम्भ = प्रतारणम् कृत्रिमप्रेम = कपटानुरागः सहजसौहार्द = निष्कपटमित्रता, तानि वेत्तीति स तं—तथोक्तम् तं = विद्येश्वरं, सबहुमानं = बहुसत्कारपूर्वकम्, विससर्ज = प्रस्तोतुमनुज्ञातवान्।

(२४) अथ = अनन्तरम्, राजवाहनः = पुष्पोद्भवसखा विद्येश्वरस्य = ऐन्द्रजालिकस्य क्रियापाटवेन = कार्यकौशलेन मनोरथम् = अभिलाषम्, फलितं

सेवक के रहते आपका कौन सा ऐसा कार्य है, जो असाध्य हो, कुछ भी नहीं, मैं इन्द्रजाल विद्या से मालवाधीश मानसार को मोहित कर पुरवासियों के समक्ष ही आपके साथ उसकी कन्या का विवाह रचाकर आपका कन्यान्तःपुर में प्रवेश करा दूँगा, किन्तु यह समाचार आप राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी से किसी विश्वस्त सखी के द्वारा पहले ही कहलवा दें। ऐन्द्रजालिक की बातों पर प्रसन्न होकर राजवाहन ने निष्कारण मित्र, इन्द्रजालविद्या में निपुण, विप्रलम्भ, कृत्रिम प्रेम तथा सहज सौहार्द आदि क्रियाओं को जाननेवाले उस विद्येश्वर को सम्मान के साथ विदा किया।

(२४) उसके बाद विद्येश्वर की कला-कुशलता से राजवाहन को अपनी अभिलाषा पूरी हो जायेगी, ऐसा सोचकर वह पुष्पोद्भव के साथ अपने घर लौट गया और वहाँ पर

भार्यै महीसुरक्रियमाणं संगमोपायं वेदयित्वा कौतुकाकृष्टहृदयः 'कथमिमां क्षपां क्षपयामि' इत्यतिष्ठत्। परेद्युः प्रभाते विद्येश्वरो रसभावरीतिगतिचतुरस्तादृशेन महता निजपरिजनेन सह राजभवनद्वारान्तिकमुपेत्य दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः सहसोपगम्य सप्रणामम् 'ऐन्द्रजालिकः समागतः' इति द्वास्थैर्विज्ञापितेन तद्दर्शनकुतूहलाविष्टेन समुत्सुकावरोधसहितेन मालवेन्द्रेण समाहूयमानो विद्येश्वरः

सिद्धप्रायम्. मन्यमानः = जानन्, पुष्पोद्भवेन सह = साकम्, स्वमन्दिरं = निजं गेहम्, उपेत्य = आगत्य, सादरं यथा स्यात्तथा बालचन्द्रिकाद्वारेन = पुष्पोद्भव-पत्नीद्वारा निजवल्लभमार्ग-स्वप्रियायै अवन्तिसुन्दर्यै, महीसुरक्रियमाण—महीसुरेण= ब्राह्मणेन क्रियमाणं = विधीयमानम्, अनुष्ठीयमानं वा सङ्गमोपायं=मिलनोद्योगम्, वेदयित्वा = ज्ञापयित्वा, कौतुकाकृष्टहृदयः कौतुकेन=कुतूहलेन आकृष्टं=समावर्जितं हृदयं = मनो यस्य स तथाविधः कथम् इमां = प्रस्तुताम् क्षपाम् = रात्रिम् क्षपयामि = यापयामि गमयामि इति, चिन्तयन्-भावयन्, अतिष्ठत् = स्थितवान्।

परेद्युः = परस्मिन् दिने, प्रभाते = प्रातःकाले रसभावरीतिगतिचतुरः— रसाः = शृङ्गारादयः भावाः = अभिप्रायादयः, रीतिगतयः-इन्द्रजालक्रियाः तासु चतुरः = प्रवीणः विद्येश्वरः = पूर्वोक्तः ऐन्द्रजालिकः, तादृशेन = तत्तद्गुणवता, स्वानुरूपेण, महता = दीर्घेण, निजपरिजनेन-स्ववर्गेण सह राजभवनद्वारान्तिकम्— राज्ञः = नृपस्य भवनं = गृहं तस्य द्वारं = प्रवेशस्थानम्, तदन्तिकं = तत्समीपम्, उपेत्य = प्राप्य, दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः—दौवारिकेण = प्रतिहारेण द्वारपालेन, निवेदितः=प्रापितः कथितः, निजवृत्तान्तः = स्वपरिचयो येन सः तथोक्तः, सहसा = झटिति, उपगम्य = उपस्थाय, सप्रणामं = सनमस्कारम्, यथास्यात्तथा ऐन्द्रजालिकः—इन्द्रजालेन दीव्यतीति ऐन्द्रजालिकः = मायिकः, समागतः = प्राप्तः इति द्वास्थैः = द्वारपालैः, विज्ञापितेन = निवेदितेन, तद्दर्शनकुतूहलाविष्टेन—तस्य—

अपनी भार्या प्रिया बालचन्द्रिका को बुलवाया तथा उस विद्येश्वर द्वारा बतायी गयी युक्तियों को कह सुनाया। पुनः उत्कण्ठापूर्वक विचार करते हुए उन दोनों ने वह रात बितायी। दूसरे दिन प्रातःकाल ही रस भाव और इन्द्रजालि क्रिया में कुशल वह विद्येश्वर अपने अनेक परिजनों के साथ राजद्वार पर आ पहुँचा और उसने द्वारपाल के द्वारा अपने आगमन की सूचना महाराज मानसार के पास भेज दी। द्वारपाल ने मानसार के समीप जाकर प्रणामपूर्वक निवेदन किया कि अपने साथियों के साथ द्वारपर एक जादूगर आया है और वह अपना खेल दिखाना चाहता है। इस प्रकार द्वारपाल के निवेदन से जादूगर के उस खेल को देखने की उत्सुकता से प्रेरित होकर राजा और रानियों ने उसे बुलाया।

कक्षान्तरं प्रविश्य सविनयमाशिषं दत्वा तदनुज्ञातः परिजनताड्यमानेषु वाद्येषु नदत्सु, गायकीषु मदनकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु, समधिकरागरञ्जितसामाजिकमनोवृत्तिषु पिच्छिकाभ्रमणेषु, सपरिवारं परिवृत्तं भ्रामयन्मुकुलितनयनः क्षणमतिष्ठत्। तदनु विषमं विषमुल्वणं वमन्तः फणालङ्करणा रत्नराजिनीराजितराज-

मायिकस्य दर्शने = अवलोकने यत् कुतूहलं = कौतुकं तेन आविष्टः = व्याप्तः तेन तथोक्तेन समुत्सुकावरोधसहितेन = समुत्सुकः = ह्रष्टमुत्कण्ठितः, अवरोधः = अन्तःपुरिकावर्गः तेन सहितः = युक्तः तेन तादृशेन मालवेन्द्रेण = मालवाधीशेन, मानसारेण, समाहूयमानः = आकार्यमाणः, विश्वेश्वरः = ऐन्द्रजालिकः, कक्षान्तरं प्रविश्य सविनयं यथास्यात्तथा, आशीर्वादं दत्त्वा तदनुज्ञातेन—राज्ञा मानसारेण अनुज्ञातः = आदिष्टः, परिजनताड्यमानेषु—परिजनैः = स्वजनैः ताड्यमानेषु = वाद्यमानेषु वाद्येषु = वीणादिषु, नदत्सु = ध्वनत्सु, मदकलेति—मदकलानां = मदमत्तानाम् कोकिलानां = पिकानामिव मञ्जुलः = मनोहरः ध्वनिः = शब्दः यासां ताः तासु तथाविधासु, गायकीषु = गायनकर्त्रीषु समधिकेति—समधिकेन = सातिशयेन, रागेण = अनुरागेण, रञ्जिता = स्वाभिमुखम् आकृष्टा सामाजिकानां = सभ्यानां मनोवृत्तिः = मानसिकव्यापारः यैः तेषु पिच्छिकाभ्रमणेषु—पिच्छिकाः ऐन्द्रजालिकानामुपकरणभूता मयूरादिपुच्छगुच्छाः तेषां भ्रमणेषु = विघूर्णितेषु, 'ऐन्द्रजालिकाः पिच्छिकां भ्रामयित्वा जनान् मोहयन्तीति प्रसिद्धम्, सपरिवारं = सपरिकरम् परिवृत्तं = राजानम् परिवृत्तमिति पाठे मण्डलाकारम्, भ्रामयन् = भ्रान्तं कुर्वन् मुकुलितनयनः = मुद्रितलोचनः क्षणं = मुहूर्तम्, अतिष्ठत् = तस्थौ।

तदनु = तत्पश्चात्, विषमं = भयङ्करम्, उल्वणम् = तीव्रम्, विषम् = गरलम् वमन्तः = उद्गिरन्तः फणालङ्करणाः—फणाः = फटाः अलंकरणं = भूषणं येषां ते फणालङ्करणाः, रत्नराजीति—रत्नानां = मणीनां राजिभिः स्थिरःस्थितश्रेणिभिः

विश्वेश्वर ने दूसरे कमरे के अन्दर प्रवेश कर बड़े विनीत भाव से मानसार को आशीर्वाद दिया और महाराज ने खेल दिखाने के लिए उसे आज्ञा दे दी। उसी समय विश्वेश्वर की आज्ञा से इसके परिजन कर्णमधुर के बाजे बजाने लगे और मदमत्त सुरीली कोकिल मनोहर ध्वनि जैसी ध्वनियों से नायिकाएँ गाने लगीं। दर्शकों की दृष्टि को अपनी ओर अत्यधिक अनुराग से आकृष्ट करने के लिए वह जादूगर मोर पंखों के गुच्छों को मण्डलाकार घुमाने लगा और सपरिवार राजा मानसार को भ्रम में डालकर स्वयं क्षणमात्र के लिए अपनी आँखें मूँदकर मौन हो बैठ गया। और इसके साथी उसकी परिक्रमा करने लग गये। इसके बाद भीड़ के सामने फन फैलाये हुए अनेक सर्प निकल पड़े, जो अपने मुँह से

मन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः। गृध्राश्च बहवस्तुण्डैरहिपतीनादाय दिवि समचरन्।

(२५) ततोऽग्रजन्मा नरसिंहस्य हिरण्यकशिपोर्दैत्येश्वरस्य विदारणमभिनीय महाश्चर्यान्वितं राजानमभाषत—'राजन्, अवसानसमये भवता शुभसूचकं द्रष्टुमुचितम्। ततः कल्याणपरम्परावाप्तये भवदात्मजाकारायास्तरुण्या निखिललक्षणोपेतस्य राजनन्दनस्य विवाहः कार्यः' इति। तदवलोकनकुतूहलेन महीपालेनानुज्ञातः

भीराजितः=प्रकाशितः उज्ज्वलीकृतः राजमन्दिरस्य=राजभवनस्य आभोगः=सम्पूर्णः प्रदेशो यैस्ते तथोक्ताः भोगिनः=सर्पाः, भयं=साध्वसम् जनयन्तः, निश्चेरुः=निर्गत्य भ्रमन्तिस्म। बहवः=अनेके गृध्रपक्षिविशेषाश्च तुण्डैः=मुखैः, अहिपतीन्=सर्पान् आदाय=गृहीत्वा दिवि=आकाशे, समचरन्=अभ्रमन्।

(२५) ततः=तदनन्तरम् अग्रजन्मा=ब्राह्मणो विद्येश्वरः नरसिंहस्य=नरसिंहावतारस्य भगवतो विष्णोः, दैत्येश्वरस्य=दैत्यराजस्य, हिरण्यकशिपोः=प्रह्लादपितुः, विदारणं=नखैश्छेदनम्, अभिनीय=दर्शयित्वा महाश्चर्यान्वितं=अत्याश्चर्येण युक्तं यथास्यात्तथा, राजानं=मालवेन्द्रम्, अभाषत=उक्तवान्, राजन्! अवसानसमये=क्रीडासमाप्तौ, अन्ते, भवता=श्रीमता शुभसूचकं=मङ्गलजनकम् द्रष्टुम्=अवलोकितुम्, उचितं=योग्यम्। ततः=तस्मात्, कल्याणपरम्परावाप्तये—कल्याणानां=मङ्गलानाम् परम्परा=श्रेणिः तस्या अवाप्तये=प्राप्तये भवदात्मजाकाराः—भवतः=तव आत्मजायाः कन्यायाः आकार इवाकारो यस्याः सा तस्याः तथोक्ताया=स्वत्कन्यासादृश्याः तरुण्याः=युवत्याः निखिललक्षणोपेतस्य=निखिलैः—अखिलैः लक्षणैः=शुभचिह्नैः उपेतस्य=युक्तस्य सर्वशुभलक्षणसहितस्य राजनन्दनस्य=राजपुत्रस्य, विवाहः=परिणयः, कार्यः=करणीयः, अस्माभिः। तदवलोकनकुतूहलेन—तस्य अवलोकनं=दर्शनं तेन यत् कुतूहलं=कौतुकं यस्य स तेन तादृशेन महीपालेन=पृथ्वीपालेन राज्ञा मानसारेण अनुज्ञातः=आदिष्टः

विष उगल रहे थे और अपने शिर के मणियों से राजमन्दिर के प्राङ्गण को देदीप्यमान कर रहे थे। उन्हें देखकर दर्शकगण भयभीत हो उठे, दर्शकों को भयभीत देखकर विद्येश्वर ने पुनः बड़े-बड़े गीधों को उत्पन्न किया जो अपने मुखों से उन बड़े-बड़े विषधर साँपों को पकड़कर आकाशमण्डल में उड़ने लगे।

(२५) तब उस ब्राह्मण ने भगवान् नरसिंह के द्वारा दैत्यराज हिरण्यकशिपु के वक्षःस्थल को नखों से फाड़े जाने का अभिनय दिखाकर मुग्ध करके राजा से कहा—राजन्! इन्द्रजाल के खेलों के दिखाने के पश्चात् एक शुभसूचक माङ्गलिक रूपक दिखाना सर्वथा उचित है अतः कल्याणपरम्परा की प्राप्ति के निमित्त श्रीमान् की कन्या के समान स्वरूपवाली एक युवती का विवाह सभी तरह के राजलक्षणों से सम्पन्न राजकुमार के साथ कराना चाहता

सः संकल्पितार्थसिद्धिसंभावनसम्फुल्लवदनः सकलमोहजनकमञ्जनं लोचनयोर्निक्षिप्य परितो व्यलोकयत्। सर्वेषु 'तदैन्द्रजालिकमेव कर्म' इति साद्भुतं पश्यत्सु रागपल्लवितहृदयेन राजवाहनेन पूर्वसङ्केतसमागतामनेकभूषणभूषिताङ्गीमवन्तिसुन्दरीं वैवाहिकमन्त्रतन्त्रनैपुण्येनाग्निं साक्षीकृत्य संयोजयामास। क्रियावसाने सति 'इन्द्रजालपुरुषाः, सर्वे गच्छन्तु भवन्तः' इति द्विजन्मनोच्चैरुच्यमाने सर्व

सः=ऐन्द्रजालिकः, सङ्कल्पितार्थस्य=अभीप्सितार्थस्य अभीष्टप्रयोजनस्य अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोर्विवाहरूपस्य सिद्धेः=फलोदयस्य सम्भावनेन=सम्भावनया, संफुल्लं=हर्षविकसितं, वदनम्=आननं यस्य सः विद्येश्वरः सकलमोहजनकं—सकलानां=समस्तानां प्रेक्षकाणाम् मोहजनकं, भ्रमोत्पादकम् अञ्जनं=कज्जलं लोचनयोः=स्वनेत्रयोः निक्षिप्य=संयोज्य, परितः=समन्तात्, चतुर्दिक्षु व्यलोकयत्=अपश्यत्, तदैन्द्रजालिक—तत् कर्म ऐन्द्रजालिकं=मायिकमेव इति सर्वेषु प्रेक्षकेषु साद्भुतं—अद्भुतेन=आश्चर्येण सहितं यथा स्यात्तथा पश्यत्सु=विलोकयत्सु, रागपल्लवितहृदयेन—रागेण=अनुरागेण पल्लवित=विकसितं हृदयं मनो यस्य स तेन तादृशेन राजवाहनेन=राजकुमारेण, पूर्वसङ्केतसमागतेति पूर्वेण=प्राक्तनेन सङ्केतेन=सूचनानुसारेण, समागताम्=उपस्थिताम्, अनेकभूषणभूषिताङ्गीम्—अनेकैः=बहुभिः भूषणैः=अलङ्कारैः भूषितम्=शोभितं अङ्गं=अवयवं यस्याः सा तां तादृशीम्, अवन्तिसुन्दरीम्=मानसारनन्दिनीम्, वैवाहिकेति—वैवाहिकाः=विवाहसम्बन्धिनो ये मन्त्रतन्त्रादयः तेषु यन्नैपुण्यं=पाटवं तेन तथाविधेन यथाविधि, अग्निं=वह्निं, साक्षीकृत्य=असाक्षिणं साक्षिणं कृत्वा संयोजयामास=सम्यक् प्रकारेण योजयामास। क्रियावसाने=क्रियायाः विवाहादिकर्मणः समाप्तौ सति इन्द्रजालपुरुषाः=हे मायापुरुषाः मायया निर्मिताः पुरुषाः, सर्वे=सकलाः भवन्तः=यूयम्

हूं। उस रूपक को देखने के लिए राजा मानसार की प्रबल उत्कण्ठा हो उठी, राजाज्ञा प्राप्त कर अपनी पूर्वसंकल्पित अभिलाषा पूर्ण होने की सम्भावना से विद्येश्वर का चेहरा खिल उठा, उसने एक डिब्बी से सबको मोहित करनेवाला एक अञ्जन निकालकर अपने दोनों आँखों में लगा लिया तथा चारों ओर देखने लगा। सबों ने समझा कि यह भी इन्द्रजाल का ही एक अंग है। अतः आश्चर्यचकित हो उस खेल को सब देखने लगे। विद्येश्वर ने विवाह सम्बन्धी मन्त्रों को कुशलतापूर्वक उच्चारण करके अग्नि को साक्षी बना पूर्व सूचनानुसार सुसज्जित वस्त्रालंकारों को पहनकर वहां आयी हुई उस राजकुमारी अवन्तिसुन्दरी का विवाह संस्कार प्रसन्नता से विकसित हृदयवाले राजवाहन के साथ करा दिया। इन्द्रजाल के इस विवाहरूपी प्रहसन की समाप्ति पर विद्येश्वर ने जोर से कहा—हे ऐन्द्रजालिक पात्रों! अब आप लोग

मायामानवा 'यथायथमन्तर्भावं गताः। राजवाहनोऽपि पूर्वकल्पितेन गूढोपाय-चातुर्येणन्द्रजालिकपुरुषवत्कन्यान्तःपुरं विवेश। मालवेन्द्रोऽपि तदद्भुतं मन्यमानस्तस्मै चाडवाय प्रचुरतरं धनं दत्त्वा विद्येश्वरम् 'इदानीं साधय' इति विसृज्य स्वयमन्तर्मन्दिरं जगाम। ततोऽवन्तिसुन्दरी प्रियसहचरीवरपरिवारा वल्लभोपेता सुन्दरं मन्दिरं ययौ। एवं दैवमानुषबलेन मनोरथसाफल्यमुपेतो राजवाहनः सरस-

---

गच्छन्तु = स्वस्वस्थानेषु व्रजन्तु इति द्विजन्मना मायिकेन विप्रेण उच्चैः = तारस्वरेण उच्यमाने = कथ्यमाने, सर्वे – निखिलाः मायामानवाः = मायया निर्मिताः पुरुषाः, यथायथं = यथाक्रमं अन्तर्भावं = तिरोभावम्, अदृश्यताम् गताः = प्राप्ताः। राजवाहनोऽपि = राजकुमारोऽपि पूर्वसंकल्पितेन = प्राङ्निश्चितेन गूढोपायचातुर्येण = प्रच्छन्नसाधनकौशलेन, ऐन्द्रजालिकपुरुषवत् = ऐन्द्रजालिकमानववत्, मायिकमनुष्यवत्, कन्यान्तःपुरम्—कन्याया अन्तपुरम् = अवरोधम् विवेश = प्रविवेश। मालवेन्द्रोऽपि = मालवेशो राजामानसारोऽपि तत् = मायिकप्रदर्शितं कार्यम् अद्भुतम् = अत्याश्चर्यकरं मन्यमानः = जानन् तस्मै = मायिकाय, ऐन्द्रजालिकाय, चाडवाय = ब्राह्मणाय विद्येश्वराय, प्रचुरतरं = प्रभूतं, धनं = वित्तम्, दत्त्वा = प्रदाय, विद्येश्वरं = ऐन्द्रजालिकम् ब्राह्मणं, इदानीम् = अधुना साधय = गच्छ इति विसृज्य = त्यक्त्वा, स्वयम्, अन्तर्मन्दिरम् = स्वभवनाभ्यन्तरम् जगाम = अगच्छत्। ततः = तदनन्तरम्, अवन्तिसुन्दरी = मालवेन्द्रपुत्री प्रियसहचरी समेता = प्रियसखीयुक्ता वल्लभोपेता = पतिसनाथा सती सुन्दरं = मनोहरम्, मन्दिरम् = आगारम् ययौ = अगच्छत्।

एवम् = अनेन प्रकारेण, दैवमानुषबलेन, दैवं = अदृष्टजनितम्, मानुषम्, मानुषं = ऐन्द्रजालकविहितं मायिकं कर्म तयोः यद् बलं तेन दैवमानुषबलेन, मनोरथसाफल्यं— मनोरथस्य = अभिलाषस्य साफल्यं = सफलाभिलापम्, उपेतः प्राप्तः, राजवाहनः = राजकुमारः, सरसमधुरचेष्टानिः—सरसाः = रसेन सहिताः रसान्विता

जायँ। यह सुनकर वे सभी मायावी मानव धीरे-धीरे अदृश्य हो गये। पूर्वनिश्चित गुप्त वेशधारी एवं छिपने की कला में प्रवीण राजवाहन भी मायामानव के समान कन्यान्तःपुर में चला गया। मालवेन्द्र मानसार ने उस ऐन्द्रजालिक ब्राह्मण की अद्भुत कला की प्रशंसा की तथा उसे प्रचुर धन देकर कहा—विद्येश्वर! अब आप जायँ। इस प्रकार विद्येश्वर को विदा कर मानसार भी अपने राजमहल में चला गया। अनन्तर अवन्तिसुन्दरी भी अपनी प्रियसखियों से युक्त अपने प्राणेश्वर को साथ लिये अपने अन्तःपुर में आ गयीं।

इस प्रकार दैवी और मानुषी बल से राजवाहन ने अपना मनोरथ सीधकर सरस

मधुरचेष्टाभिः शनैःशनैर्हरिणलोचनाया लज्जामपनयन् सुरतरागमुपनयन् रहो विश्रम्भमुपजनयन् संलापे तदनुलापपीयूषपानलोलश्चित्रं चित्तहारिणं चतुर्दश-भुवनवृत्तान्तं श्रावयामास ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरितेऽवन्तिसुन्दरीपरिणयो नाम पञ्चम उच्छ्वासः ।

इति पूर्वपीठिका

मधुराः याः चेष्टाः = विविधाः भङ्ग्यः ताभिः शनैः-शनैः = मन्दं मन्दम्, हरिण-लोचनायाः—हरिणस्य = मृगस्य लोचने नयने इव लोचने यस्याः सा तस्याः हरिण-लोचनाया मृगनयन्याः, लज्जां = व्रीडाम्, अपनयन् = दूरीकुर्वन्, सुरतरागम् — सुरते = मैथुने रागम् = अनुरागम्, उपनयन् = प्रापयन्, मैथुनरागं जनयन्, रहः= एकान्ते, विश्रम्भ = विश्वासम् उपजनयन्, संलापे = मिथःभाषणे, परस्परालापे, तदनुलापपीयूषपानलोलः—तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः अनुलापे = मुहुर्भाषायां यत् पीयूषं = अमृतम्, तस्य पाने = कर्णेन्द्रियरसास्वादने लोलः = चञ्चलो राजवाहनः, चित्रश्चित्रं=अत्याश्चर्यकरम् चित्तहारिणम्=हृदयग्राहिणम्, चतुर्दशभुवनवृत्तान्तम्— चतुर्दशानां = चतुर्दशसंख्याकानां भुवनानां = ऊर्ध्वाधोलोकानाम् वृत्तान्तम् = वार्ता, कथाम् = आख्यायिकाम् अवन्तिसुन्दरीं श्रावयामास = अश्रावयत यतो हि आख्यायिकाश्रवणे विलासवतीनां नायिकानां भवति स्वाभाविकी प्रवृत्तिः ।

इत्याचार्यदण्डिकृतस्य दशकुमारचरितस्य पूर्वपीठिकायां पं० श्रीकृष्णमणित्रिपाठिना विरचितायां व्याख्यायां विमलाख्यायां पञ्चम उच्छ्वासः समाप्तः ।

एवं ललित हावभावों से धीरे-धीरे उस मृगनयनी अवन्तिसुन्दरी की लज्जा को दूर कर दिया और एकान्त में रतिसुख का अनुराग बढ़ाते हुए मधुर वार्तालाप के द्वारा उसके चित्त में अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करा दिया। तदनन्तर उसने परस्परालाप के प्रसंग में उस राजपुत्री की सुधामयी मधुर वचनवाणी में अपने को तल्लीनता दिखाकर चौदहों भुवनों की आश्चर्यजनक चित्र विचित्र मनोहर आख्यायिकाएँ उसे सुनाया, क्योंकि आख्यायिकाओं के श्रवण करने में विलासवती नायिकाओं को अधिक आनन्द आता है।

इस प्रकार पं० श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी द्वारा राष्ट्रभाषा में की गयी दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका का पञ्चम उच्छ्वास समाप्त हुआ।

—:o:—

